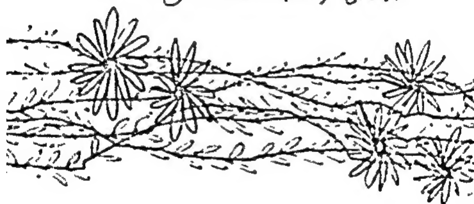
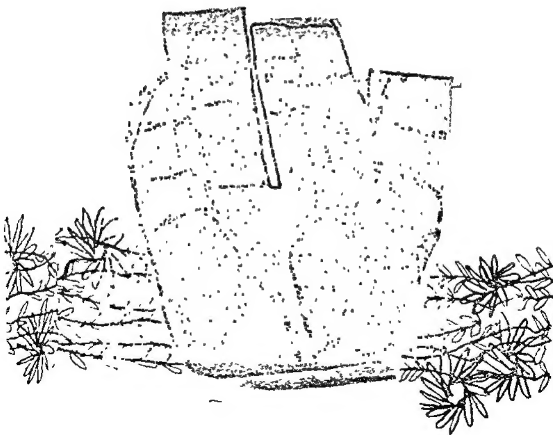
सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली



बालबंडारा

गोविन्दबल्लभ पंत



प्रस्तावना

तीस वर्ष से अधिक समय बीत गया। नैनीताल से हल्द्वानी उसी शॉर्टकट से जा रहा था, जो वटिया पेड़-पौधे, झाड़-झंखाड़, नदी-नालों से होती हुई इस उपन्यास के छोटे-से गांव से गुजर रही है।

वहां अचानक एक वृद्धा, एक सादी कुरती और अरेब पाजामा पहने, हाथ से सिर पर की चादर का टुकड़ा संभाले, दूसरे हाथ की लाठी से अपने मार्ग को टटोलती दिखाई दी। अस्सी के लगभग उसकी उम्र होगी। कांस की तरह फूली केशराशि कंधों पर छितराई हुई, धनुष की भांति उसकी बंकिम देह, अचानक पुकार उठी—

"अल्लादिया !
ओ अल्लादिया !"

वह आंखों से कम देखती होगी। अल्लादिया से कोई उत्तर नहीं मिला। पास ही खेलते हुए एक बालक ने अपनी कल्पना तोड़कर उसका हाथ पकड़ लिया—"क्या है मां ?"

"कौन, भगवानदीन ?"

"हां, कहां जाना है ?"

वृद्धा का उत्तर सुनने से पहले ही मैं दूसरे घर की ओट में बढ़ गया था। पर वह श्वेत-धवल, जरा-जड़ित महिला—अपने वेश और पुकार में—मेरे अतिमानस में गहरी गड़ गई। यह घटना, छिपे-छिपे कुछ समय बाद अंकुरित होकर एक छोटी कहानी में बाहर आ गई। और फिर मैंने उसे इस लघु उपन्यास में फैला दिया।

इसमें अनेक देखे-सुने चरित्र घुल पड़े हैं, उनके लिए साभार विनत हूं !

—लेखक

दादा ने कहा—"मजहब हमारे घर-भीतर की चीज है। गांव के रिश्ते में तू मेरा भाई है। अगर हम दोनों के मन पाक और साफ है तो हम एक ही पाकिस्तान के बाशिंदे है।"

× × × ×

"प्रधानजी, मैं तो आपको खुले दिल का आदमी मानता हूं। आप इस बात को खूब समझते है कि दाढ़ी-चोटी, माला-तसवीर, पूरब-पश्चिम, रोली-चंदन, शख-घंट सब दिखावे हैं। असली धरम सच्चाई है।

नैनीताल से नीचे ज्योतीकोट के निकट की वह भूमि, आरंभ में किसी अंगरेज ने गाववालों से चाय की खेती के लिए खरीदी थी। योजना सफल नहीं हुई।

फिर वह भूमि टुकड़ों में बंटकर बिक गई। डगलस डेल उसका नाम था, गांजा भी। एक भाग में फिर एक साहब ने गोरे यात्रियों के लिए होटल खोला पर उसके बाद उसकी मेम उसे नहीं चला सकी। फिर वह उस जमीन को अपने नौकर-चाकरों आदि को सस्ते दामों में बेच-बांट चली गई।

उसका खानसामा, जिसने एक भाग पाया था, बाद में नैनीताल बोट-हाउस क्लब में नियुक्त हो गया। अब्दुल्ला उसका नाम था। वह दिन-भर वहां काम कर रात को अपने गांव पहुंच जाता था। उसकी घरवाली हमीदा खेती-पाती सभालती; गाय-बकरी, मुर्गियों की देख-रेख करती। उन्हींके लड़के का नाम था अल्लादिया।

सब बड़े-बड़े ऑफीसर अब्दुल्ला की वाक्-चातुरी, व्यवहार और कार्य-प्रणाली से बहुत प्रसन्न थे। जितना उसे वहां वेतन मिलता था, उससे कहीं अधिक वह क्लब के मेम्बरों और उनके अतिथियों से इनाम-इकराम में पा लेता था। होटल में अच्छे से अच्छा पेट-भर भोजन उसे मिल जाता था। इतना ही क्यों? अब्दुल्ला का बेटा अल्लादिया वहां आता ही रहता, पिता का हाथ बंटाता; मसजिद में नाममात्र को अलिफ-बे की तख्ती भी लिखता, स्वयं भी वहां भोजन करता और बचा-खुचा अम्मा के लिए बांध ले जाता।

होटल में अल्लादिया के बाप की ड्यूटी आठ बजे सुबह से रात के बारह बजे तक थी। कभी विशेष प्रोग्राम हो जाने पर और भी देर तक। आधी

रात में वह एक लालटेन के उजाले में और लाठी के सहारे पांच मील नीचे, उतार ही उतार अपने गाव को चला जाता। नाच-रंग का स्वागत-समारोह जम जाने पर उसकी रात वही खुली रह जाती।

ऐसी ही वह एक उत्सव की उल्लास-भरी रात—कौन जानता था, वह हमीदा के लिए इतनी भयानक हो जाएगी! तब नृत्य और गीतों में युक्त प्रांत के गवर्नर का जन्म-दिन मनाया गया था। क्यों उसे एक गरीब की मृत्यु की रात हो जाना था?

नाचते-गाते रात के दो बज गए होंगे। अब्दुल्ला ने लालटेन जलाई और लाठी उठा, गाव जाने को तैयार हो गया। उसे दवा ले जानी थी। फिर किसीने उसे टोका, वह बोला—"बिलकुल उतार ही उतार है। लालटेन मेरे साथ है, पौन घटे मे अपने घर पहुच जाऊगा।"

फिर उसने उसे सचेत किया—"सूना जगल का रास्ता है। दो घंटे की छुट्टी लेकर दिन खुलते ही सुबह चले जाना या दवा किसी के हाथ भेज देना।" अब्दुल्ला नही माना, बोला—"भाई, मेरी घरवाली बीमार है। उसे रात में मेरे देर से लौटने की कोई खबर ही नहीं दी गई है। वह फिकर में पड़ी-पड़ी अपनी बीमारी बढा लेगी। रास्ता रोज का मेरा जाना-पहचाना है, कोई डर नही!"

फिर वह था तो छोकरा ही। होटल में सब्जी छीलना, मसाले पीसना और बर्तन मलना था। उसने अब्दुल्ला की लाठी पकड़ ली—"नही चाचा, आज रात में न जाओ। मेरे मन में बड़ा खटका जाग पड़ा।"

"जा-जा रे बच्चे, तू इस ममता की आग को क्या जाने!"

"चाचाजी, मैंने सुना है, दो साहब बातें कर रहे थे। एक तो वही कार्बेट साहब, आप तो जानते ही है उन्हे! अगरेजी मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूं। सिर्फ उनकी आवाज और हाथों के चढाव-उतार से मेरा दिल खौफ से भर गया।"

"बेटे, यह खौफ भी एक छूतवाली बीमारी की तरह है। और ज्यादा अब उसे न फैला! हर चीज एक नक्शे पर खिची हुई है। अगर मेरी मौत का लेख है, तो कोई उसे मिटा नही सकता।" अब्दुल्ला की लालटेन धुआं देने लगी थी, उसने उसकी बत्ती कुछ नीचे को सरका दी।

लड़का फिर बोला—"ईस्टर्न कमाड के उस साहब ने टैगर कहा और

रैफल कहा, इतना ही मैं समझ सका। फिर उसने घबराकर एक हाथ से अपनी दोनों आखें बंद कर लीं। इस पर कार्वेट साहब ने उसकी पीठ थपथपाकर जो कहा, इसके माने मैंने यही लगाए कि कोई बात नहीं, मैं देख लूगा। अब चाचा, तुम मुझसे ज्यादा समझदार हो, इसलिए इस अंधेरी रात मे न जाओ, अल्लादिया तो है ही वहा, मा की देख-रेख मे !"

"अरे, अगर वही सही होता तो मुझे क्या फिकर थी ?" अब्दुल्ला ने उस लडके से अपना हाथ छुडा लिया—"खुदा हाफिज ! मारनेवाला कोई नीचे है, तो क्या बचानेवाला ऊपर नही !" वह चल ही दिया।

लडका आसमान की तरफ हाथ जोडकर खुदा की याद मे सोचने लगा —"ईस्टर्न कमांड का वह कप्तान और कार्बेट साहब की अगरेजी बोली न समझकर भी मेरे मन मे बडी गलत तसवीर खिंच गई है। कार्बेट साहब अपने निशाने में अचूक है, इसमें क्या शक है; पर वे उसे मारने को न जाने कब जाए ! मुझे यह रात बडी डरावनी जान पडती है। क्यों आज की ही रात गवर्नर साहब की सालगिरह थी और इसी अधेरे को चीरकर चाचा को घर जाना था ?"

अब्दुल्ला उस सांय-साय पुकारती अंधियारी में अपने घर को दौड गया। ग्रांड होटल के पास आकर समय का अनुमान लगाया। मन ही मन समझ लिया उसने, रात के दो बजे होंगे ! माल रोड मे क्या भय था उसे? फटाफट अपनी लाठी खटकाता हुआ बढ चला वह।

तल्लीताल डाट पर आते हुए उसे क्या देर लगती ! डाकखाने के अधकार मे उसके सिगरेट की चिनगारी चमक उठी और सिपाही चिल्लाया— "कौन है, किडर जाटा है ?"

"क्या तुम अब्दुल्ला को नही जानते, जो सालगिरह की केक बनाने मे सारे पहाड में मशहूर है। जिनके ऊपर वह चीनी के रंगीन घोल से ऐसे बेल-बूटे बनाता है कि लोगों को सच्चाई का वहम पड जाता है। और जो अदरक का मुरब्बा बनाने में भी अपना सानी नहीं रखता, रसगुल्ले से भी नरम ! मेरे होटल मे आना, चखा दूगा तुम्हें। शलजम को भी ऐसी आच मे पकाता हूं कि ऊपर से तावे का पैसा गिराओ, तो सारे का सारा उसके पेट मे गायब ! मुझे रोको मत !"

"हा-हा जरूर तुझे रोकूगा ! अपनी इतनी तारीफ करने से झलकता है, तेरा नशा अभी उतरा ही नही। और मैं नही चाहता कि ऐसे कारीगर की बोटी बेवखत ढूढने से भी कही नही मिले !"

"अरे, उस छोकरे ने मुझे डराया तो मैंने उसे नानजर-बेकार समझकर माफ कर दिया। तेरी उमर कहा डूब गई ! मेरे रास्ते में रोड़ा रखकर तुझे क्या मिलेगा ? अगर मेरी औरत को कुछ हो गया तो फिर समझ ले, मेरी आधी जान चली गई ! कही डाका मारने नही—मैं जा रहा हू अपने घर, डॉगलस डेल को।"

"और तू क्यो अपनी उमर को जवानी के समुदर मे तैरता हुआ देख रहा है। मैं फिर कहता हू—लौट जा !"

"मैं बीमार की दवा लेकर जा रहा हू। वह पड़ी है बिचारी ! बकरी को जगल के लिए कौन खोले। गाय को दुहनेवाला कोई नहीं। मुर्गियो को सियार ले गया तो ?"

"बीमार कल भी दवा खाकर ठीक हो जायगा। बकरी को बरत कर लेने दे, और गाय का दूध एक दिन तो भर पेट उसके बछड़े को पी लेने दे। लेकिन तू बिना दवा पिए ही क्यो मरने जा रहा है ? अब्दुल्ला, तेरा होटल तुझे बुला रहा है। फिर नैनीताल की वह मशहूर पेस्ट्री और कौन बनावेगा ?"

"मेरी तारीफ के ऊपर जो तू मेरा मरसिया गाने लगा, इसका क्या मतलब है रे ? जरा इस डाकखाने के अधेरे से बाहर निकलकर अपना मुख तो दिखा।"

"तू नही सुन रहा है क्या ? बलिया गधेरे का पानी नीचे ही नीचे को बह रहा है। लेकिन उसकी वह दहाड़ उस गधेरे से ऊपर चढती हुई, बीच-बीच में सुनाई दे रही है।"

"तेरे कान बज रहे हैं। मैं तो अपने कानो मे बिचारी हमीदा की कराह सुन रहा हूं। बात ऐसी है, जो कुछ भी मन में बस जाए, वही सुनाई देने लगता है ! उस लड़के ने जो कुछ मुझसे कहा, मैंने उसको नादानी समझी ! तू दाना-सयाना यह क्या बक रहा है ?"

"हा, उसके भीतर माता का प्रेम उबल रहा है। वह टाग टूट जाने से क्या अपने बच्चो का पेट घास और पत्ते खिलाकर भर देगी ?"

"अरे अब्दुल्ला की मां की जगह तू यह किसका नाम ले रहा है ? तू उसकी टाग टूट गई कहता है ? तब तो मेरी चाल में और भी तेजी आनी जरूरी है। ममता का चक्कर फौलाद का है !"

"क्या मालूम, वह किसकी ममता है, तेरी या उसकी ?"

"तेरे ये लुत्फ धक्क से मेरे दिल पर टूट पड़े—'और किसकी ममता ?' अब पहचान लिया मैंने तुझे शकर, जब हम बचपन मे साथ ही दरी पर बैठकर पढ़ते थे। स्कूल से भागकर जब भालू-बंदर का तमाशा या मैच देखने चले जाते थे। तब तू कहता था, चल स्कूल को लौट चलें ! क्या मैं कभी लौटा था ? वही आदत तो अब सख्त हो गई, छूट नहीं सकती !" कहते हुए अब्दुल्ला नई बाजार की उतराई में, टूटे हुए तारे की तरह गायब हो गया।

और शंकर भी मन ही मन गुनगुनाया—"जिसका टैम हो गया, तो भला उसे रोक ही कौन सकता है ?" उसने हाथ की पी जा चुकी सिगरेट का आखिरी हिस्सा जमीन पर डाल दिया और उस पर अपना जूता घिस दिया।

अब्दुल्ला ने जो समय वहां फालतू बातों में बिता दिया था, उसे पूरा करने के लिए उसे डबल मार्च करना पड़ा। सूनी-चौड़ी मोटर की सड़क थी। चुंगी से पहले अब एक ऊबड़-खाबड़ शॉर्टकट आ गया। उसमे भी उसने डर-कर पैर नहीं छोड़े। वह रास्ता जाना-पहचाना और हाथ में लालटेन थी, कुछ दूर चलने पर फिर उसे दो फुटिया पगडंडी मिल गई। उसमें आसानी से वह चला गया। फिर कुछ दूरी तक मोटर की सड़क मिल गई, और जब उसने एक और झाड़ियों से भरा शॉर्टकट लिया तो उसके हाथ की लालटेन बुझ गई। उसने जेब से दियासलाई निकाली। लालटेन को कान के पास ले जाकर हिलाया। उसमे तेल नहीं था। रात का अंधकार आकाश के कुछ चमकीले तारों से कट रहा था, और उसके दिल में जो ममता का दिया था वह टिमटिमाने लगा।

थोड़ी ही दूर गया था कि उसे बड़ी अजीब तरह की गंध मिली। मन मे उसके डर फैलने लगा। वह किसी फैसले पर भी नहीं आ सका था कि उसके

ऊपर कोई चीज टूट पड़ी, और उसके मुख से केवल एक ही आवाज सुनाई दी—"हमीदा !"

और शायद उसी आधी रात में हमीदा ने कराहते हुए पुकारा—"अल्लादिया !"

अल्लादिया बड़ी गहरी नींद में डूबा था, पास ही के कमरे में। माता की क्षीण आवाज उसके सपने को नहीं तोड सकी। उसने फिर रोना-चिल्लाना शुरू किया—"अल्लादिया ! अल्लादिया !"

झुंझलाकर पडे ही पडे जवाब दिया उसने—"रात भर सोने ही नहीं देती ! कैसी बीमारी है तेरी यह ? क्या बढ़िया सपना देख रहा था मैं ! घोड़ा-घोड़ा ! क्या सुदर अरबी घोड़ा ! मैं अपने सिर के ऊपर एक और अल्लादिया बनकर खडा हो जाऊं, तो भी उसकी ऊचाई को नहीं छू पाता। मां, तुम्हें क्या मालूम, तुमने मेरा कैसा बढ़िया सपना कच्चे घड़े की तरह तोड़कर रख दिया ! हाय, मेरा घोड़ा, घोड़ा !"

"अरे बेटा, अपने बाप का पेशा पकड़ता तो बड़े लाट को खाना खिलाता। तुझे घोड़ों में बनजारे ही दिखाई पडे। बजरी, रेता, चूना-पत्थर ही ढोता रह जायगा जनम भर !"

"क्या कहती हो मा, घोडा—मेरा घोडा। मैं सिनेमा के सितारों को ले जा रहा था, स्नोव्यू और चीना पीक की सडक पर, तुमने मेरा सपना तोड़ दिया—आधे ही रास्ते मे। अब क्या करू ?"

"न जाने क्या बक रहा है ! मैं बुखार मे पड़ी उबल रही हू; तेरे अब्बा नही आये अभी तक, क्या बज गया ?"

"अम्मा, वे देख रहे होंगे गोरे-गोरियो के हाथ पकड-पकड़कर पैर से पैर बचाते हुए नाच ! किसको यहा तुम्हारे पास तक आने की फुरसत और याद !"

"वे आज मेरे लिए बढ़िया दवा लाने वाले थे, अंगरेजों के अस्पताल से। मेरे सारे बदन में जैसे आग लग रही है। प्यास ! प्यास !"

"अरी मा, यह भी क्या कोई चाय पीने का बखत है ? तुम भी न जाने बुखार की बेहोशी मे क्या बक रही हो ?"

"अरे चाय के लिए किसने कहा ? पानी पिला दे, पानी !"

"तुम भी अम्मा, न जाने कहां से ऐसा बुखार ले आई हो, जो रात में भी नहीं टूटता। और अब्बा भी बेफिक्री से नैनीताल ही रह गये !" अल्लादिया उसे पानी पिलाकर सो गया।

हमीदा कुछ देर बाद फिर चिल्लाई—"बेटा, कल सुबह होते ही तू नैनीताल जाकर अब्बा की खोज-खबर ले आना। मुझे अपनी दवा का लालच नहीं, उनकी फिकर से मेरा दिल धड़क रहा है।"

पर उसकी वह आवाज ऊसर में बरस गई, अल्लादिया नींद में बेसुध हो गया था।

सुबह तक अब्दुल्ला घर नहीं लौटा। पिता से अल्लादिया को उठते ही नैनीताल जाना पड़ा। वह बड़ी तेजी से नैनीताल की चढ़ाई पर चला। बीरभट्टी से ऊपर एक गधेरा पार किया, ऊपर चुंगी में कुछ लोग बैठे थे। उन्होंने बड़ी अजीब नजर से उसे देखा। उसका दिल दहल उठा। वहां सांस लेने को भी नहीं रुका, सीधा ऊपर चढ़ता गया।

जब वह मोटर रोड की चुंगी के नजदीक आया, तो सड़क पर चलते हुए कुछ लोगों की नजर में भी उसने अजीब-सी रेखायें देखीं। समतल भूमि आ जाने से, वहां उसकी चाल और भी तेज हो गई।

डांट पर आया तो वहां कुछ लोगों की भीड़ जमा थी। एक स्वयंसेवक नंगे पैर सिर पर गांधी टोपी, हाथ में तिरंगा झंडा लिए खड़ा था। वह माल रोड से मल्लीताल नारे लगाता हुआ जाने की जिद में था। पुलिस ने अपने डंडों से घेरा बनाकर सड़क पर उसकी चाल बांध रखी थी। अल्लादिया को भी वहां पर रोक दिया गया।

उसने प्रार्थना की—"मुझे नीचे की सड़क से जाने दो। मैं अपनी बीमार अम्मा के लिए दवा लेने जा रहा हूं।" वह नीचे की सड़क पर उतरने लगा।

इतने ही में एक सिपाही चिल्लाता हुआ उसकी राह रोकने चला—"अबे किधर जाता है ? ठहर जा ! तेरी जेब में सफेद टोपी हो और तिरंगा झंडा भी। आगे बढ़कर तू एक को पहन, दूसरे को हवा में फहरा, हमारी नौकरी साफ कर देगा। भाग जा, नहीं तो इस डंडे से तेरी खोपड़ी का भगा दूंगा !"

अल्लादिया ठहर गया—"मेरी तलाशी ले लो !"
सिपाही ने पूछा—"कहा जा रहा है ?"
"अपने अब्बा के पास।"
"कौन है तेरा अब्बा ? कहा काम करता है?" सिपाही ने पूछा।
"बोट हाउस मे खानसामा है।"
"ओवरकोट पहनते थे क्या ? हाथ मे लालटेन ?" इतना ही कहकर सिपाही चुप कर गया, आगे कुछ नहीं कहा।

अल्लादिया चोट खाकर बोला—"हा-हा, आगे भी तो कहो !"
"मैं क्या जानू ? थाने मे पहचान लो पहले दोनों चीजों को। फिर वही सचाई खुल जायगी।"

अल्लादिया के मन मे वह सच्चाई बिना खुले ही प्रकट हो गई। वह रोते-रोते भागा; थाने के आगे जोर-जोर से रोने लगा। पहरे के सिपाही ने बंदूक का कधा बदलते हुए पूछा—"क्यो रे, किसने मारा तुझे ?"
"मेरे अब्बा कहाँ हैं ?"
"कौन है तेरा अब्बा ?"
"बोट हाउस क्लब का हेड खानसामा।"
एक और सिपाही ने आकर धीरे-धीरे पहरेवाले सिपाही से कहा—
"अरे, यह उसी का बेटा तो नहीं है ?"
"किसका ?"
"उसीका, जिसके ओवरकोट, लालटेन और लाठी का पता वह डॉगलस डेल का दूध वाला सुबह ही सुबह दे गया था।"

अल्लादिया ने सुन लिया। वह और भी जोर से चिल्ला उठा—
"अब्बा ! अब्बा ! मेरे अब्बा !"
"हमे क्या मालूम ? हमने सिर्फ एक अदाज लगाया है ! लाट साहब से जाकर पूछ, जिन्होंने उसकी टाग में गोली तोड़कर उसकी चाल बिगाड़ दी, और वह इसान के पीछे पड़ गया।"

अल्लादिया की समझ मे कुछ नहीं आया। वह थाने के आगे जमीन पर बैठकर सिर पीट-पीटकर रोने लगा—"या खुदा, अब मैं कहा जाऊं, क्या करू ?"

पहरे वाले सिपाही ने उसे हाथ पकड़कर उठा दिया—"जा भाग यहां से, असगुन मत फैला ! क्या तेरे बाप को हमने मारा है ?"

अब जब उसने अब्बा के मर जाने की बात साफ लफ्जों मे सुन ली तो बोला—"अम्मा से जाकर क्या कहूं अब मैं ?"

सिपाही को अपने सामने की बला टालने की सूझी। वहां लोगों ने बेमतलब की भीड बढ़ानी शुरू कर दी थी। उसने कहा—"तू जाता क्यों नही, सीधा वहीं ?"

"कहा ?"

"तेरे अब्बा जहां काम करते थे।"

"बोट क्लब मे ?"

"वख्त से घर क्यों नही लौटते थे ?"

"कल रात लाट साहब की नाच-पार्टी थी।"

"तो जा, लाट साहब के सामने रो !"

अल्लादिया वहां से सीधा बोट क्लब जा पहुचा। वहां सीढ़ियों पर बैठ रोने लगा।

भीतर से एक बाबू ने निकलकर उसे डांट बताई—"अबे तो क्या तेरे बाप को हमने मारा है ?"

रोते-रोते वह बोला—"तुमने न सही, लाट [illegible] ने क्यों मारा उन्हें ? उन्होंने तो कभी तिरंगे झंडे को हाथ में लिया [illegible] ?"

"अबे, क्या बकता है तू यहां ? अभी पकड़कर जेल भिजवा दिया जायेगा।"

"लाट साहब को बुला दो; कहां हैं वे ?"

"अरे मूरख, लाट साहब को तू क्या कोई मामूली समझता है, जो तेरे पास आ जावेंगे। इनकलाब जिंदाबाद [illegible] उसी को तोड़ने के लिए वे दिमागी, [illegible] कर रहे हैं। अगर जलूस में कोई भी [illegible] डंडे खा जायेगा।"

इसी समय बोट क्लब के [illegible] "अजी बड़े बाबू, गवर्नमेंट हाउस [illegible] साहब [illegible] है।" बड़े बाबू फौरन दौड़ गए।

सेक्रेटरी फोन पर बोला—"लाट साहब को कुछ इनफारमरों ने बताया है कि रात मे अब्दुल्ला खानसामा को साहब ने मार दिया। हमारे खिलाफ जो एजीटेशन चल रहा है, उन लोगों ने यह उड़ा दी है। और कुछ लोग कहते है, बाघ की टाग गवर्नर साहब की गोली से टूट गई। वह बाघ चलने की मजबूरी से, पेट भरने के लिए आदमखोर हो गया। यह बात भी बिलकुल सही नही है। लेकिन अपढ जनता मे यह आम खबर फैल गई है कि खानसामा गवर्नर साहब के साथ शिकार मे था, और उन्हीकी गोली से उसकी मौत हो गई।"

बडे बाबू बोले—"नही साहब, हमने तो ऐसा कुछ नही सुना! उसका बेटा यहा आकर रो रहा है। उसकी कुछ मदद कर दी जाए, तो फिर यह जो अफवाह फैल गई है, वह मिट जायेगी। किसी अखबार मे उसके बेटे का बयान छपा दिया जायेगा कि लोगो मे फैल गई यह अफवाह खत्म हो जाये।"

"अच्छा, तुम फौरन ही खानसामा की विधवा को गवर्नमेंट हाउस बुलवाओ, मय उसके बच्चो के। यह बहुत जरूरी है। इस समय देश में गोरे साहबो की हवा उखड गई है—इसका ध्यान रखना होगा।"

सेक्रेटरी गोरा साहब ही था, बाबू था हिंदुस्तानी। साहब के स्वर से उसने उसकी दयनीयता पहचान ली। उसे धीरज बधाने को फौरन ही बोला—"सर, खानसामा की विधवा तो नही; उसका बेटा बिना बुलाये ही यहां आ पहुचा है। यह मौके की ही बात है। आपका हुक्म हो तो मैं उसे अभी आपके पास भेज दू। उसकी मा फिर गाव से बुला ली जाएगी।"

सेक्रेटरी बोला—"मैं अभी गवर्नर साहब से पूछकर बताता हू! फोन लिए रहो!"

कुछ देर बाद गवर्नर से परामर्श कर उसने जवाब दिया—"नही, लडके की मा का आना जरूरी है, उसे बुलवा लो फौरन!"

अल्लादिया कंपनी गार्डन की घास पर बैठा, रोते-रोते थक गया था। एक चपरासी ने क्लब के बरामदे से पुकारा—"अरे अब्दुल्ला खानसामा का बेटा कौन है, अभी दफ्तर में हाजिर हो जाए!"

यह सुनते ही अल्लादिया मानो कब्र में से उठाकर सिंहासन पर बिठा

दिया गया। बडे बाबू बोले—"जा, फौरन अपनी अम्मा को यहां बुला ला। तुम्हें लाट साहब ने याद किया है।"

अल्लादिया की समझ ही में नही आई बात—"कौन लाट साहब ? अम्मा तो बुरका पहनती हैं।"

"अरे गधे, लाट साहब भी क्या कई होते है ?"

"लेकिन मेरी अम्मा तो बुखार में पड़ी हैं।"

"जा, तब सभी तरफ से तेरे करम फूट गए ! डांडी में चढ़ाकर नही ला सकता उसे ?"

"किराये के रुपये कहा से लाऊगा ?"

"तब तेरी गाडी अटकी की अटकी ही रह गई।"

बडे बाबू की इस गाली से उसके भीतर का पहलवान जाग उठा—"अच्छा, तुम कह दो लाट साहब से ,वे शाम तक ठहर जाए। मैं ले आता हूं अपनी अम्मा को।"

"अरे लाट साहब किसी के लिए ठहर जाएं, तो वे लाट साहब किस बात के ?"

"मैने सुना, अब्बा को लाट साहब की गोली लगी। क्या उसी की माफी मागेगे वे मेरी अम्मा से ?"

"अरे मूरख, यह क्या बकता है ? तेरी जबान काट ली जायेगी, अगर तुझे फिर उन झडेवालों की बाते सुननी हैं तो वही जा, और रोते-झीकते अपनी उमर काट ले !"

"नही-नही बडे बाबू, मैं आपकी बात मानकर गया, गया, अभी गया !" और अल्लादिया सिर पर पैर रखकर भागा।

अब तो उतार ही उतार था। उसने कही कोई सांस नही ली, सीधा घर पहुंचा तो अपनी मा को चारपाई पर नही पाया। वह एकाएक घर के बाहर निकल आई थी, और मन में छा गई पति की फिकर को मिटाने के लिए खेत मे स्ट्रॉबेरी की कलियों को पुआल के ऊपर चढ़ाने लगी।

वह फिर सोचने लगी—"शाम ढल गई। नैनीताल से आने-जाने का वखत तो हो भी गया। मेरे मन में इतना अंधेरा न जाने क्यों बढता जा रहा है !"

इतने ही में उसके पड़ोसी का लडका दौड़ते-दौड़ते आकर बोला—"दादी, तुम रो रही हो, और अल्लादिया सिनेमा का गीत गाता हुआ चला आ रहा है।"

उसके आते ही हमीदा ने पहला सवाल पूछा—"क्यों, कल क्यों नहीं आये वे ? और आज भी नहीं, क्या उनकी तबियत खराब है ?"

"पहले तुम यह बताओ, तुम्हारा बुखार गया या नही ? तुम नैनीताल चलने को राजी हो ?"

उतावली होकर उठ गई वह—"मैं पूछती हूं, पहले उनकी खैरियत का हाल कहो !"

"मैंने पहचान ली मां, लाठी उन्हींकी है। ओवरकोट, लालटेन भी क्या उन्ही की नही ? लेकिन···" वह हिचकिचा गया।

हमीदा घबराकर बोली—"लेकिन क्या ? तेरे इस लेकिन की गोली मेरे कलेजे के पार हो गई। खोलता क्यो नही, उस लेकिन के ढकने को !"

"ओवरकोट ! लेकिन किसी ने उसमे होली खेल दी !"

"अरे बेवकूफ, क्या यह होली का मौसम है ? फिर मुसलमान के साथ किस हिंदू ने खेली होली ?"

"अम्मा, हिंदू ने नही, एक गोरे साहब ने।"

"ऐसा वह कौन-सा गोरा साहब है ? तू उसका नाम पूछकर नही लाया ?"

"नाम पूछकर क्या करता ? वही तो तुम्हे बुला रहे है।"

"ऐसा कहते तुझे शरम नही आती ! क्यों बुला रहा है वह मुझे ?"

"जरूर कोई इनाम देने के लिए !"

"इनाम तेरे अब्बा को देना चाहिए; मुझे किस बात का ?"

"अब्बा का तो कही पता ही नहीं है !"

"क्या कहा ?" बड़ी जोर से चिल्लाई हमीदा—"फिर वह लाठी, लालटेन और ओवरकोट ?"

"वे सब जंगल में पडे मिले, थाने मे जमा है।"

"और तेरे अब्बा ?" रोते-रोते उसने पूछा।

"जगल में भी नही, और होटल से भी नदारद ! यहा को तुम्हें मालूम

ही है, इतजारी की सारी रात। कोई कहता है, उन्हें चुड़ैल उठा ले गई। और लाट साहब बहादुर की जगह बाघ का नाम लिख दिया गया।"

"फिर तूने अभी तक यह क्यों नही कहा ?"

"तुम्हें एकाएक सदमा पहुचने से क्या हार्टफेल न हो जाता।"

"फिर तू लाट साहब का नाम क्यों लेता है ?"

"यह उनके दुश्मनों ने उडा दी होगी ! साहब तो रात अपनी साल-गिरह के नाच में थे।"

हमीदा अब फूट-फूटकर रोने लगी—"हाय अल्लादिया के अब्बा, तुम ऐसे बुढापे में दगा दे गए !"

"मैं अगर यह कहूं कि तुमने ही उन्हें भेज दिया, तो क्या यह गलत बात होगी ? हरगिज नही, कभी नहीं !"

"ऐसा बकनेवाले बेटे को मैं क्यों नहीं पेट में ही हजम कर गई !"···

"मुझे गलियाने को अब तू चंगी हो गई। न तू कल बीमार पड़ती, न अब्बा आधी रात मे तेरे लिए दवा लेकर नैनीताल से आते ! चल नैनी-ताल !"

"बेटे, तूने मुझे किस वेश्या घर की समझ रखा है ? मैं चूड़िया-टूटे नंगे हाथ फैला दू, तेरे उस लाट साहब के आगे ? तूने क्या मेरे बाप को देखा है ? वह बड़े-बड़े लाटों की कलाई पकड़कर उन्हें बिलियार्ड की मेज पर गोलों की चांदमारी सिखाता था।"

"तो क्या मेरे अब्बा की इज्जत किसी पढ़े-लिखे से कम थी ! जिन जज-कलक्टर, लाट-गवर्नरों की अच्छे-अच्छे परछाईं भी नही छू सकते थे, अब्बा उनसे हाथ मिलाते और उनके कधो पर बैठी मक्खी को उड़ा देते। तभी तो अब तुम्हें लाट साहब ने पुकारा है !"

"हाय ! तूने लाट साहब का जिकर कर मुझे उनके लिए रोने भी नही दिया। अब मैं क्या करूं, कहां जाऊं ? अरे, आखिरी वखत में उन्हें देख भी न सकी !"

"इसीलिए अब चल, पाच मील की चढाई है तो क्या हुआ ? धीरे-धीरे उठते-बैठते चले चलेंगे। जाना आज ही है। अगर बात पुरानी पड़ गई, तो फिर हाथ कुछ भी नही आएगा।"

हमीदा जोर-जोर से रोने लगी। पास-पडौसी, हिंदू-मुसलमान सभी आकर उसे दिलासा देने लगे।

वह चिल्लाती रही, "अरे अल्लादिया के अब्बा, बीच मझधार में मेरी नाव डुबाकर तुम कहा चल दिए ? या अल्ला ! अब मैं क्या करूं ?"

अल्लादिया ने उन सबको सारी घटना ब्योरेवार सुना दी, तो वे अपना कर्त्तव्य पूरा कर छटने लगे। हमीदा के रुदन मे कोई विराम नही पड़ा। अल्लादिया उसे चुप नही करा सका तो नाराज होकर बोला—"तू मेरा नाम लेकर क्यो रोती है ? मेरे लिए असगुन करती है। अगर मैं भी चल बसा तो ? उन्हीका नाम लेकर रो !"

"ऐसी बदतमीजी क्यो करू ? पास-पडौस में क्या कोई भी अपने आदमी का नाम लेता है ? फिर वह जो हमेशा के लिए चल दिया, उसका नाम लेकर ? या अल्ला ! क्या वह लौट आएगा ?"

इतने ही मे यह सब सुनते हुए उसकी सबसे नजदीकी पड़ौसी बाला बनजारे की औरत किसनी हमीदा की मदद को आ पहुची— "हा मा, लोग इन बातों को अंधविश्वास कहते है। मैं तो कभी नहीं लेती उनका नाम ! मेमे लेती है, तो उनकी चोटी भी तो बिना नादर की होती है। वे लिया करें।"

"हा बेटी, क्या करू ? नसीब की फूटी हूं। आना-जाना तो दुनिया मे लगा ही हुआ है, पर उनकी कब्र के लिए कोई हड्डी तक नही मिली।"

"अब इन्हें लाट साहब ने बुलाया है, और ये जाने को तैयार ही नहीं होती। इनकी गुजर-बसर के लिए जरूर कोई इतजाम करते होगे। समझा दो न इन्हे !" अल्लादिया बोला।

"बेटी, मैं बेपरदा होकर घर मे बाहर निकली हूं क्या कभी ? जो आज उनकी कोठी में भीख मागने जाऊ ? मियां जो दो-चार खेत छोड़ गए हैं, उनमे कुछ फल-फूल, साग-भाजी उपजाकर अपना पेट पाल लूगी। यह अल्लादिया, अगर इसकी सगत ठीक होती तो मुसीबतों की क्या परवा थी ? एक नहीं, जितनी भी उनकी पलटन होती !"

"भाभीजी, मेरी संगत क्या ठीक नही ? अरे जब मेरे सिर पर मां-बाप का साया मौजूद ही था, तो मेरे खेलने-खाने के दिन और कब आते ? अब्बा

अब बिना कहे-सुने ही चल दिए, तो अब मुझे क्या कोई समझाएगा ? मैं खुद ही अपना रास्ता ढूंढ लूंगा !"

"अरे, क्या रास्ता ढूंढेगा तू ? अब तेरा बाप मर गया और तू हो गया पूरा आजाद !" रोते-रोते हमीदा बोली।

"भाभीजी, इन्हें समझाओ न। रोते-रोते अगर इनकी आखें फूट गईं तो क्या होगा ? बड़ी तकदीर से लाट साहब की कोठी देखने को मिलती है। और उन्होंने खुद इन्हें बुलाया है ! फिर क्यों ये आनाकानी कर रही है ?"

माता को राजी न कर सकने पर अल्लादिया ने फिर उसकी तरफ देखा भी नही, सीधे नैनीताल की पगडडी पकड ली। मन मे यही सोचता चला, कि कह दूगा, पुराने ढंग की औरत है। मरदों से बातें करने मे हिचकती है।

वह मोटर की सड़क पर आया था कि उसे एक सरदारजी का ट्रक जाता दिखाई दिया। उस पर उसका ध्यान खिचा ही था कि सरदारजी ने ट्रक रोककर पुकारा—"अरे ओ ! अल्लाबकस !"

अल्लादिया अपने नाम की भूल पर भी उसकी ओर बढ गया। अब्दुल्ला के बाघ द्वारा मारे जाने की खबर जगली आग की तरह चारो तरफ फैल गई थी।

सरदारजी बोले—"भगवान् के इसाफ को क्या कहा जाए, यही होना होगा ! तुम्हारे अब्बा मिले या नही ? उन्ही की ढूढ में जा रहे हो क्या ?"

"अब क्या उनकी हड्डी का कोई टुकड़ा मिलेगा ?"

"तो उसके दरवाजे पर धरना देकर बैठ जाओ !"

"हा, बुलाया तो है लाट साहब ने, पर अम्मा नही आई।"

"जरूर तुम्हे कुछ मुआवजा देंगे ! मेरी समझ मे, दो-चार सौ रुपयो के लिए हाथ न पसार देना। पैसा क्या माई-बाप है, ऐसे ही फूक दोगे तुम ! नौकरी मागना—बाप की नौकरी !"

"अजी, अब्बा की नौकरी भी कोई नौकरी हुई ? न आने का टाइम, न जाने का ! आधी-आधी रात को घर लौटना। मुझे भी क्या किसी बाघ के पेट में डेरा डालना है ?"

"अबे तो क्या लाट साहब का तिकसर बनेगा?" सरदार ने खीझकर कह दिया।

"मुझे बहुत बढ़िया गाना आता है। तुमने सुना है क्या कभी?"

"चला दे फिर, कोई टुकड़ा ही सही!"

"यह गाना सुनाने का वखत है क्या? बाप के ताजे घाव पर कैसे गाना निकलेगा? लाट साब ने बुलाया है, फौरन ही!"

"बैठ क्यों नहीं जाता, तभी तो मैंने गाड़ी रोकी!"

अल्लादिया गाड़ी में उसकी बगल में ही बैठ गया। बोला—"सरदार-जी, मैं क्या बीडी पी सकता हूं?

"नहीं, हरगिज नहीं! बाप की याद में जिस मुंह से तेरे गाना नहीं निकला, धुआं कैसे निकालेगा?"

अल्लादिया ने बीडी का बंडल फिर जेब में ही डाल लिया—"माफ कीजिए सरदारजी, भूल हो गई!"

"देख, मैं तुझे फिर खबरदार करता हूं! लाट साहब के हाथों में अपने आपको बेच न देना। तुझे अपने गाने का घमंड है? वे तेरा गाना क्या खाक समझेंगे?"

"मैं अपने बाप की कब्र के लिए उनकी हड्डियां मांगूंगा।"

"अगर उन्होंने किसी और की हड्डियां दे दीं, तो तुझसा दूसरा नालायक दुनिया में फिर कोई पैदा न होगा।"

अपमानित हो वह ट्रक से उतर गया। सीधा गवर्नमेंट हाउस पहुंचकर लाट साहब के सामने हाजिर कर दिया गया।

लाट साहब बोले—"तो हम क्या मदद करें तुम्हारी? बाप की नौकरी तुम सम्भाल सकते नहीं। पढ़े-लिखे हो नहीं कि किसी दफ्तर में रखवा देते। बोटमैन हो नहीं सकते, पानी से डरते हो! अच्छा, हम तुमको अपनी जेब से पांच सौ रुपया दे देगा। आपस में क्लब के मेम्बर भी चंदा कर उतना ही दे सकते हैं। तुम गांव में इस पूंजी से होटल खोल लो!"

"हुजूर, गांव में मेरा होटल नहीं चलेगा।"

"हम तुम्हारे लिए एक रिक्शा खरीद देगा, उसे चलाना नैनीताल में।"

इतने ही मे बाहर सड़क पर घोड़ा हिनहिना उठा। वह बोला—"हुजूर, घोड़ा ! घोड़ा !"

"नही, माल रोड मे तांगा नही चलाया जा सकता !" ए०डी०सी० ने घड़ी देखकर गवर्नर को कुछ याद दिलाया।

"नही, तांगा नही।"···

"तो क्या माल ढोनेगा ? वनजारा वनेगा ?"

"सरकार, मैं सैलानियों को घोड़े पर नैनीताल की सैर कराऊगा। तल्लीताल से मल्लीताल, ताल के चारों तरफ। स्नोव्यू, लोढियाकाटा, टिफिन टॉप, चीना पीक, लैंड्स एंड। मां खेती-पाती से खाना-खर्च निकाल लेगी, मैं नोन-तेल-कपड़ा !"

लाट साहब ने सेक्रेटरी से पूछा—"घोड़ा तैयार है ?"

"जी हां !"

और जब उसने देखा, लाट साहब घोड़े पर चढ़कर सैर को जाने लगे, तो उसका तैयार घोड़ा छिन गया। तब वह उस घोड़े के पीछे-पीछे दौड़ते हुए चिल्लाया—"हुजूर, मेरे बाप की हड्डियां ?"···

अल्लादिया उनके घोड़े की चाल को न पा सका। सेक्रेटरी ने समझा दिया—"बोट हाउस क्लब की एक ग्रुप फोटो में उनकी तसवीर है, हम उसमें से तुम्हारे बाप की तसवीर अलग छपवा लेंगे, तुम्हारा काम चल जाएगा।"

"हुजूर !"

"इस वक्त जाओ। झंडेवालों से दूर रहना, जाओ, उधर नाच घर के पास जो कारिंदा बैठा है, ज्यादा बातें उससे करो।"

कारिंदे ने फाटक पर उसे एक मूर्ति दिखाई—"यह देखो, यह हाथी के सिरवाला बुत है।"

"मुझे क्यों बुतपरस्ती सिखाते हो ? नहीं जानते, मेरा नाम अल्लादिया है !"

"जान पड़ता है तू ज्यादा पढा-लिखा नहीं है। अरे, ये अंग्रेज भी तो अपने को बुतपरस्त नही कहते, पर देख, ये दोनों दांत तो सच्चे हाथी के है। एक मन के होंगे ही !"

"इनके बीच में यह क्या कोई लाइट है ?"

"इसको गौंग कहते हैं। जब खाना तैयार हो जाता है, तो यह बजाया जाता है। तब सभी साहब लोग, जहा पर जो काम कर रहे होते हैं, वहीं पर छोड डाईनिंग हाल मे आकर जमा हो जाते हैं।"

"अगर कोई किसी के साथ हरियाली की ओट मे लाल गप्पों में डूबा हो तो ? क्या उसका खाना वही पहुचाया जाता है ?"

"हर्गिज नहीं ! खाने के रजिस्टर मे उसकी हाजिरी काट दी जाती है, और खाना हम लोग नही उडा सके तो घर को बाध ले जाते है।"

फिर वह उसे डाइनिंग रूम मे ले गया। वहा दीवार पर गवर्नरों की तस्वीरे लटक रही थी। कुछ कुर्सियो पर भी पडी थी। अल्लादिया ने उनके बारे मे पूछा—"ये अभी रुखसत नही हुए हैं क्या ?"

कारिंदा बोला—"छुट्टी तो कभी की पा गए ! दीवार पर सीलन आ गई है। तस्वीरो में दाग न पड जाए, इसलिए इन्हे नीचे उतार दिया गया है।"

फिर रेस्ट रूम देखे, उनके साथ बाथ-रूम, एक कमरा जनाना था। वहा गवर्नरो की लेडिया हिन्दुस्तानी परदेवालियो से भेंट करती थी। वहा की दीवारो पर औरतो के ही चित्र थे।

अल्लादिया जोर से चिल्लाया—"मेरी अम्मा को यही आना पड़ेगा क्या ?"

कारिंदा ने उसकी पीठ नोचकर कहा—"धीरे-धीरे बोलो !"

एक कमरे में कुछ मदिरों के वाटर-कलर चित्र थे। एक बहुत लंबा-चौडा लड़ाई के मैदान का आइल पेंट था। वह किसी विलायती कलाकार की कृति थी।

फिर उसने सेक्रेटरी, ए० डी० सी० और गवर्नर के आफिस देखे। सीढ़ियो पर दो-तीन लोहे की तोपें और बदूकें देखी। एक सुलताना डाकू की भी बनाई गई। एक बदूक की मूठ टेढी-सी थी। वह जर्मनी की थी। कर्मचारी ने उसे फिर कुछ और चीजें दिखाने को कहा, पर वह चकरा गया था। वह अपनी अम्मा से भेंट करने को उतावला हो गया। वह चल पडा।

पड़ौसी वाला बनजारे की औरत किसनी हमीदा के पास बैठी थी। एक चाय का गिलास अपने हाथ से ढके, बार-बार उसे समझा रही थी—"मां, मैं तुमसे 'रोना बंद करो' नहीं कहती। मन का दुःख तो निकाला ही जाएगा! पर चाय तो पी लो कि रोने का सहारा हो जाए!"

और उसके पास कालाढूंगी का मोतीसिंह था। किसनी का दिया हुआ चाय का गिलास लिए वह भी बैठा था। पहली घूंट सुड़ककर वह बोला—"नहीं, पिओ मां, पहले तुम पिओ! और मैं तुमसे कह तो रहा हूं। मैं अबुल्ला की एक-एक हड्डी बीनकर ले आऊंगा। चाहे जिस खोह में भी शेर ने ले जाकर खा लिया हो। मैं बड़ा पुराना शिकारी हूं—अंग्रेजों को रास्ता दिखाता था!"

हमीदा सजग हो उठ बैठी—"सचमुच मे ले आओगे?"

अल्लादिया बोला—"मां, आने वाला आता है—जाने वाला गया। खाने-पीने के सहारे से ही तो सुख-दुख काट लिया जा सकता है। ये मोतीसिंह कैसे बिना बुलाये आ पहुंचे?"

मा, बेटे के हाथ से चाय लेकर पीने लगी। अल्लादिया का कहना जारी था—"नहीं तो अब्बा की फोटो में से निकालकर उनकी मूरत बनवा ली जाएगी।"

हमीदा बोली—"यह बुतपरस्ती ले जाएगी।"

मोतीसिंह बोला—"तभी तो मैं आया हू पुराना खिलाड़ी, मैं काला-ढूंगी का मोतीसिंह! कार्बेट साहब के साथ मैंने पहाड़, भाबर और तराई के सारे जंगल छान रखे हैं। एक-एक नदी, नाला, गुफा, खोह का नक्शा मुझे मालूम है। मैं उनकी हड्डियों को ले ही आऊंगा। पर एक शर्त है, तुमको इसके बदले मुझे एक सौ रुपये नकद देने पड़ेंगे।"

हमीदा चाय की दूसरी घूंट बिना पिये गिलास जमीन पर रखती हुई बोली—"नहीं भाई, पहले ही नकार देना क्या बुरा है। मेरी गांठ में क्या कोई कौड़ी भी है, जो मैं एक सौ रुपयों का वादा कर दू?

"तो फिर कैसे काम चले?"

अल्लादिया बोला—"तुम लाओ भी तो हड्डियां! मैं लाट साहब से दिलवा दूंगा। करनी तो उन्हींकी है। न उनकी सालगिरह होती, न हमारे

अब्बा की उमर पूरी हो जाती और कहने वाले तो यह कहते है कि ये लाट साहब की गोली से ही मरे है। इसी बात को छिपा देने के लिए उनकी लाश किसी कुएं मे डाल दी गई।"

मोतीसिंह ने और एक शिगूफा छोड़ा—"हा, और एक बात! अगर किसी गुफा मे छिपा वह शेर मुझे ही खा गया, तो तुम्हें मेरे बच्चों की परवरिश का जिम्मा लेना पड़ेगा।"

यह सुनकर तो अब उन दोनों मां-बेटों के मुह पर ताला पड़ गया। किसनी चिल्ला उठी—"अरे ठाकुर, ऐसा असगुन को मुंह से निकालते हो?"

"हा, वैसे उस्तादों का कौल तो है कि जब तक शिकारी निडर रहेगा, उसकी अकल उसका साथ न छोड़ेगी। अगर डर गया तो बस गया, परघाट दोनों से! जान से हाथ धोना पड़े, और तुम कोई जवाब ही न दो! मुझे देर हो रही है, पैदल ही घर पहुंचना है।"

अल्लादिया बोला—"मैं लाट साहब से पूछकर दूगा तुम्हें जवाब!"

मोतीसिंह उठते हुए बोला—"क्या बताऊ, कार्बेट साहब बीमार होकर सामने अस्पताल मे पड़े हैं। वे इस वक्त तुम्हारी मदद कर देते। उन्हे किसी भी जानवर का डर नही, जगल की मिट्टी सूघकर बता देते है—शेर कहा पर है। तुम्हारे अब्बा का सारा ककाल ढूढकर ला देते।"

किसनी दोनों गिलास उठाकर जाने लगी।

मोतीसिंह ने पूछा—"बाला पहाड़ गए है क्या?

"हां आलू का उतार चल रहा है।"

"मोतीसिंह ने फिर हमीदा को ढाढ़स बधाते हुए कहा—"मैं भी अगले इतवार को नैनीताल जाऊगा। कार्बेट साहब से भेंट कर तुम्हारी सारी दास्तान सुनाऊगा। देखे, वे क्या राय देते है।"

वह चला गया।

हमीदा को ढाढस देकर किसनी ने कहा—"अल्लादिया, मैंने आटा गूध लिया है, अभी तेरे लिए दो रोटी सेंककर लाती हू। दो-चार निवाले अम्मा को भी खिलाने ही पड़ेंगे। कब तक नही?"

हमीदा—नही, मै कुछ भी नही खाऊँगी। जब तक उनकी हड्डिया नही

देख लेती, मैं ऐसे ही भूखी-प्यासी प्रान छोड़ दूंगी।"

"मोतीसिंह मशहूर शिकारी है। वह तुम्हें वचन दे तो गया है।"

"उसके भाड़े के एक सौ रुपये कहां से लाऊंगी?"

किसनी ने सुन तो रखा था, बुढ़िया ने एक पतीली भर चांदी के रुपये कहीं गाड़ रखे हैं, घर के भीतर ही—पर उसने इसका कोई जिक्र नहीं किया।

अल्लादिया बोला—"देना पड़ेगा, लाट साहब को देना ही पड़ेगा। नहीं तो क्या अब्बा का खून माथे पर लगा लेंगे वे?

किसनी चली गई। अल्लादिया ने माथा पीटती हुई मां का हाथ पकड़कर कहा—"घबरा नहीं अम्मा, लाट साहब ने अपनी कुरसी के पास खड़ा कर कहा, वे हमारी गुजर-बसर का पूरा इन्तजाम कर ही विलायत को जावेंगे। वे मुझे आज ही की तारीख में अब्बा की नौकरी देने को तैयार थे। मैंने ही मना कर दिया।"

"तेरी बेवकूफी का ही यह एक सबूत है।"

"ऐसा क्यों कहती हो? फिर किसी लाट की सालगिरह, और फिर मुझे रात-बिरात घर लौटना, और फिर अगर किसी बाघ ने मेरे ऊपर झपट्टा मार दिया—तो मेरी हड्डिया पाकर भी तुम क्या करोगी? हां, तुम नैनीताल रहने को राजी हो तो चलो!"

"अब मैं कहां चलूं? उमर यहीं पक गई मेरी। नदी-बावडियों का पानी पीते, गांव की इस ताजी हवा में सांस लेते हुए। अब तू कहा मुझे नल का बासी पानी पिलाने और घिचपिच मकानों की गंदी हवा में कैद करने को ले जा रहा है! मैं इसी गांव में सही हूं! इसके बाहर सभी जगह मेरा काला-पानी है। अब इस फूट चुके सिर में किस हवस की सेनी करूं?"

"लाट साहब ने मुझे पूरा भरोसा दिया है मेरी गुजर-बसर के लिए। अगर मैं जरा भी पढ़ा-लिखा होता, तो अपने दफ्तर की कुर्सी में बिठा देते। मैंने यह कुछ भी नहीं लिया। और वे मुझे एक बढ़िया अरबी घोड़ा देने को राजी हो गए।" उसने कच्ची ही उड़ा दी।

हमीदा ने फिर सिर पर हाथ मारकर कहा—"करम फूटे! अपना पेट भरना ही मुश्किल है। घोड़े-हाथी के पेट के लिए दाना-घास यहां से

जुटाऊंगी।"

"मेरी अच्छी अम्मा, ऐसा क्यों कहती हो? घोड़ा अपने लिए भी लावेगा और हमारे लिए भी। नैनीताल में जो तीन महीने की चहल-पहल होती है, उसमें हिन्दुस्तान की चारों दिशाओं से हजारों सैलानी आते हैं। वे तल्लीताल से मल्लीताल मोटर और रिक्शे में पहुंच जाएं, चीनापीक और स्नो-व्यू भी क्या?"

हमीदा चुप ही रही। उसे अच्छी तरह समझा देने को उसने रुपयों की गिनती खोली—"अगर चार चक्कर भी लगा दिए तो समझ लो, कम से कम पचास रुपये रोज की मजूरी; यानी महीने में कुल टोटल डेढ़ हजार रुपया! अरी, इतने रुपये क्या बड़े-बड़ों की बराबरी न कर देंगे? फिर घोड़ा जो कुछ खाएगा, हमारे राशन के साथ क्या अपनी पीठ पर ही लादकर न ले आएगा? घास के साथ क्या तुम अपना दिन भी न काट लोगी?"

"न जाने क्या बक रहा है तू?"

"और अगर तू नैनीताल ही चलने को राजी है, तो मैं लाट साहब से चिट्ठी लिखाकर अपने···"

हमीदा उसकी बातों में ध्यान न दे, सिर्फ रोती ही रही। अब अल्लादिया ने और दूर की हाकी—"सुना है, उस हाथी का पैर एक जहरीले सांप पर पड़ गया, जिसने मरते-मरते जहर से उस हाथी को मार डाला। मन-मन भर के पक्के उन दोनों हाथी दांतों के बीच में वह घंटा लटकता है। जब खाना तैयार हो जाता था, तो अब्बा उस घंटे पर पहले गिनती की तीन चोटें मारते थे, फिर घन-न-न-न-न इक्कीस चोटें! और लाट साहब मय अपने बीबी-बच्चों और मेहमानों के, खाने की मेज को घेरकर कुर्सियों पर बैठ जाते थे।"

फिर एकाएक उसने उस बात को वहीं छोड़ दिया; क्योंकि उसको याद आया, उसके अब्बा तो बोट-हाउस क्लब में खानसामा थे, लाट की कोठी का घंटा बजाने क्यों जाते?

हमीदा आकाश की ओर हाथ फैलाकर बोली—"या खुदा, यह क्या हो गया! इस छोकरे को कुछ भी फिकर नहीं, बाप की हड्डियां जंगल में पड़ी हैं और इसे लाट साहब की कोठी के नाच-रंग सूझते हैं।"

झट से पछताकर वह बोला—"माफ करो मां, मैं भूल गया। लालटेन कहा रखी है ? दियसलाई है मेरे पास। इससे मेरी हिम्मत बंधी रहेगी, अगर लौटने में अंधेरा भी हो गया तो।"

हमीदा ने उसकी बात काटकर रख दी—"रात में कैसे लौटकर आवेगा ? क्या तुझे भी उसी जानवर के पेट में जाना है ? या अल्ला, माफ कर मेरे गुनाह ! राह चलते-चलते एक-एक कीड़े पर से पैर बचाती हूं। पास-पड़ोसियों सभी के लिए दुआ मांगती हू।"

"डरती क्यों हो ? मैं सीधे रामजे अस्तपाल में कार्बेट साहब के पास जाता हूं। कौन है, मुझे रोकनेवाला ? वह बड़ा रहमदिल साहब है। उसके दिल में न तो अमीर-गरीब का ही फरक है, न ही गोरे-काले का ! जगल मे चप्पे-चप्पे की असलियत का उन्हें पता है। हवा को सूंघकर ही बता देते है, शेर किधर है। मचान से उतर, पैदल जमीन पर ही उन्होंने आदमखोर मार डाले है।"

हमीदा को अलग ही देखकर वह उठा। सारा घर छान डाला, पर कहीं लालटेन का पता नहीं। तब वह माता के पास आकर बोला—"तुमने भी नही बताया, लालटेन तो अब्बा ही ले गए थे, उस रात को।"

हमीदा मानो पागलपन के दौरे में आकर बोली—"ले गए थे, ले गए थे। क्या लौटाकर ला सकता है तू उसे ? घर मे न भी हो, मैं उनकी कब्र पर उसका उजाला कर दूगी। पहले कब्र तो बने।" वह झट से खड़ी हो गई।

"हां, मैं क्यों नही ला सकता ? बनेगी-बनेगी, कब्र क्यो नही बनेगी ? मैं लाऊंगा, लाऊंगा..." अल्लादिया आवेश मे आकर नैनीताल की पगडंडी पर दौड़ गया। सूर्य पश्चिम के आकाश मे भटक गए थे।

हमीदा रोना-धोना भूल, चिल्लाती हुई उसके पीछे दौड़ी—"अरे तू कहां इस गहरे वखत में पहाड़ को दौड़ गया। मेरा कहना मान, लौट आ !"

उसने सुना भी नहीं, न ही वह लौटा ही। वह पड़ोसियों के मकानों की ओट मे गायब हो गया। हमीदा अब उसके पीछे नही दौड़ सकी। थककर घर लौट आई।

फिर उसके रोने का साथ देनेवाला और कौन था ? उसकी निकटतम पड़ौसन, बाला बनजारे की बहू, सध्या के उस अमंगल को मिटाने उठी।

किसनी ने अपने घर में उजाला करने से पहले हमीदा के यहां अंधेरा हो पाया तो वह उसके यहां उजाला करने ढिबरी जलाकर ले गई।

वहां जाकर उसने देखा, रोते-रोते बुढ़िया की आंख लग गई थी। एका-एक उजाला पाकर वह अपने सपने से बाहर निकल आई। दोनों हाथ जमीन पर टेक दिए। उसके सफेद बाल पीठ पर सहरा गए। वह बोली—"ले आया तू लालटेन? शाबाश!"

"नहीं मां, मैं किसनी हूं। अल्लादिया कहां गया?"

"जहां उसके अब्बा गए!"

"शाम के वक्त ऐसा क्या तुम्हारे मुंह से निकल पड़ा?"

"क्योंकि उसने मेरा कहा नहीं माना।"

अल्लादिया बड़ी तेजी से नैनीताल की चढ़ाई पर चढ़ा जा रहा था। समय बचाने के लिए मोटर की सड़क छोड़कर उसने पगडंडी पकड़ रखी थी। वीरभट्टी के पुल के पास आकर उसे भी छोड़ दिया। अंधेरे के घेरों में ऊबड़-खाबड़ मार्ग को नापता हुआ चला नैनीताल की दिशा में।

बलिया गधेरे में मनुष्य के पदाकों से छपा हुआ कोई मार्ग नहीं था। अचानक उसकी चप्पल एक ऐसी वस्तु पर पड़ी, जिसने टूटकर उसे कांच का बोध दिया। अभी अच्छा उजाला था। भूमि पर जो उसकी दृष्टि गई, तो उस कांच की दरार में जो कागज की चेपी जुड़ी थी, वह उसी की कारी-गरी थी। अचानक उसकी याद में बिजली-सी चमक गई। उस निर्जन में वह चिल्लाया—"यह तो हमारी ही लालटेन की चिमनी है!"

इसको समर्थन देनेवाला वहां था कौन? उस धरती के आस-पास बहुत बड़े घेरे में वह घूम गया, फिर उसे कुछ नहीं दिखाई दिया। उसके मन में बढ़ी हुई आशा पर फिर घना भय छा गया, उसे कहीं भी अब्बा की हड्डियां नहीं मिलीं। अंधकार तेजी से बढ़ने लगा था।

इधर-उधर जो खाई-खंदक, झाड़ियां और गुफाएं थीं, उनके भीतर घुसकर भी उसे अंधेरे में क्या मिलना? उसने यह सब दूसरे दिन के लिए छोड़ देने का निश्चय किया, और फिर अपनी चढ़ाई में बढ़ गया।

लालटेन की चिमनी का वह टुकड़ा उसने अपनी जेब में रख लिया। उसकी चाल में अब और उत्साह भर गया। शाम होते न होते वह नैनीताल

पहुंच गया। सडकों, दूकानों और घरों के भीतर की विजली जल उठी थी।

वह रामजे अस्पताल को चढता ही गया। बीमारों से भेंट करनेवालों के लिए अब वहा के द्वार बद हो गए होंगे। फिर भी एक विश्वास के उजाले में वह वहा पहुच ही गया। चौकीदार ने उसे रोक दिया।

बडी दयनीयता से हाथ जोडता हुआ वह बोला—"भाई, मैं दूर गाव से कार्बेट साहब से मिलने आया हूं। वे अमीर-गरीब का भेद नही रखते!"

"दिन-रात का तो रखते ही है!"

"चुपो-चुपो!" एक नर्स निकट के ही कमरे से बाहर निकलकर धीरे-धीरे बोली—"वे इसी कमरे में सो रहे हैं, अभी उनकी आख लगी है। जाओ, तुम्हारा कितना ही जरूरी काम क्यो न हो, कल सुबह दिन निकलने से पहले न होगा। आठ बजे, जब वे नाश्ता कर चुके।"

पर इसकी दूसरी ही प्रतिक्रिया हो गई, अल्लादिया के मन मे। वह ढाड मारकर चिल्लाया—"मेरे अब्बा को बाघ घसीट ले गया! अब क्या करें हम? क्या उनकी कोई हड्डी भी नसीब न होगी?"

बाघ, फिर आदमखोर बाघ! दवा की बेहोशी मे भी अगर कार्बेट साहब अचेत होते, तो उसका नाम सुनकर बाहर निकल आते। कच्ची नींद तोड़कर उनका जाग उठना क्या मुश्किल था। वे उठकर बिस्तर पर बैठ गए। बरबस उनके मुह से निकल पडा—"कहा है वह आदमखोर बाघ?"

बाहर साहब के इन शब्दो को सुनकर नर्स घबराई। वह अल्लादिया का हाथ पकड़, उसे अस्पताल के बाहर करने लगी—"हटो, भागो यहा से! तुमने उनकी नींद तोड दी। अब मेरे ऊपर झाड पडेगी।"

तभी उसने भीतर से कार्बेट साहब की बजायी हुई घंटी सुनी। उसका हाथ छोड़ वह भीतर भागी।

साहब ने आधी नींद में उससे पूछा—"सिस्टर, मैं अपनी बंदूक क्यो लाता अस्पताल मे?"

नर्स मोन-विचार मे पड़ गई।

"लेकिन मैं सपने के आदमखोर को फर्जी बदूक से ही मार सकता हू।"

"आप आराम करें। डॉक्टर साहब ने कहा है, आराम भी दवा से कम

नहीं है।"

"आदमखोर ! सिस्टर, कब्र में भी क्या वह मेरी नीद न तोड़ देगा ? मैंने उसका सपना नही देखा है, उसकी आवाज सुनी है। उसे अस्पताल से भगाओ नही। अगर मिलने का वक्त बीत भी चुका है, तो इमरजेंसी के दरवाजे कब वद होते हैं ? मैं आदमखोरो को मारने ही के लिए पैदा हुआ हू। कोई बात नही। अगर मैं बीमारी को अभी इस विस्तर पर उतारकर उसे मारने नही जा सकता, तो क्यो, मैं उसका जिक्र भी न सुनू ?"

अपने निश्चय मे खड़ा अल्लादिया, उस घटी मे अपनी ही पुकार सुनता हुआ, नर्स के पीछे-पीछे चला आया था। तभी उस पर साहब की नजर खिच गई। वे बोले—"क्यो जी, कहा है वह आदमखोर ?"

"कहा बताऊ हुजूर ! आप तो अस्पताल मे पड़े-पड़े, सूघकर भी उसकी दिशा बता सकते हैं ! उसने बोट क्लब के खानसामा, मेरे अब्बा की हड्डियां भी चबा डाली।"

साहब के कानो तक यह घटना पहुंच चुकी थी। उन्होंने नर्स को संकेत दिया—"इसको स्टूल पर बिठाओ !"

नर्स आज्ञापालन करती हुई बोली—"क्या आराम छोडकर इस बात को सुवह के लिए नही टाला जा सकता ?"

"तुम्हे क्या मालूम, इस आदमखोर का पाप दूसरे के सिर पर बांध दिया गया है। यह दूसरे वखत के लिए नही टाला जा सकता। किसी बात मे मन का लग जाना ही बहुत बडा आराम है ! हां जी, सच-सच कहो, बात क्या है ?"

अल्लादिया स्टूल पर नही बैठा। खड़े ही खड़े उसने सब कुछ कह दिया।

"डाडी, बदूक और रोशनी का इतजाम कर सकते हो ?"

नर्स बोली—"यह आप क्या कहते है ?"

अल्लादिया की भी सास फूल गई—"हुजूर, बाघ नही, हमे अब्बा की हड्डिया चाहिए। मेरी अम्मा बिना उनको पाए, मुह मे एक कौर भी नही ले रही है।"

"तुम्हें लहू का निशान नही मिला, जंगल की मिट्टी, पत्थर और घास-

पत्त ? में ?"

"इतनी बारीक आंख कहां है मेरी ? मुसीबत ने ही मुझे अंधा कर दिया !" तभी उसे कुछ याद आई—"अब्बा की लालटेन का एक टुकड़ा मिला मुझे।"

"फिर मेरे पास क्यों आए ? लगड़ा बाघ उन्हें दूर नहीं ले गया होगा।"

हाथ जोडकर कांपता हुआ वह बोला—"हुजूर, मुझे डर लगता है।" वह स्टूल पर बैठ गया।

"दिन में कैसा डर ?"

"हुजूर, मैंने उसके निकट ही एक झाड़ीवाली गुफा में झांका था, तो वहां दो चमकती हुई आंखें भी देखी और घुर्र-घुर्र की आवाज भी सुनी।"

"यह तेरे मन के भीतर का डर ही तेरे आंख और कान मे घुस गया। और मैं सच कहता हूं, अगर आदमी के भीतर डर नहीं, तो रात में भी उजाला ही उजाला है। डर से ही इंसान कमजोर है। डर से ही आदमी दिन मे भी अंधा है। जहां तुम्हें चिमनी का टुकडा मिला है, उसके आसपास ही तुम्हारे बाप के कपड़े और हड्डियां भी पडी होंगी।"

"आप इस अंधेरे में मुझसे जाने को कहते है ? कल दिन मे मैं अपना सारा डर जमीन पर थूक दूंगा।"

"बिलकुल झूठी बात !" कार्बेट ने आगे बढ़कर अल्लादिया की पीठ पर हाथ रखकर कहा—"बेटे, जिस आदमी ने डर छोड़ दिया, उसे फिर दिन-रात के रगों में कोई फर्क नहीं जान पड़ता। मैं तुझसे कहता हूं, तू जितना उन हड्डियों को ढूढ़ने के लिए बेचैन है, उतनी ही वे तेरे लिए भी तड़प रही है।"

नर्स बीच ही में बाधा देकर बोली—"सर, आप अब अपनी नींद और आराम को छोड़कर यह कैसा बोल रहे हैं, झूठ के नजदीक का।"

"चुप रहो, तुम अभी स्कूल से छूटी हो !"

"सर, हमारी आपको सिर्फ दवा देने और टेंपरेचर लेने की ही ड्यूटी नहीं है। आपकी नींद और आराम का भी सुभीता देखना है।"

कार्बेट ने उसकी बातों का सिर्फ एक मुसकान से जवाब दिया और

अल्लादिया से बोले—"डरता क्यों है ? बाघ क्या कहीं अपना घर बनाकर रहता है ?"

"कल, रात खुलते ही चला जाऊंगा।"

"जाएगा सही, और मुमकिन है तुझे तेरे बाप की हड्डियां भी मिल जावेंगी, पर तेरे भीतर जो डर है, वह बना ही रहेगा। अगर तू अपनी इस जरूरत पर मेरा कहना मान लेता, तो तुझे अभी···"

अल्लादिया घबराकर बोला—"अभी जाने को कहते है क्या आप ?"

"यही समझ ले ! बाहर जो डर है, वह भीतर अपनी ही कमजोरी से बनता है। अगर तूने मेरा कहना मान लिया, तो एक नया आदमी बन जाएगा।"

कार्बेट की बातों से वह जोश मे आकर बोला—"एक लालटेन दिला दीजिए।"

"रखी है लालटेन !" नाक-भौं सिकोड नर्स बोली।

"अरे, अधेरे मे भी आखो की पुतलिया फैलकर देखने लगती है। टार्च की सेल भी खत्म हो जाती है, और लालटेन की चिमनी टूट गई तो ? और एक चीज है मेरे पास, उसे ले जा सकेगा ?"

"बदूक से अगर आपका मतलब है, तो मैं उसे चलाना ही नही जानता।"

नर्स को फिर कहना पडा—"मै पुलिस को फोन कर अभी इसे बाहर निकलवा देती हू। और डॉक्टर साहब को बुलाकर आपको सो जाने के लिए मजबूर करती हू।"

"इतनी तेजी मे क्यो आती हो ? हमे मुसीबत मे पड़े हुए की मदद करनी चाहिए।"

अल्लादिया को कुछ सहारा तो साहब ने दे ही दिया था। आगे के लिए वह डर गया कि उसका डर भगाने को वे न जाने उनकी कौन-सी नस कटवा दें। वह उठकर जाते-जाते बोला—"हुजूर, आपने मेरी बडी मदद कर दी। अब मैं आपका ज्यादा टाइम नही लूगा। आराम कीजिए। इसकी आखें मुझे सुई-सी चुभ रही हैं। सलाम !" वह तेजी से उस कमरे के बाहर हो गया।

कार्बेट कुछ गभीर हो गए—"तुम्हे क्या कहू !" उसका डर भगाने से

पहले ही, तुमने उसे यहां से भगा दिया।"

"भला-बुरा जो भी आप मुझसे कहें। मुझे खुशी है कि मैंने आपके आराम में खलल डालनेवाले को दफा कर दिया। पर एक बात तो बताइए, आप कैसे उसका डर भगा देते?"

"है मेरे पास एक दवा।"

"जो जाड़ा-बुखार की गोलियां आपको दी जा रही हैं, क्या उन्हींसे?"

"हां-हां, डर इंसान की बीमारी ही है। तन की न होकर वह मन की है।"

"क्या कोई टोटका है आपके पास इसका? क्या आप इन बातों में विश्वास रखते हैं?"

"डर मन की कमजोरी है, तो विश्वास उसकी ताकत है। भीतर के विश्वास को जगाने के लिए बाहर एक सहारा चाहिए।"

"आप मूर्तिपूजक कब से बन गए? अब मैं जीत गई। बत्ती बुझा देती हूं। आप सो जाइए।"

"तुम्हारी अभी शादी नहीं हुई है। इसीसे तुम मूर्तिपूजा के दाम नहीं जानती। खबरदार, बत्ती न बुझाना, अब मेरी नींद जाग गई। मेरे कागजों की वह फाइल मुझे दे दो। मैं उन्हें देखना चाहता हूं।"

नर्स को उन्हें फाइल देनी ही पड़ी। वह सीधी ड्यूटी रूम में चली गई। उसने डॉक्टर साहब से फोन में कार्बेट साहब की शिकायत की। उन्होंने उत्तर में कहा—"वे मन लगाकर जो कुछ भी कर रहे हैं, करने दो।"

नर्स के विजय का घमंड टूट गया।

अल्लादिया रात में अब कहां जाता? बोट हाउस के किचन में सभी उसके पहचान के थे। उन्होंने बचा-खुचा उसे खिला भी दिया और सोने का भी इंतजाम कर दिया।

कृष्ण पक्ष के चंद्रमा ने अस्त होकर उसे दिशाओं के खुल जाने का विश्वास दे दिया। लालटेन की चिमनी पाने वाली जगह, रात भर उसके सपनों में चुभती रही। दौड़ता-भागता वलिया गधेरे की उस जगह पर पहुंचा तो अभी अंधकार ही छाया था, उस झाड़ी से ढकी गुफा में। कार्बेट् साहब के व्याख्यान से वह कमर कसकर उधर बढ़ा।

वह उसीका बचा-खुचा भय था, जिसने उसे एक अजगर का रूप दे दिया। ठिठका खड़ा रह गया वह। जब उसने उसमें कोई गति नही पाई तो उसकी समझ लौट आई। वह अजगर नही, काहिया रंग का उसके अब्बा का साफा था, जिसमे रक्त के छीटे पड़े थे।

अब तो वह जितनी दूर भागा था, उतनी ही उस अजगर के निकट खिंच गया। उसके पिता के और भी कपड़े, लहू में रंगे चीथड़ों के रूप मे वहा मिले। क्या करना था उसे उनसे ! और पास ही उसके पिता का अस्थि-पजर भी उसे टुकड़ो मे मिल गया, मानो उसने सभी कुछ पा लिया।

हड्डियो के सभी टुकड़ो को उसने उसी साफे में किसी तरह बांध लिया, और अम्मा के सतोष का वह बोझ उसे फूलों-सा लगा। उसे पीठ पर लादकर वह बड़ी तेजी से घर की दिशा मे उतरता गया।

गाव में बहुत सुबह ही पहुंच गया, वह। जब शायद कोई भी नही जागा था। उसकी मा दो दु:खों मे छटपटाती हुई कैसे सोई रहती? बेटे को पति की हड्डियो-सहित लौटा पाकर उसे ऐसा जान पड़ा, मानो उसे सभी कुछ मिल गया। उसने अपने आसू पोछ लिये, रोना-धोना बंद कर दिया। वह दत्तचित्त होकर पति की हड्डियों को कब्र देने में लग गई।

गाववालो ने भी समझा, चलो गाव का एक सकट तो दूर हुआ। सभी ने मिलजुलकर अब्दुल्ला के अतिम सस्कार कर दिए। मातमपुर्सी के लिए जो भी कुछ करने का दस्तूर था, सब पूरा कर दिया गया।

अल्लादिया माता के आसू पोंछने के लिए अब्बा की हड्डियों को लादकर ले आया, और वे कब्र मे भी बिछ गई। अब उसके नये फर्ज सामने थे। इसके बाद रात को न जाने उसने क्या सपना देखा। उसके मन मे गहरा भय छा गया।

उसकी नीद खुली और उसने कमरे में एक छाया घूमती हुई देखी। देखना तो उस अंधकार मे कुछ कठिन था, पलटनिया नीलामी ओवरकोट का एक छोर उसके गाल से सरकता हुआ आगे को बढ गया। वह घबराकर चिल्लाया—"अरी अम्मा !"

हमीदा की नीद टूट गई—"क्या है ?"

"अब्बा का ओवरकोट !"

"तू तो कहता था, वह चीथड़े होकर जमा है थाने में !"

"मां, मुझे डर लगता है। दिया जला दो !"

"बेटा, दियासलाई तो चुक गई। चूल्हे की आग भी बुझा दी थी।"

"बाला चच्चा के यहां से मांग लाओ मा !" वह फिर बहुत घबराकर बोला।

"तू तो कहता था कि अब बीडी-सिगरेट-गांजा तूने सभी कुछ छोड़ दिया। मैं कहती हूं बेटा, जब पेट के लिए रोटी ही नहीं कमा सकते, तो इस फिजूलखर्ची को पैसा कहा से आवेगा ?"

"इतने दिन तो अब्बा की ही सेवा में लग गए। अब फुरसत पाई है; जाऊंगा लाट साहब की कोठी में। लेकिन दिया तो जलाओ। अब्बा का ओवरकोट !"···

"क्या तेरा दिमाग खराब हो गया है ?"

"कमरे मे कोई है अम्मा ! मुझे डर लगता है।"

"बिल्ली होगी।"

"बिल्ली क्या ओवरकोट पहनती है ?"

हमीदा उठी, कमरे मे चारों ओर घूम-फिरकर टटोल आई—"नही कुत्ता-बिल्ली कोई भी नही है। सो जाओ। कल नैनीताल जाकर पिताजी की कब्र के बारे मे लाट साहब को बता दो कि तुमने उनकी हड्डिया खुद ही ढूढ़ ली हैं। अब वे सिर्फ हमारी रोटी-रोजी का इंतजाम कर दें। क्योंकि उनकी सालगिरह ही अब्बा की मौत की जिम्मेवार है !"

अल्लादिया के दिमाग में उस समय अब्बा का ओवरकोट ही घूम रहा था। उसे फिर नीद ही नही आई। जब तब उसी की याद उसे कचोटती रही। खुदा-खुदा कर जब सुबह हुई, तो पास-पड़ौसी सब चैन में थे कि अब हमीदा का रोना-धोना बंद तो हुआ।

अंत में हमीदा के बार-बार उकसाने और पास-पड़ौसियो का आग्रह मानकर अल्लादिया नैनीताल, लाट साहब की कोठी मे एक दिन चला ही गया। घर से ही टूटा दिल लेकर जब वह गवर्नमेंट हाउस के फाटक पर पहुंचा, तो सिपाही ने उसे पहचानकर उसकी आशाओं पर मिट्टी डाल दी— "लाट साहब यहां नही है, वे लखनऊ चले गए।"

"मेरे लिए कोई कागज लिख गए होंगे। दफ्तर में पूछ लेता हूं।"

दफ्तर के बाबू ने उसे बिना पूछे घुस गया देख डांटकर पूछा—"क्या है ?"

"है क्या ? पहचानते क्यों नही तुम मुझे ?" अल्लादिया ने एक हाथ अपने पतलून की जेब मे और दूसरे हाथ की तर्जनी का निशाना बाबू पर ठोक कर कहा—"अब्बा के बदले उनसे मेरी एक घोड़ा लेने की बात थी।"

बाबू ने कुर्सी से उठ उसे बाहर निकल जाने का सकेत करते हुए कहा—"अरे गधे, यह घोडो का जमाना है या मोटरगाडी और हवाई जहाज का ?"

चपरासी हाथ पकडकर उसे दफ्तर के बाहर कर गया, और वहा से एक सिपाही एकदम फाटक से दूर।"

निराश होकर वह सोचने लगा—अब क्या करे कहा जाए ? एक शरण बोट हाउस क्लब मे थी, वही चला गया। बावर्चीखाने की एक बेंच पर माथा पकडकर बैठ गया।

एक ने पूछा—"क्यो अल्लादिया, खाना खाया या नही ?"

"दो रोटी लाया तो था, पर डिब्बा तल्लीताल मे ही रख आया हू।"

"कोई बात नही, हमारे ही साथ खा लेना !"

"लाट साहब मुझे बडा धोखा दे गए।"

"वे तो खुद ही धोखे मे पडे है। सारे मुल्क मे 'भारत छोड़ो'की आवाजें गज उठी है।"

"लखनऊ चले गए, वहा से यहा नही लौटेंगे क्या ?" अपना वादा पूरा करने नहीं आवेंगे ?"

"आधा-आधा कर वही वादा पूरा कर देंगे।"

"आधा-आधा कैसा ?"

"आधा राम सेवक के लिए, आधा गुलाम नबी के वास्ते।"

"मेरी जान पर बीत रही है और तुम्हे मजाक सूझी है !"

"एक अर्जी लिखकर ले आ, बोट क्लब के सिक्रेटरी के नाम। तेरे बाप की खाली जगह पर पहला हक तेरा ही है।"

"लेकिन मैंने यह काम सीखा ही नहीं। तुम मुझे सिगडी जलाने, मसाला

पीसने और बर्तन मांजने का काम दोगे, वह मुझसे होगा नहीं। मुझे तो घोड़ा चाहिए!"

"तो क्या घोड़े पर चढ़ाकर तेरी बरात निकाली जाएगी?"

अल्लादिया की आंखों में आंसू चमक उठे खुशी के—"हां घोड़ा, घोड़ा! उसके लिए मुझसे वादा कर लाट साहब कहां चल दिए?"

इतने ही में बाहर से एक पुलिस मैन ने आवाज दी—"घोड़ेवाले को मय घोड़े के पकड़ लाया। साहब कहां हैं, उन्हें बुला दो!"

दफ्तर के एक बाबू टाइप करते-करते बाहर निकल आए—"कौन साहब?"

"एस० पी० सी० ए० के आफिसर! इस घोड़े की पीठ लगी है शायद, और यह बनजारा रानीघाट की चढ़ाई में बड़ी बेदर्दी से इस पर डंडे बरसा रहा था।" सिपाही ने कहा।

क्लर्क ने एक उंगली गाल में धोंसकर समझ लिया—"वे बिलियार्ड रूम में खेल रहे हैं। ठहरो, मैं अभी उनको खबर देता हूं।"

घोड़े का नाम सुनकर अल्लादिया वहां आ पहुंचा। देखा, उसका पड़ोसी बाला बनजारा, रोनी शकल बनाए खड़ा था। उसे देखते ही वह बोला—"भैया, तुम यहां कैसे आ गए?"

"अरे, अल्लादिया, तू खूब मिला भाई! तकदीर का चक्कर! नैनीताल आलू ले जा रहा था, चढ़ाई की वजह से घोड़ा कदम-कदम पर अड़ता आ रहा था। मैंने एक जगह उसकी पीठ पर तड़ा-तड़ दो-चार संटियां जमा दीं। मुझे क्या मालूम था, वहीं पर एक टीले की ओट में कोई साहब मय अपने बीबी-बच्चों के पिकनिक कर रहे थे। दौड़कर आए और अपना एक चपरासी मेरे साथ लगा दिया। वह चपरासी मुझे थाने में सौंप गया, और एक सिपाही की पकड़ में हूं तभी से। अब क्या करूं?"

"आलू कहां हैं?"

"वहीं थाने की सड़क पर फेंक आया हूं दोनों बोरे। तुम खूब मिले। जाओ, अपने अब्बा को बुला लाओ। वे मेरी मदद करके साहब से कह देंगे कि मेरी जान छूट जाए।"

"अब्बा तो हमें हमेशा के लिए छोड़कर चल दिए। उसीका रोना

लेकर तो यहां आया हूं।" कहकर अल्लादिया ने सारी घटना थोड़े शब्दों में बाला को सुना दी।

बाला उसके भारी दुख में अपना कष्ट सारे का सारा भूल गया।

अल्लादिया उदास होकर कहने लगा—"उनने बड़े लाट साहब भी मुझे धोखा दे गए। और जो मेरे अब्बा उन्हीं साहब लोगों की खिदमत में रात-दिन लगे रहते थे, क्या उन्हीं की सालगिरह के सबब नहीं चल बसे? उनकी जान तोल दी उन्होंने एक घोड़े से और वह घोड़ा भी नहीं दिया। यहां से सीधे चल दिए लखनऊ को! अगर मैं उनका पीछा करने जाऊं लखनऊ, तो वे दौड़ जावेंगे दिल्ली! दिल्ली जाऊं तो वे सात समुंदर पार। क्यों बाला भाई, क्यों मैं झूठ कह रहा हूं?"

बाला कुछ निराशा के साथ बोला—अरे तो क्या घोड़ा पाकर तुम बनजारों की गिनती में एक और न बढ़ा देते? मुझसे पूछो। बनजारों की जिंदगी में कैसे फूल खिलते हैं। न उनका दिन में खाने का ठिकाना, न ही रात में सोने की कोई जगह!"

इतने में क्लब का एक माली चिल्लाया—"यह घोड़ा कौन ले आया यहां? अगर फूल-पत्ती में इसने मुंह मार दिया तो?"

पुलिस के सिपाही ने उससे कुछ बातें कीं, और फिर वह कुछ नहीं बोला।

बाला ने फिर माली से निडर होकर अल्लादिया की ओर मुंह कर कहा—"तुम्हारे अब्बा का बहुत बढ़िया धंधा है, उस पर अपना कब्जा जमाए रखो। डटे रहो, धरना दो, तुम्हें हटा कौन सकता है?"

"वह धंधा आता कहां है?"

"धंदा क्या कोई पेट से सीखकर आता है? सीखते-सीखते क्या नहीं सीखा जाता? जाते-जाते इंसान दुनिया के किस हिस्से में नहीं पहुंच जाता?"

"सुना है, लाट साहब हिन्दुस्तान के दो हिस्से कर देनेवाले हैं।"

"तो क्या तुम्हारा विचार है, उसी घोड़े पर चढ़कर पाकिस्तान जाने का?"

"नहीं बाला भाई, यहीं नैनीताल में मजूरी करूंगा। तुम्हारी तरह पहाड़ और भाबर के चक्कर नहीं लगाऊंगा।"

"तो क्या यहां रेता-बजरी और चूने-पत्थर का ढुलान करोगे ?"

"नही, मैं सैलानियों को अपने घोड़े पर ताल का चक्कर, चीना पीक, टिफिन टॉप, स्नोव्यू की सैर कराऊंगा।"

"लेकिन तेरा यह घोडा है कहां ?"

"लाट साहब का कसूर भी कैसे कहूं, और इन झंडा उठानेवालों का भी क्या ? हिन्दुस्तान के दो टुकड़े होने मे, मेरे साथ किया गया वादा भी टूट गया !"

"तू मेरे इस घोड़े की फंदी छुडा दे, तो मैं तेरे घोड़े का इंतजाम कर सकता हूं।"

"मेरे पास कोई कानी कौड़ी भी तो नही।"

"अरे, मैं उधार दिला दूगा। अगर तू रोजाना दस रुपये भी कमा लेगा, तो पांच अपने खर्च के लिए रख, चार-पाच घोड़े की किस्त देते रहना !"

"पर मैं तुम्हारी फदी कैसे छुड़ाऊं ? इस साहब से मेरा कोई वास्ता ही नही है। मैंने तो इसकी शकल भी नही देखी। लाट साहब से कह देता, पर वे चले गए लखनऊ।"

तभी पुलिस का सिपाही उस साहब को बुलवाया। और बोट क्लब के बाबू ने एक कागज की शीट उनके आगे बढाई।

"क्या है यह ?" उन्होंने पूछा।

"लाट साहब ने क्लब के मेंबरों के लिए एक अपील निकाली है, इसे देख लीजिए।"

वह साहब रिटायर्ड ब्रिगेडियर थे। लखनऊ में उनकी कोठी थी। मूक पशुओं के साथ उनकी बड़ी हमदर्दी थी। वे जीवदया प्रचारिणी सभा के अवैतनिक सेक्रेटरी थे। बड़ी धार्मिक वृत्ति के रोमन कैथलिक थे, विचार-धारा में। उन्होंने वह अपील पढ़ी।

उसमें लिखा था कि "अब्दुल्ला खानसामा क्लब का एक बहुत ईमानदार और अपने फन मे बहुत होशियार व्यक्ति था। उसने बीस साल क्लब की सेवा की। उसे असमय में ही एक आदमखोर बाघ ने मार डाला। मैंने उसके लड़के को बाप की जगह देने को कहा, पर न जाने क्यो वह राजी नही वह माल रोड पर झडा ले जानेवालों मे नही जान पडता। वह

मागता है। उसे उसके बाप की पेंशन या किसी फंड का रुपया मिलनेवाला नही है। मैं इस गरीब की मदद की सभी मेंबरों से अपील करता हूं। उसके लिए घोडा खरीदने के लिए सब थोडा-बहुत चंदा दें। अंत में जो भी कम पड़ जाएगा, वह सब मैं अपनी जेब से दे दूंगा।"

अपील पढकर ब्रिगेडियर साहब बोले—"यह अब्दुल्ला खानसामा का बेटा कौन है ? पहले उसका पता लगाना होगा। घोड़े की बात फिर देखी जाएगी।"

पास ही खड़ा अल्लादिया जोर से चिल्ला उठा—"हुजूर, मैं हूं खानसामा का बेटा ! यह घोडा मेरा नहीं है, न ही मेरा कोई कसूर ही है ! मुझे क्यो पकडा जा रहा है ? मैं तो इस बाला भैया की सिफारिश करने आया हू। मुझे लाट साहब पहचानते थे। अगर वे लखनऊ नही चले गए होते, तो जरूर हमारी फंदी काट देते। बाला भैया बडे शरीफ आदमी, मेरे पड़ौसी हैं, इन्हें जेल न की जाए ! झंडा उठानेवालो मे से ये किसीको भी नहीं पहचानते। सफेद टोपी पुरानी पहनी है।"

ब्रिगेडियर बडी जोर से हंसे—"क्यों, तुम्हें घोड़ा चाहिए ?"

"हुजूर, यह आपसे किसने कह दिया ?"

"लाट साहब तुम्हारे लिए इतनी बडी अपील लिखकर रख गए हैं।"

"या खुदा, तेरा शुक्र है ! मैं समझा था, लाट साहब मुझे भूल गए !"

ब्रिगेडियर फिर हँसे। उन्होंने बाला पर नजर की—"क्यो जी, क्या तुम इस घोडे को बेच देना चाहते हो ?" उसके उत्तर की कोई प्रतीक्षा न कर उन्होंने अल्लादिया से पूछा—"क्या तुम्हें यह घोडा पसंद है ?"

अल्लादिया मन ही मन खुश होकर बोला—"है तो सही ! पर यही तो इनकी गुजर-बसर का जरिया है। ये क्यों बेच देंगे इसे ?"

बिना उसके कुछ पूछे ही, बाला अपनी जान छुडाने को बोला—"अगर यह इसे पसंद है तो मैं दूसरा खरीद लूगा। लेकिन शर्त यही एक है कि यह इसपर माल नही लादेगा।"

अल्लादिया ने झट से कहा—"नहीं हुजूर, मैं इसपर माल का लदान नही करूंगा, सवारियां बैठाऊंगा।"

ब्रिगेडियर ने पूछा—"इसके दाम क्या लोगे ?"

"यह मेरा पड़ोसी भाई है। अगर आप पुलिस के फंदे से मेरी जान छुड़ा देते हैं तो दस-बीस रुपया जो भी यह कम दे देगा, मुझे मंजूर है !"

"तुमने यह कितने में खरीदा ?"

"दो सौ में, एक महीने पहले ।"

ब्रिगेडियर ने अल्लादिया से पूछा—"क्यों जी, बोलो—कितने में खरीदोगे ?"

वह सिर खुजाता हुआ बोला—"मेरे पास तो दो कौड़ी भी नहीं। इतना रुपया कहां से लाऊं ?"

"उसका इंतजाम बोट हाउस क्लब करेगा, जहां तुम्हारे पिताजी ने अपनी सारी जिंदगी खपाई है। पचास रुपये का चेक लाट साहब ने इस अपील में नत्थी कर दिया है। बाकी मेंबर दस-दस रुपया भी दे देंगे तो घोड़े की कीमत आसानी से जमा हो जाएगी।" ब्रिगेडियर ने कहा।

"तो हुजूर, मेरी यहां कोई जरूरत नहीं; मैं चला जाऊं ?" बाला आसानी से अपनी जान छुड़ा लेने के मतलब से बोला।

"क्यों, क्या घोड़े की कीमत का फैसला नहीं कर जाओगे ?"

"यह मेरा बिल्कुल नजदीकी पड़ोसी है, इसलिए कोई फिकर नहीं। घोड़ा इसे सौंप जाता हूं। कीमत कहां जानेवाली है ? थाने के बाहर आलू के बोरे पटक आया हूं। कोई उन्हें खाली न कर ले जाए, इसी फिकर में जाता हूं।"

बाला जाते-जाते अल्लादिया से बोला—"भैया, आलुओं को अब कहां ले जाऊं ? यहीं नीलाम पर चढ़ा जाता हूं।"

"इसकी काठी तो खोलकर ले जाओ। मुझे क्या माल ढोना है ?"

"मैं कहां ले जाऊं; फेंक दे खोलकर इसे, कहीं नाले में।" वह जाने लगा।

ब्रिगेडियर उसे रोकते हुए बोला—"ओ मैन, यू कहां जाता है ? अभी तुमारा कसूर का दाम कौन देगा ?"

बाला अपनी सफेद टोपी संभालता हुआ बोला—"नहीं सरकार, मैं सिर्फ अपने आलुओं की ही फिकर में जाता हूं। यह टोपी पुरानी है।"

"क्या तुम इस घोड़े के सिर्फ तीन सौ रुपये ही लेने को राजी हो?"

"हुजूर माई-बाप है ! जो तय कर देगे, क्यो नही लूगा ? दस ज्यादा या पाच कम भी हो तो कोई बात नहीं ! यह मेरा बिल्कुल नजदीकी पड़ौसी है।"

"यह मुसलमान, और क्या तुम हिन्दू है?"

"यह घर भीतर की बात है, बाहर हम हर सुख-दुख मे एक-दूसरे के साथी है।"

फिर उन्होंने अल्लादिया पर उगली दिखाकर पूछा—"क्यों जी, है तुम्हे यह घोड़ा पसद ?"

"घोड़े की पसद तो बता ही चुका हू। पर इसपर जो कसूर जमा किया गया है, वह भी क्या मुझे ही भरना होगा ?"

"तुम अगर इस घोड़े पर भारी बोझा न लादने की कसम खाओ, तो हम तुम्हें बरी कर देगा।"

"नही साब, मैं इसपर बिल्कुल माल नही लादूगा। सिर्फ सवारिया मरद-औरतों की, नैनीताल के सैलानियो की। अभी आपके सामने ही मैं इसकी काठी उतारकर तालाब में डाल देता हूं।"

"यह क्या करता है ? तालाब को गंदा करेगा ? सिपाही अभी कही गया नहीं है। पकडकर तेरा चालान कर देगा !"

"किसी कबाड़ी को दे दूगा।"

"घोड़े की सवारी हाथ मे झडा लेकर माल रोड पर जलूस तो नही निकालेगी ?"

"नही हुजूर, मैं तो सवारी लेकर चीना पीक की चढाई पर जाऊंगा।"

"अच्छी बात है!"

"मुझे रुपया कब मिलेगा ?"

"मेंबर आकर अपने नाम के आगे चंदा लिखेंगे। फिर उनसे रुपया वसूल कर तुम्हे दे दिया जाएगा—चार-पांच दिन मे !"

घोड़े को लेकर बाला अपनी जान छुड़ा मल्लीताल थाने से चला। अल्लादिया उसका हाथ पकड़कर बोला—"बाला द्दा, अब इस घोड़े की लगाम मेरे हाथ मे दो, क्योंकि अब मैं इसका मालिक हो गया।"

लेकिन बाला ने उसे रोक दिया—"भैया, इतनी बेसबरी क्यों दिखाता है? अभी इसकी कीमत मेरी जेब में कहां आई? लेकिन मैं सोच रहा हूं···" फिर वह चुप हो गया।

"कहते क्यों नहीं? चुप क्यों हो गए?"

"मैं अगर अपने पिछले बरसों के साथी को बेच दूंगा तो खाऊंगा क्या? मेरी तिजारत के रास्ते, मेरी आदतें—सब इसने पहचान रखी हैं। मान लो, अगर मैंने दूसरा घोड़ा भी खरीद लिया, तो उसे सिखाने में कितनी उमर बरबाद हो जाएगी?"

"तुमने ब्रिगेडियर साहब को धोखा तो दिया ही, मेरा भी रास्ता काट दिया!"

"अरे, मैंने वह तो अपनी जान छुड़ाने को हां में हां मिला दी और तेरे रुपये वसूलने की तरकीब निकाल दी। रुपये तो अंटी में कर लें। मैं तेरे लिए बढ़िया सवारी का घोड़ा और भी सस्ता खरीद दूंगा।"

अल्लादिया ने जबर्दस्ती उसके हाथ से लगाम छीन ली, और उछलकर घोड़े की पीठ पर सवार हो रहा। उसने एड़ मारकर घोड़े को दौड़ा भी दिया पलैट पर।

"मान जा! मान जा!" चिल्लाता रह गया बाला—"अरे, एक खेप आलू की तो पहुंचा लेने दे हल्द्वानी को। तू जब भी वहां से रुपया इकट्ठा कर लावेगा, मैं तेरी राह वहीं देखता रहूंगा।"

फील्ड का एक चक्कर लगाकर अल्लादिया फिर बाला के पास आ गया—"बाला भाई, बड़ा अच्छा घोड़ा है यह तुम्हारा! कैसी बढ़िया चाल से चल रहा है, मानो कोई सिनेमा की एक्टरेस नाच रही है। तभी तो टिकट की खिड़की पर राशन से भी लंबी लाइन लग रही है। मैं ब्रिगेडियर साहब के पास जाकर अभी उनके पैर पकड़ लेता हूं कि साहब एक सौ रुपये का चंदा और करा दीजिए; बाला बनजारा अब घोड़े के चार सौ मांगने लगा है।"

"हां, अब तो तूने यह अकल की बात की है!"

"मैं अकल की बात कब नहीं करता? जब मैं सपने में दुल-दुल घोड़े पर चढ़कर हवाई उड़ानें भरता था, लाट साहब ने मुझसे कहा, 'ले मैं तुझे

पाकिस्तान का टिकट देता हूं।' मैंने साफ इनकार कर दिया। वे जरूर मुझे वहा किसी रंगीन कुरसी पर बिठा देते। और जब मैंने उस अंधेरे में अब्बा के लंबे पड़े साफे को अजगर समझा, मैंने बेखौफ होकर उसकी पूंछ पकड ली और उनकी तमाम हड्डियों को बीनकर बाध ले गया उसीमें। अम्मा का रोना बंद कर दिया। और तुम अब कहते हो मैंने अक्ल की बात की!" उसने फिर घोड़े के एड जमाई। घोड़ा फिर छूमंतर हो गया।

बाला फिर चिल्लाया—"अरे मूरख, गिर पड़ेगा! घोडे पर जीन तो है नहीं, और काठी अपनी जगह पर से हट गई। तेरा बाप क्या मरा तू हम सबको ही अपना बेटा समझने लगा! सुनता क्यों नहीं मेरी सीख?"

बाला के इन लफ्जों का निकलना था कि उसके पहले ही अल्लादिया मय काठी के जमीन पर गिर पड़ा, और उसका एक पैर घोड़े की पीठ पर बंधी हुई रस्सी पर ही लटकता रह गया।

घोड़ा समझदार था। अल्लादिया कहीं घिसटता हुआ न चला जाए, शायद यह सोचकर ही वह जहां का तहां खड़ा रह गया। बाला ने दौड़ते हुए आकर उसकी टांग छुड़ा दी। सहारा देकर उसे उठाया। पीठ झाड दी, टोपी उठाकर उसके सिर पर जमा दी—"ऐसी बेसब्री भी किस काम की? भाई, घोड़ा तो तुझे दे ही चुका हूं। दाम जो भी तुझे वहां से मिलेंगे, मुझे कबूल है।"

"नहीं बाला भाई, यह तो बड़ा बदमिजाज जानवर जान पड़ता है। इसने मुझे जान-बूझकर ही नीचे गिराया है। यह जरूर मेरी छाती पर अपनी टाप टेककर मेरी सारी हवा निकाल देता, अगर तुम दौड़कर नहीं आ जाते!"

"अब तुम ऐसा कहने लगे? अरे,अगर यह तुम्हारे गिरते ही फौरन ठहर न जाता, तो जमीन पर घिसटकर बदन के कपड़े क्या खाल की भी छीछा-लेदर हो जाती!"

"शायद वे जो बिल्कुल लाल साड़ी और लाल ही अंगिया पहने दोनों औरतें मंदिर को जा रही हैं, उन्हें अचानक उस कुत्ते से चौंकता देख यह बिदक गया।"

"तुम्हारी मर्जी! मैं तुम्हारे ऊपर जबर्दस्ती क्या इस घोड़े का सौदा

लाद रहा हूं ?"

"हाऽ !" अल्लादिया ने बडी उदासीनता से कहा।

"मेरा लालच इतना ही है, यह अच्छी जात का घोड़ा ऐसे लद्दू बना देने के लिए नही था। मैं अपने लिए दूसरा खरीद लाता। यह मेरे इतने बरसों का पुराना साथी, मेरे पडौस मे, मेरी आंखों के सामने रहता, यही मेरा लालच है !"

यह सुनकर अल्लादिया फिर उस घोडे के नजदीक चला गया। उसकी तारीफ सुनकर अब घोड़े के लिए उसके विचार बदल गए। उसने उसकी पीठ पर पुचकार-भरा हाथ रखा। घोड़े ने हिनहिनाकर मानो अल्लादिया के प्रेम का जवाब दे दिया।

अब तो उसने घोडे की गर्दन पर अपना सिर रख दिया—"नही बाला भाई, अब मैं इसको समझ गया। इसका कोई कसूर नही है। इसे जरूर उन दोनों लाल औरतों ने चौंका दिया। मेरे मन मे यह घोड़ा कभी से अपना घर किए हुए है। जमा दो फिर काठी, इसकी पीठ पर, मैं फिर इसपर सवार होता हू। यह बडी अच्छी तबियत का है।"

"मुझे कोई इनकार नही। पहले उन आलुओ को तो ठिकाने से लगा दू, नही तो पचास रुपयों की धौल मेरी खोपड़ी पर पड़ जाएगी !"

"यही नीलाम कर दो आलुओं को। जो भी नफा तुम्हे कम मिलेगा, उसे मैं पूरा कर दूगा।"

बाला मानते हुए बोला—"पर थाने के पास से आलू उठाकर आढती के पास भी तो ले जाने पड़ेंगे।" उसने काठी घोड़े की पीठ पर जमा दी।

अल्लादिया को यह बात मान लेनी पड़ी। घोड़े को लेकर वे दोनों थाने मे जा पहुचे। बाला ने थाने के इधर-उधर चारों तरफ देखा। उसके आलू के दोनो बोरों का कही पता ही नही। उसने थाने के भीतर जाकर ड्यूटी के सिपाही से पूछा—"दीवान जी, मेरे आलू के दोनों बोरे क्या आपने कही संभालकर रख दिए ?"

सिपाही बिगड़कर बोला—"क्यों नही, उसीकी तो तनखा मिलती है न हमे !"

"लेकिन जनता को लुट जाने से बचाना तो है न ?"

यह सुनकर सिपाही कुछ नरम पड़ गया—"अच्छी तरह देख लिया ?"

"देख लिया।" बाला ने जवाब दिया।

"कौन ले गया, दोनों बोरे ?" अल्लादिया बोला।

सिपाही बोला—"हम क्या जानें ? न रखने वाले को देखा, न ही ले जाने वाले की परवा की।"

"यहां पहले जो दूसरे सिपाही जी थे, उनसे कह गया था मैं, बोरों का ध्यान रखने के लिए।"

अल्लादिया बोला—"बाला भाई, मैं तो समझता हूं, ले गया कोई सरकाकर तुम्हारे दोनो बोरे। होगा कोई छेदुवा-भेदुवा ही !"

"नहीं जी, दिन-दहाड़े, ठीक थाने के सामने से किसकी हिम्मत हो सकती है ? सिपाहीजी, अब मैं क्या करूं ?"

अल्लादिया बोला—"बाला भाई, तुम चाहे जो भी कहो, यह घोड़ा तो अब मेरे ही नाम लिख गया !"

"किसी उठाईगीरे ने मेरी कठिनाई भांप ली होगी, और उन दोनों बोरों को किसी आढ़ती के पास ले जाकर अपनी दस्तूरी नाप ली।"

"तुम पता लगाओ, मैं तब तक घोड़े को ले जाकर सोमाल कबाड़ी की दूकान पर ठहरा रहूंगा। सभी आढ़तियों की दूकानों पर जाकर पता लगाओ तुम्हारे दोनों बोरे कौन ले गया ?"

ऐसा ही किया गया। बाला आलू के आढ़तियों की लाइन में चला गया। ऊपर दूकानों में कई जगह आलू के ढेर लगे हुए थे। कुछ आलू के बोरे भी जमा थे। उखड़ा-उखड़ा-सा वह एक दूकान से दूसरी दूकान पर जाकर परखने लगा।

नत्थू आढ़ती ने उसे दूसरे चक्कर में रोककर पूछा—"क्यों भाई बाला, आज ऐसे क्या लटक रहे हो ? क्या माल लाए हो, घोड़ा कहां है ?"

सिर पर हाथ मारकर बाला ने जवाब दिया—"घोड़े ही से तो यह मुसीबत पैदा हो गई ! घोड़े का भी कसूर क्या कहूं ? एक पलटनिया पेंशनर नहीं है—वह मोटी तोंद वाला, रानीघाट की चढ़ाई में मेरा घोड़ा अटक-अटक रहा था। मैंने उसकी पीठ पर दो-चार सटिया चला दी थीं। मुझे क्या मालूम, वही कहीं झाड़ियों में दुबका बैठा है। घोड़े के पीटने की आवाज

सुनकर बाहर निकल आया और मुझे पकड़कर अपने चपरासी को सौंप दिया।"

"ऐसा क्या भारी कसूर हो गया तुम्हारा?"

"भगवान् जाने! घोड़े की पीठ पर कोई घाव नहीं। बांज की टहनी के जानवर पर जो दो छमाके बजे, उसीसे उसका मूड गड़बड़ा गया। बूढ़ा पेंशनर, कामधंधा कुछ है नहीं; चले हैं जानवरों पर दया दिखाने। ये गोरे काले इंसानों पर इतने अंधेर कर रहे हैं! कहीं लाठी-गोलिया! जेलों में हमारे ऊपर जुलम हो रहे हैं! हमारे हकों की आवाजें ठुकराई जा रही हैं, और दया दिखाई जा रही है—बिना आवाज के जानवरों पर! घोड़े को दाना-पानी ये देते हैं क्या?"

"तुमपर तो कोई लाठी-चार्ज नहीं किया?"

"बहुत देखे ये, ऐसे लाठी वाले! भगवान् ने मेरी मदद कर दी। मैं अपने घोड़े को तो साफ-साफ बचा लाया, पर मेरे आलू के दोनों बोरे गायब! कोई यहां तो नहीं बेच गया?"

"पुलिस में रिपोर्ट नहीं की?"

"ठीक पुलिस की नाक पर से ही गायब हो गए, तो क्या रिपोर्ट करूं?"

"ताज्जुब है! ऐसा तो कभी यहां हुआ ही नहीं!"

तब अल्लादिया घोड़ा लेकर सोमाल कबाड़ी की दूकान के आगे खड़ा हो गया। सोमाल उसे पहचानता था। बोला—"बाप तेरा मशहूर खानसामा था। खैर, तूने उसका काम नहीं सभाला, कोई बात नहीं, अपनी-अपनी पसन्द है! तूने घोड़े पर काठी रख दी, क्या हर्ज है?"

"नहीं, मैं घोड़े पर इस काठी को नहीं चाहता।"

"क्यों नहीं? यह मशीन और बिजली का जमाना है तो क्या हुआ? क्या मोटर हमारे पहाड़ के हर गाव को छू लेती है? बनजारे का घोड़ा बड़े-बड़े ऊबड़-खाबड़ रास्तों में चला जाता है। मैं कहता हूं, अगर तेरी मति ठीक-ठीक रही तो तेरी गति भी सही रहेगी। और फिर क्या तू कभी किसी ट्रक का मालिक न बन जावेगा?"

"लेकिन भाई, मैं तो एक बने-बनाए बनजारे को भी कोई दूसरा पेशा अख्तियार कर लेने का मौका दे आया हू। लेकिन सोमाल दद्दा, तुम्हारी

गति-मति में कहां पर टपकन है, कि तुम जनम-भर कवाड़ी के कवाड़ी ही रह गए !" फिर उसने अपनी मुसकान को कुछ गंभीरता में बदलकर कहा—"इस घोडे की काठी को क्या तुम अपने कवाड़खाने में जगह न दोगे ?"

सोमास कवाडी अपनी ही बांसुरी बजाता रह गया—"अल्लादिया, अगर तू खाली ही हल्द्वानी को जा रहा है, तो कुछ मेरा लोहा-लक्कड़ लाद ले जा, अपने घोडे पर। तेरा भाड़ा मैं पेशगी दे दूंगा।"

"तुमने क्यों नहीं ध्यान देकर मेरी बात सुनी ?" अल्लादिया ने घोड़े की काठी उतारकर उसके सामने रख दी—"मैं तो यह काठी ही बर्खास्त-कर तुम्हे सौंपने आया हूं। अभी मेरे पास कोई खोटा पैसा भी नहीं। इसका कोई गाहक आ जाए तो तुम अपना कमीशन काटकर मुझे जो भी दे दोगे, कबूल होगा।"

"मेरी दूकान मे कहां इसके लिए जगह समझता है तू ?" कवाडी ने झुंझलाकर कहा।

"दूकान के बाहर इस दीवार के सहारे खड़ी कर देता हूं। जरूरतमंद की नजर इस पर आसानी से खिंच जाएगी।"

"अगर कोई इसे सिगड़ी सुलगाने को नही ले गया, तो सिपाही सड़क घेर लेने पर मेरा चालान कर देगा। हां, याद आया !" उसने अपनी खोपड़ी पर पांचों उंगलियों के सिरे टिका दिए।

अल्लादिया कुछ-कुछ उसका मतलब समझकर खुश हो उठा।

वह बोला— 'हां, अगर तू इस इस घोड़े की नंगी पीठ को ढकना ही चाहता है, तो है मेरे पास एक इलाज।"

अब तो अल्लादिया चुप न रह सका—"क्या-क्या, है तुम्हारे पास कोई पुरानी जीन ?"

"हां, तू मेरे हाथ काठी तो क्या बेचेगा, मैं तेरे हाथ जीन का सौदा कर डालूंगा। हां, है मेरे पास एक जीन ! वैसे यह घोड़ा मुझे बड़ी सुजात का जान पड़ता है। इसे लद्दू बना देना, इसकी तकदीर का नहीं, तुम्हारी तदबीर का जुलम है। तू इसे कहां से लाया है ?"

"हां, काठी अलग होने पर खुद-बखुद मुझे जीन की तलाश है। पर पहले तुम इस घोड़े की जांच करो, तब बताऊंगा—इसे कहां से लाया हूं।"

जीन के ग्राहक को पटाने के लिए सोमाल कवाडी को घोड़े के पास तक उतरना पडा। उसने उसकी गरदन थपथपाई। फिर उसकी परिक्रमा कर उसे चारों तरफ से देखा—टटोला। उसके मुह को खोलकर दात गिनने की कोशिश की, डर गया और जल्दी से कह डाला—"बहुत बढ़िया घोड़ा है! तुमने इसके ऊपर काठी रखकर इसकी जात बिगाड़ दी। हां, अब तू इसका नया जनम कर दे।"

"निकालकर लाते क्यों नही फिर तुम इसकी जीन? मैं बिठाऊंगा इस पर व्यापार के बादशाहों, राज के मन्त्रियों, सिनेमा के सितारों और सितारियों को। आई कुछ समझ में?"

सोमाल कवाडी अब भी जीन निकालने को दूकान के भीतर नहीं घुसा। उसकी भूमिका बाधने लगा—"एक था कर्नल डिग्री। बाल-बच्चे, जोरू-जाता, कुछ भी न था उसके। कभी उसने शादी की भी थी या नहीं, इसका भी न कोई इतिहास ही था, न ही कोई किंवदंती। कुछ पैसा जमा था, उसके कुछ कंपनियों मे शेयर भी थे। पलटनिया पेंशन मिलती थी उसे'''।"

अल्लादिया ने ऊबकर कहा—"जीन तो निकालकर ले आओ।"

"अरे उसीकी तो बात कह रहा हूं! हां, कर्नल साहब का नैनीताल क्लब मे एक कमरा बराबर के लिए रिजर्व था। क्लब की कुछ देखरेख का भी जिम्मा था। इसके लिए उन्हे कोई तनखा मिलती थी या किराये में से कटता था—इससे हमें क्या वास्ता? वे फूलों के बडे शौकीन थे।"

अल्लादिया फिर कहने लगा—"फूलों और बगीचों से जीन का क्या वास्ता?"

"अरे, उन्हें घोड़े की सवारी का बड़ा शौक था। सुबह उसपर चढ़कर सैर का उनका नित्य नियम था। कभी वीरभट्टी, भुवाली, भीमताल, कभी चीना पीक, लैंड्स एंड। बोट हाउस क्लब का भी मेंबर था। बड़ा मजाकिया, मस्तमौला, दीन-दुखियों की बड़ी मदद करता था। था असली अंगरेज, पर काले आदमियों के साथ सिगरेट पी लेने में कोई बेइज्जती नहीं समझता था।"

"लेकिन मुझे कर्नल की तारीफ से करना क्या है?"

"अरे, यह जीन तो उसी जेंटलमैन की यादगार है ! फिर एक दिन उसका घोड़ा मर गया। उसकी शादी की तो भगवान् जाने, घोड़े के मर जाने पर ऐसा जान पड़ा—वह रडुवा हो गया ! कई दिन तक वह उदास-निराश घर पर ही पड़ा रहा। फिर बहुत समय तक उसने घोड़े के रास्तों पर पैदल ही दौड़ लगाई···।"

बेसब्री से अल्लादिया बोला—"तभी उसकी जीन तुम्हारे हाथ लग गई होगी। निकालो फिर उसे ! क्या कबाड़ में बहुत नीचे दबी पड़ी है, या तुम्हारे किसी और गोठ में अपनी कैद काट रही है ?"

अब तो सोमाल जोश में आकर तुरंत ही जीन निकाल लाया। एक चीथड़े से पोंछकर उसने धूल के नीचे से उसकी चमक खोल दी।

अल्लादिया बहुत खुश होकर बोला—"घोड़े पर रखकर दिखाओ।"

"पूरी इसी घोड़े की साइज की है ! पहले तुम अपनी गाठ खोलकर भी तो सामने करो !"

इतने में बाला उदास होकर वहां आ पहुंचा—"दोनों बोरे गायब ! कहीं पता नहीं चला। दिन दोपहर ऐसा डाका पड़ गया ! अब क्या करूं ?"

अल्लादिया ने उसके घाटे पर कोई दिखावे की समवेदना भी नहीं दिखाई। अपनी ही खुशी में खुल पड़ा—"तुम ठीक आ गए बाला भाई ! अब तुम इस जीन को पसन्द कर इसका मोल-तोल करा दो।"

अनमना होकर सोमाल कबाड़ी घोड़े पर से उतारकर उस जीन को अपनी दूकान के भीतर ले जाते हुए बोला—"मोल-तोल के क्या माने ? रुपये पचास नकद लूगा ! आज मैंने अभी तक बोहनी भी नहीं की है।"

बाला अल्लादिया से कहने लगा—"एक डाकू मेरे आलुओं के दोनों बोरों को साफ कर ले गया; और दूसरा तू मेरा पड़ौसी, मेरे घोड़े को अपना बना लेगा—तो भाई, मैं ठन-ठन गोपाल! मेरी गुजर-बसर का क्या होगा ? घरवाली को क्या ले जाकर दूगा कि चूल्हा जलता रहे !"

"बोट हाउस क्लब से मुझे जितना भी पैसा मिलेगा, मैं वह सबका सब तुम्हारी नजर कर दूंगा। फिर तुम्हें दूसरा घोड़ा खरीदने में सहूलियत हो जायेगी।"

"अरे अल्लादिया, तूने अभी दुनिया देखी भी है क्या ? कब तुझे पैसा

साथ फटे-पुराने चप्पल भी रहते हैं।"

"बाला, सुनता क्यों नहीं? वह साहब चला गया, लेकिन उसका इतिहास जाननेवाले थोड़े ही बड़े-बुड्ढे रह गए हैं, नैनीताल में। फिर सब कुछ डूब जायेगा—काल के महासमुद्र मे! अरे, यहां तक कि एक बार एक गोली चलाने वाले को छिपा दिया उसने, अपने गुसलखाने मे। पुलिसवालों में इतनी हिम्मत तो नही थी कि उस कर्नल के घर मे घुस जाते; पर ऊंचे गोरे अफसरों तक उसकी इस लीला को पहुंचा दिया। उन लोगों ने इस बात को कागजो मे फैलाकर तूल नही दिया। गुप्त फाइलो मे ही यह बात चलती रही। इसका नतीजा सिर्फ यही हुआ कि पलटन से उसे जो पेंशन मिलती थी, वह काट दी गई। अब वह बड़ी मुश्किल मे पड़ गया। उसने घर का सामान बेचना शुरू कर दिया।"

अल्लादिया—यह जीन तभी तुमने खरीदी होगी!

अब तो ये दोनो बड़े ध्यान से उसकी बातें सुनने लगे। बाला अपने आलू के बोरे भूल गया, और अल्लादिया जीन का सौदा।

सोमाल कहता जा रहा था—"लेकिन उस साहब ने अपना मजहब नहीं बदला। उसे अपनी किसी बात के लिए पछतावा नही हुआ। वह बहुत खुलकर आजादी के सिपाहियो की मदद करने लगा। उसकी जातवालो ने उसे पागल कहना शुरू कर दिया।"

सोमाल का लेक्चर जारी ही था, कि अचानक बाला को परदे से ढका हुआ एक बोरे का कोना दिखाई पड़ गया। उसने परदा हटाया, तो सचमुच उसका आलू का बोरा प्रकट हो गया। अकेले ही नही, उसकी बगल में दूसरा भी। वह जोर से चिल्लाया—"क्यों रे कबाड़ी, बदकर उस गोरे साहब की कहानी; अपने इस काले धंधे का खुलासा दे!"

सोमाल ने चौंककर उसका विरोध किया—"क्या-क्या?"

"बिजली की बत्ती खोल कि तेरा अंधेरा उजाले में जाहिर हो! अल्लादिया की जीन ने तेरी चोरी का भंडाफोड़ किया, नहीं तो इसे कहां खुलना था?"

"अब जीन की चोरी लगाता है? सारी दुनिया जानती है, इस सौदे को! पर जब तक तू पूरे सौ रुपए नहीं रखता मेरे हाथ मे, यह तेरी हो नही

सकती। ले, क्या देखता है—जला दी विजली !" कहते हुए उसने वत्ती जला दी।

अव तो वाला को कोई शक नही रहा, अंधेरे पर उजाले की जीत हो गई। उसने ऊंची आवाज मे पूछा—"वता, यह तेरी सीधी चोरी है या सेकेंड हैंड ?"

वह हकवकाकर वोला—"सेकेंड हैंड, क्या माने ?"

"इन वोरों की तरफ देख और फिर चल थाने मे; पहरे का सिपाही मेरा गवाह है।"

सोमाल ने उन वोरों की तरफ देखकर कहा—"किसके है ये वोरे ?"

अल्लादिया वोला—"यह पूछकर तुमने अपने मुह की भारी कालिख पोंछ दी क्या ?"

सोमाल कुछ घवराया—"वाला, तुम यह क्या कहते हो ?"

"मैं कहता हू, अगर तुमने ये किसीसे खरीदे हैं, तो तुम्हारे कवाड के साथ इसका क्या मेल है ? तुमने जानवूझकर यह चोरी का माल खरीदा है ! किससे खरीदा है, साफ-साफ उसका नाम वताओ !"

"अरे, मैं किसका नाम वताऊ ?"

अल्लादिया वोला—"अव तो तुम्हें इस पाप के भुगतान में यह जीन ऐसे ही देनी पड़ गई—कमीशन में।"

सोमाल कहता जा रहा था—"न जाने कौन इन दोनों वोरों को मेरी दूकान मे रख गया ! मैं कुछ देर पहले वपुलम गया था।" वह सिर खुजाता हुआ वोला।

"तू वात को छिपा रहा है ! इसकी सफाई के लिए थाने मे चलना ही पड़ेगा। वह दूर नहीं है।"

अव उसने जीन को भीतर से निकालकर वाहर मेज पर रख दिया। सिर पर हाथ पोंछता हुआ वोला—"भगवान की कसम खाकर कहता हू, मुझे कुछ भी मालूम नहीं है—इन दोनों वोरों को यहां कौन रख गया !"

वाहर से अल्लादिया ने राय दी—"वाला भाई, इसके पड़ौसी इस ठाकुर से क्यों न पूछ लें ! यह अपनी दूकान मे मील के पत्थर की तरह जमा वैठा रहता है।"

सोमाल ने कहा—"क्यो नही बैठेगा ? दिन में भी घूट लगा लेता है। सुबह नीलाम से कुछ कटी-छंटी साग-सब्जी, फल-फूल हारे दरजे के ले आता है। बाजार से सस्ता बेचकर दिन काट लेता है, खाने की इसे कुछ परवा नही; पर पीने को चाहिए जरूर !"

बाला ने उसके पास जाकर पूछा—"क्यो ठाकुर, तुमने देखा उसे ?"

"क्यों नही देखा ? देखा, पाडवों के महाभारत की मैं क्या जानूं ? इस जमाने मे जब पहला महाभारत हुआ, तब मेरी मूछें जमने को आ गई थी। तब जाडो की बरफ मे जब हिमाचल की हवा तलवार-सी नाक पर चल जाती थी, वह नगा होकर सिर्फ एक लगोटी पहनकर भात खाता था। उसे बिलकुल जाड़ा नही लगता था। और जब उसका बेटा फ्रांस में लड़ाई जीत-कर घर आया, तो उसने बाप के हाथ पकड़कर रसोई के बाहर एक मेज पर बैठा दिया। सारी छूत-छात सब साफ हो गई ! फिर जो कुछ बचा-खुचा था, वह दूसरे महाभारत में मिट गया। फिर तीसरे महाभारत मे, जो बिना गोले-बारूद के सिर्फ हिन्दुस्तान मे ही हुआ, उसमे हम सब एक हो गए। इनकलाब जिंदाबाद !"

मकान-मालिक चौधरीजी, जो ऊपर बरामदे मे सूरज की तरफ नंगी पीठ किये अपनी कमीज मे की जुए बीन रहे थे, बडी जोर से हंस पड़े।

अल्लादिया बोला—"ठाकुर साहब, तुम न जाने किस बीते हुए वखत मे दूरबीन लगा रहे हो ! हम पूछते है, क्या तुमने थाने की तरफ से इधर आलू के दो बोरे लाते हुए किसीको देखा, अभी कुछ देर पहले—यहा सोमाल भाई की दूकान मे ?"

"अगर उन्हे आना ही था, तो मेरी दूकान में क्यो नहीं आए ? सब्जी तो मैं बेचता हू। यह कबाडी—इसे अपनी दूकान में आलू रखने का क्या हक है ?"

दूकान के भीतर बाला और सोमाल मे बहस तेजी पर चढ़ गई थी। बाला तैश में आ गया और कबाडी का हाथ पकडकर बोला—"चल, मैं तुझे थाने में ले चलूगा।"

"ले जाता क्यों नही, क्या मैं डरता हूं ?"

"थानेवाले सब गवाह हैं, मेरे इन दोनो बोरों के।"

ऊपर से यह सब देख-सुनकर चौधरीजी अपना कुरता पहनते हुए फिर बड़ी जोर से हंसे—"अरे कहां जा रहे हो तुम दोनों, थाने में। मैं यहां तुम्हारा इंसाफ कर देता हूं।"

"चौधरीजी, आपको क्या मालूम है?"

"सोमाल बिचारा बेकसूर है।"

"नहीं चौधरीजी, चोरी का माल खरीदने वाला भी गुनहगार होता है!"

चौधरीजी उठ खड़े हो गए—"न तो यह चोरी का माल है, न इसने खरीदा ही है।"···

"फिर कैसे मेरे ये दोनों भारी बोरे इसकी दूकान में आ गए?"

चौधरीजी सीढ़ियों से नीचे उतर आए। बाला करीब-करीब उनके चरणों तक हाथ ले जाकर बोला—"आप कहां से मेरा संकट सुन रहे थे? भगवान ने भेज दिया आपको! अब आप क्यों इस चोर की चुटिया छुड़ा रहे हैं?"

चौधरीजी ने बाला की पीठ पर आशीर्वाद का हाथ झटकाते हुए कहा—"धीरज रखो, जल्दी न करो! किसी पर चोरी लगा देना इतना आसान है क्या?"

"और मेरी मन-मन-भर की ये दोनों बोरियां थाने से उठाकर इस चढ़ाई में, यहां रख देना सहज है? अजी चौधरी साहब, उन पर एक परदा डाल रखा था, कि देखनेवाले की आंखें भी फूट जाएं। लेकिन मेरे घोड़े और अल्लादिया की जीन की जरूरत से सारा परदा फाश हो गया।"

चौधरीजी हंसते हुए बोले—"नहीं रे, बात कुछ और है! यहां एक ऑल इंडिया दंगल होनेवाला है। कानपुर से दो पहलवान आए हैं। एक का नाम है अमाल, और दूसरे का कमाल। दोनों में थाने के पास, जब वे स्टेडियम से अपनी नाप-तोल जचवाकर आ रहे थे, अपने-अपने बड़प्पन की बहस छिड़ गई। अमाल बोला, 'मेरा नाम 'अ' से है, अंगरेजी में भी 'ए' से; तेरा नाम 'ज' से है, बहुत बाद का हरूफ। मैं पहला हूं!' जमाल बोला, 'तेरा नाम 'ऐन' से क्यों नहीं, मेरा नाम 'जीम' से, बहुत पहले का हरूफ।' दोनों में बहस छिड़ गई।"

इतने ही में अल्लादिया को शक हो गया, वह बोला—"चौधरीजी,

आपने क्या यह अखबार में पढ़ा ?"

"अरे आंखों देखी, कानों सुनी ! मैं अस्पताल से अपने कान में दवा डलवाकर आ रहा था। थाने के पास मैंने उन दोनों की वहस सुन ली।"

बाला बोला—"पर मेरे आलुओं के बोरों से इन पहलवानों का क्या मतलब ?"

"सुनो तो सही ! तभी उन दोनों की नजर दोनों बोरों पर पड़ी। जमाल बोला—अच्छा, इन दोनों बोरों को कंधों पर लादकर हम दोनों इस चढ़ाई पर दौड़ लगावें; जो पहले वाल्डोर्फ होटल के फाटक पर पहुंच जाए, वह बड़ा पहलवान ! दोनों ने वे दोनों बोरे उठा लिए। मैं भी यह तमाशा देखने उनके पीछे-पीछे चला।"

बाला—कुछ समझ में नहीं आई चौधरीजी, आपकी बात।

"सुन भी तो लो ! उन दोनों ने वे दोनों बोरे अपने-अपने कंधों पर चढ़ा लिए, और लगा दी उस चढ़ाई पर दौड़ ! मेरे कान का दर्द अस्पताल की दवा से जो बाकी रह गया था, उनकी दौड़ को देखने में साफ हो गया।"

अल्लादिया ने पूछा—"तुम्हारे साथ-साथ क्या और लोग भी उनका तमाशा देखने दौड़ पड़े ?"

"किसीको क्या पड़ी थी ? सब अपने-अपने धंधों में फंसे थे। बहुतों ने समझ लिया होगा कि कुलियों का भाड़ा बचाने को अपना बोझ खुद ही ढो रहे हैं। मजूरी की जय !"

बाला अब भी कुछ नहीं समझा, बोला—"फिर क्या हुआ ?"

"मल्लीताल की चढ़ाई पर जब उनकी सांस फूलने लगी, तो वे सोमाल की दूकान की इस मैदानी सड़क पर दौड़ गए। दोनों बराबर ही रहे, कोई भी आगे-पीछे होकर पहला-दूसरा न हो सका। तब इस दूकान के आगे खड़े होकर उन्होंने एक और फैसला किया। उन्होंने अब वाल्डोर्फ होटल की बात छोड़ दी, उसका रास्ता ही छूट गया था। जमाल ने कहा—'अब इन बोरों को उचकाकर जो ऊपर इस दूकान में डाल दे, वही बड़ा।' दोनों ने बात मान ली।"

अल्लादिया ने पूछा—"बोरे क्या उन्होंने दूकान में डाल दिए थे ?"

चौधरीजी ने सिर हिलाकर कहा—"हां, डाल दिए, पर उनके बड़े-छोटे

का फैसला फिर भी नहीं हुआ।"

"फिर क्या हुआ?"

"दोनों हाथ मिलाकर चल दिए और बोले, 'हमारा फैसला अब दंगल के मैदान में ही होगा।'"

"कोई नशे में थे क्या दोनों? लेकिन सोमाल भाई, क्या तुम्हें कुछ भी पता नहीं, दूकान में इन दो बोरों का?"

सोमाल कबाड़ी ने सफाई दी—"मैंने समझा मेरी, गैरहाजिरी में कोई मेरी जान-पहचान का रख गया होगा! मैंने उन्हें रास्ते से हटाकर एक तरफ कर दिया।"

चौधरी जी सोमाल की सफाई पर हंसते हुए ऊपर अपनी मंजिल पर चढ़ गए।

अल्लादिया खुश होकर कहने लगा—"बाला भाई, देर सही, पर मामला दुरुस्त हो गया! अब ये आलू के बोरे जावेंगे कहां? घोड़े की काठी तो मैं उतार ही चुका। जीन के सौदे में ये आलू के बोरे आप से आप यहां पहुंच गए। क्यों सोमाल भाई, अब जीन को हमें सौंप देने में तुम्हें क्या हिचकिचाहट है?"

सोमाल के भीतर अब वह तेजी नहीं रही थी। अभी तक वे दोनों पहलवान उसके दिमाग से गए नहीं थे। वह सोच रहा था, आलू के बोझ से क्या खूब उन्होंने अपनी ताकत की जांच की।

अल्लादिया ने फिर उसे चेतना दी—"क्यों सोमाल भाई, अब किस दुविधा में पड़ गए? चोरी का दाग तुम्हारे मुंह पर से पोंछ लिया गया। अब करो जीन का सौदा! दाम जो भी वाजिब हैं, दिये ही जायेंगे। पर अभी नहीं! रुपया इस हाथ मिला नहीं कि फौरन ही दूसरे हाथ तुम्हें दे दिया जाएगा।"

फिर बाला ने टेक लगाई—"बोहनी क्या सिर्फ पैसे की ही होती है? पुराने जमाने में क्या गांव-गांव में सिक्का ही चलता था? अरे चोरी की बदनामी गई; नाम की कमाई क्या कम है?"

इतने में सनकता हुआ वह ठाकुर अपनी दुकान से उतर धमका। झल्लाकर झपटा—"क्यों रे सोमाल, तू जान का पथा।

आलू, बोरी-बोरी क्यों बक रहा है?"

अल्लादिया ने दोनों बोरियां उसे दिखा दीं। अब तो उसका पारा कुछ और ऊपर चढ़ गया। उसने सोमाल का हाथ खींचते हुए कहा—"चल, मैं ले जाऊंगा तुझे थाने में!"

"तू नशे में है। होश की बातें कर!"

"जो नया-नया ही पीता है, वह होता है बेहोश। मैं पच्चीस साल का मरीज, वह तो मेरी दवा है!"

बाला ने उसका हाथ अलग कर कहा—"नहीं-नहीं, इसका कोई कसूर नहीं। आलू मेरे हैं, मुझसे बातें करो!"

"मैं कहता हूं, इसने अपनी दूकान में आलू क्यों रखे हैं?"

अल्लादिया ने बीच-बचाव किया—"ठाकुर साहब, इन्होंने नहीं रखे। वह तो गल्ती से दोनों पहलवान रख गए हैं। चौधरी जी से पूछ लो!"

"अगर चौधरीजी कुछ जानते ही होते, तो क्या लाट साहब के दफ्तर से इतनी जल्दी रिटायर कर दिए गए होते!"

सोमाल ने मकान-मालिक का पक्ष लिया—"उन्होंने खुद इस्तीफा दिया।"

चौधरी ऊपर से सुन रहे थे। कुछ बोले नहीं।

ठाकुर बड़बड़ाया—"पहलवानी का क्या मतलब? क्या आलू खाकर डंड पेले जाते हैं? इस मुल्क में आलू तो ये गोरे लोग ही लाए हैं। अब बताओ, क्या यह यहां से अब कहीं जा सकता है? या लाट साहब के दफ्तर में आलू छीले जा सकते हैं?"

अल्लादिया ने पूछा—"तुम खरीदोगे आलू?"

"तो क्या इस कबाड़ी का है आलू बेचने का काम?"

बाला बोला—"आलू मैं बेच रहा हूं, क्या भाव लोगे?"

"तुम बोलो! माल तुम्हारा है, गरज तुम्हारी है।"

बाला ने कुछ सोचकर कहा—"बाजार में जो थोकभाव बिक रहा हो।"

"तीस रुपया मन है! अगर मैं तीस खरीदूं तो मुझे क्या बचेगा?"

"पच्चीस लो, दो बोरों में तुम्हें दस बच जायेगा।"

"यह कच्चा सौदा है, आलू क्या दो ही दिन में सबका सब बिक जाएगा? बिकने तक, दस-बीस दिन मे आधा सड़ गया तो ? कुछ चूहे घसीट ले गए तो वह किसके सिर पर फूटेगा ?"

"और पाच रुपये कम दे दो !"

ठाकुर कुछ सोचकर बोला—"अच्छा, दे दिये जावेंगे।"

"दे दिये नही जावेंगे, निकालो अभी ! जरूरतमंद हैं, इसीलिए मान लेना पड़ा, निकालो !"

"कहां से निकालूं ? अभी तो मेरे पास जहर पीने को भी कानी कौड़ी नही। रोज की रोज जो बिक्री होगी, उसी में से दूगा।"

"मैं कहां आऊगा रोज के रोज !"

"इस कबाड़ी को देता रहूगा, मैं कही भागने वाला हू ?"

"इन्हींको देने को चाहिए। तुम इन्हें मना लो तो हमें इनकार नही।"

ठाकुर ने सोमाल पर उंगली उठाई—"क्यों रे, तू तो कहता था—मैं कुंजड़ा नही ?"

सोमाल जीन उठाकर अल्लादिया को देते हुए बोला—"मैंने इस जीन का सौदा किया है; इसी के पचास रुपये इनसे एक मुश्त लेता। अब तुम्हारी वजह से मुझे रकम तोड-तोडकर लेनी पडी। लेकिन दस रुपये रोज से कम नही लूगा !"

"दस रुपये रोज का वादा नही कर सकता। कभी पन्द्रह भी हो सकते हैं, कभी पाच भी ! मैं सच कहने का आदी हूं। मानो, चाहे नही !"

"अच्छा लाओ, आज की किस्त भरो !"

'अभी क्या टैम हो गया ? रात को चिराग जलाकर मिलेगा।"

अल्लादिया ने जीन लेकर घोड़े की पीठ पर जमा दी। फिर बोला—"सोमाल बाबू, लगाम कहा है ?"

"सौदा सिर्फ जीन का हुआ है, उसके दाम अलग !"

बाला ने कहा—"नही सोमाल भाई, तुमसे झगड़ा करना नही है, पर जीन के साथ लगाम बिल्कुल जुड़ी हुई है, जैसे घोड़े की पीठ के साथ उसकी पूछ।"

ऊपर से यह सुनकर चौधरीजी हंस पड़े।

ठाकुर भी बडी जोर से हंस पडा—"भौट्ठीक-भौट्ठीक !" अब वह आलू की बोरी खिसकाते हुए वोला—"सोमाल, जरा हाथ लगाकर सहारा क्यों नही देता ?"

वाला ने कहा—"तुम निकालो लगाम । मैं लगा दूंगा बोरों मे हाथ । लेकिन मेरा अंगूठा दुख रहा है।"

अल्लादिया ने घोड़े के मुंह पर लगाम चढ़ाई ही थी कि सडक पर से एक महिला चिल्लाई—"ए घोड़े वाले, चलेगा ?"

"अल्लादिया ने एकाएक इतनी जल्दी अपने सपने को सूरज के उजाले में चमकता हुआ पाया, तो खुश होकर बोला—"चलूंगा क्यों नहीं !"

ठाकुर ने रोक दिया—"अबे चलेगा कैसे ? पहले मुनिसपल्टी में तेरी डॉक्टरी होगी; फीस भरनी पडेगी—फिर तुझे नंबर मिलेगा।"

महिला हिचकिचाकर इधर-उधर दूसरे घोडे को देखने लगी। कोई नजर नहीं आया।

अल्लादिया बोला—"मेम साब, इस ठाकुर का सिर फिरा है; यह ऐसी ही बातें करता है। आपको जाना कहा है ?"

'मेम साब' का सबोधन पाकर महिला उसके निकट चली आई। अपने कंधे पर से कैमरा और दूरबीन के फीते निकालकर अल्लादिया को सौंपती हुई बोली—"स्नोव्यू- !" फिर उसने पीठ फिराकर अपने वैनिटी बैग से छोटा-सा दर्पण निकाला और उसमें अपने मुख के सौन्दर्य का भरोसा प्राप्त किया।

अल्लादिया ने उन दोनो चीजों को अपने कंधे पर लटका लिया—"आना-जाना या सिर्फ पहुचा देना ?"

वाला इस घटना-क्रम को सोचते हुए बिल्कुल मौन रह गया था। काठी निकालकर जीन-लगाम पहना देने से वह पशु अपना वास्तविक शानदार रूप पा गया था। जब उसने आपनी कल्पना में, नाइलन की इन्द्रधनुषी साड़ी में सजी, बॉब्ड बालों वाली नवीना नारी को उस घोड़े पर सवार देखा, तो उस जीव को पुनर्जन्म की मन ही मन बधाई दी और अल्लादिया के भाग्य को सराहा।

महिला उचककर उस घोड़े पर सुशोभित हो गई थी। उसने जवाब में

इतना ही कहा—"अगर घोड़े का स्वभाव ठीक रहा तो चीना पीक तक भी जाऊंगी !".

अल्लादिया समझ गया, यह कोई पुरानी खिलाड़ी है, उमर में नई है तो क्या ! उसने फिर अपनी पहली आमदनी मे लालच नही बढ़ाया।

उसने महिला के हाथ मे घोड़े की लगाम पकड़ा दी। महिला घोड़े की लगाम अपने वश मे समझ खुश हो गई और अल्लादिया उसकी पूछ पकडकर।

उन्हें जाते हुए देखकर वाला चिल्लाया—"क्यों अल्लादिया, मेरा क्या ठिकाना है ?"

"मेम साव को घुमा लाना कम जरूरी नहीं है। मैं अभी घंटे-भर मे वापस आता हूं। तुम तब तक यहीं मेरा इन्तजार करो। फिर साथ ही सौदा-पत्ता लेकर घर को चलेंगे।"

महिला ने अपनी ऊची एडी का एक ठमका लगाया घोडे के पेट पर। कोमल स्पर्श पाकर उस पशु ने दुलकी चाल भरी, और अल्लादिया पूछ पकड़े उसके पीछे-पीछे !

वाला, कबाड़ी की दूकान में पड़ी एक बेंच पर बैठ गया; जेब से बीड़ी का बंडल निकालकर बोला—"दियासलाई है क्या ?"

सोमाल ने इसके उत्तर के बदले मे कहा—"कैसी सगुनिया जीन-लगाम है मेरी ! उसके घोड़े पर रखते ही सवारी आ पहुची।"

"मेरे घोडे का नाम क्यों नही लेते ! जीन तो तुम्हारे कबाड़ मे न जाने कब से धूल खा रही थी।"

"अरे, घोडा भी तो तुम्हारा जनम से बोझा ही ढो रहा था। अच्छा, इस झगड़े को छोड़कर बताओ, घोडा तुमने इसे ठेके पर दे दिया क्या ? दिन-भर की मजूरी मे कौन-सा हिस्सा इसका है और कौन-सा तुम्हारा ? अब मान लो, इसने इस औरत से दस कमाए और तुम्हे दो ही भिड़ाए, तो तुम्हारे पास इससे कहने को कौन-से लफ्ज है ?"

वाला हसकर कहने लगा—"सोमाल बावू, तुम्हे इसकी क्या फिकर है ? अल्लादिया मेरा पक्का पड़ौसी है, आज का नही। इसके दादा और मेरे दादा साथ-साथ, जब नैनीताल खुला ही खुला था, तब वहां ठेकेदारी

करते थे। मेरे बाप को वे सब बंगले याद थे, जिन्हें उसके बाप ने बनवाया था। तब चूने-बजरी, मिट्टी-पत्थर का ही मेल था; इस सीमेंट और सरिये का जोड किसे मालूम था !"

बाला ने एक बीड़ी निकालकर उसे भी दे दी कि दियासलाई के लिए फिर न करना पड़े।

"हां, जब एक मेम ने डगलस डेल की जमीन खरीद ली, तो मेरे बाप को उसकी खेती-पाती का काम सौंप दिया गया और अल्लादिया के अब्बा को खानसामागिरी। इसके बाद मेम का मन कहीं और लग गया। वह सारी जमीन, मय बंगलों के, सरकार ने खरीद ली। मेरे बाप नैनीताल में हेडमाली बना दिए गए, डिक्री साहब के अंडर में। उन्हें फूलों का बडा शौक था। और अब्दुल्ला चले गए बोट हाउस क्लब के हेड खानसामा होकर।"

सोमाल ने अपनी बीडी सुलगाकर उसकी भी जला दी, उसी दियासलाई से—"तो तुम दोनों ही नैनीताल के बाशिंदे हो गए !"

"नहीं भाई, मेम हमको जो छोटे-छोटे खेत झोंपडियां बनाने को दे गई थी, हमने उनका कब्जा नहीं छोडा। वे हमें बख्शीश में मिले थे, हमारे नाम हो गए। हमने उसमें कुछ पास-पडौस की बेनाम जमीन आबाद कर बढ़ा ली। दिन-भर नैनीताल में काम कर हम शाम को गांव लौट जाते; और सूरज के निकलने से पहले ही अपनी-अपनी ड्यूटी संभाल लेते।"

स्नो-व्यू की चढाई पर जाते हुए महिला ने पूछा—"क्यों, अब और कितनी चढाई है ?"

"बस चढाई ही चढाई समझिए ? ऊपर एक जगह थोड़ा-सा मैदान भी है।" अल्लादिया ने महिला की वेश-भूषा, साहस-शौर्य और रंग-ढंग से उसे सिनेमा की एक्ट्रेस समझ लिया था। अपना शक मिटाने को उसने पूछ ही लिया—"आप क्या पार्ट करती हैं ?"

"मैं एक अखबार के दफ्तर में काम करती हूं।"

"तब तो आपको सब खबरें मालूम ही रहती होंगी; कुछ नई भी बना देती होंगी !"

महिला ने चौंककर उसकी ओर देखा। वह अपनी कोई गलती समझ कुछ छोटा पड़ गया।

"वहां से हिमालय दिखाई देगा ?"

अल्लादिया ने उसका कोई जवाब न देकर पूछा—"यह खबर कितनी सच है कि साहब लोग नैनीताल के सारे बगले खाली कर अपने घर चले जावेंगे ? क्या दिल्ली-वम्बई से भी ?"

"उन्हे जाना ही पडेगा ! वे खुद विलायत जावेंगे, और मुसलमान लोग जावेंगे पाकिस्तान को।"

अल्लादिया के हाथ से घोडे को पूछ छूट गई—"क्या मुझे भी पाकिस्तान जाना पड़ेगा, अपनी अम्मा को लेकर ? लेकिन मेरे अब्बा की कब्र जो यहा है !"

"यह जरूरी नही। जो नही जाना चाहेगा, रहे यही !"

"डबलरोटी, छुरी, काटा, कोट, पैंट, टाई, थैंक यू, सर, खाना, लिबास—इन्हे भी जाना पड जाएगा क्या ?"

मेम साव हसकर वोली—"कह तो दिया, जो जाना चाहेगा जावेगा; जो नही, वह रहे यही ! हमारा किसी से भी झगडा नही। हम अहिंसावाले है।"

अल्लादिया ने फिर घोडे की पूछ पकड ली—"तो वोट हाउस क्लब मे पाल के जहाज भी उडते रहेंगे, मेरे वाप की जगह भी जारी रहेगी ! नाच-कूद, खाना-पीना, रगरेलिया, सभी कुछ ?"

"अगर आजादी पाकर दिल छोटा कर लिया, तो फिर क्या मिला हमे ? ये दकीयानूसी छोटे विचार ही हमारी गुलामी है। दुनिया एक होने जा रही है। क्या नाम है तुम्हारा ?"

"मेरा नाम क्या ? नाम तो खुदा का ही है ! मुझे अल्लादिया कहते है। लेकिन मेम साव, स्नो-व्यू मे कौन-सी खवर ढूढने जा रही हैं ? आपके पास यह वढ़िया दूरवीन और फोटो कैमरा भी है।"

"स्नो-व्यू अब कितनी दूर है ?"

"थोड़ा ही और जाना है।"

"मुझे खुशी है, वहा से हिमालय दिखाई देगा। हिमालय में वडे-वड़े साधू भी है ?"

"जंगलों में छिपे हुए साधु-संतों की वात मैं क्या जानूं ? आपकी यह

दूरबीन उन्हें दिखा दे तो दूसरी बात है !'

"यहां पास मे रहनेवाले साधु-सतों को तुम नही जानते ?"

"बस्ती से दूर-दूर एक-दो हैं तो सही ! मगर हमारा उनसे कोई वास्ता नही, इससे कभी उनके पास जाना नही हुआ।"

"मैंने सुना है, यहा एक ऐसे महात्मा हैं, जिन्हे यहां के जंगलो की जडी-बूटियों का पता है, एक जड़ी ऐसी भी मालूम है, जिससे इस बढ़ती हुई आबादी को कम किया जा सकता है।"

"आपका मतलब ?"

"यानी दिन दूनी और रात चौगुनी हो जानेवाली यह आबादी काबू मे आ जाए।"

"पर ये साधू-महात्मा तो बाल भिरमचारी हैं। ये बाल-बच्चे घटाने-बढ़ाने की बात क्या जानें ?"

उसकी यह बात सुनकर मेमसाहब खिलखिलाकर हंस पडी। अल्ला-दिया ने खिसियाकर पूछा—"क्या मुझसे कोई भूल हो गई ?"

"नही, कोई भूल नही ! वे फिर कोई दूसरे महात्मा होंगे। जिन्हें हिंदुस्तान की इस भयानक बीमारी का पता होगा। जरूर उन्होने किसी योगबल से, जगलो मे घूम-फिरकर इस बूटी को ढूढ निकाला होगा।"

अल्लादिया कुछ सोचने लगा। महिला ने घोड़ा रोक दिया। आकाश में बादल फैलते हुए चले आ रहे थे। महिला ने कहा—"बारिश तो नही आएगी ?"

"यहा एक ऐसे है तो सही। महात्मा है या नही, यह मैं नही जानता। लेकिन अकेले-अकेले, दुनिया से कटे-छटे, जगलों मे घूमते रहते हैं। मालूम नही, वे जडी-बूटी ढूढते हैं या कोई और चीज !"

"क्यों, महात्मा क्यों नही हैं ?"

"गेरुआ कपड़ा जो नही पहनते। पर जाड़ों की बर्फ में भी सिर्फ एक खद्दर का कुरता और उसीकी धोती पहने रहते हैं। बडे अजीब ! दुनिया वालों से कोई मतलब नही। इधर ही कही रहते है। ज्यादा वखत अपनी कोठरी मे बंद न जाने कैसी लपस्या करते हैं !"

महिला जोर से हंसी—"लपस्या नही, तपस्या करते होंगे कहो ! अगर

वे तपस्या करते हैं, तो फिर उन्हें महात्मा नहीं कहा जाएगा। महात्मा का कर्म होता है—दिखावा भी नहीं, बोली भी नहीं।"

"हां मेमसाहब, मैं ज्यादा पढ़ा-लिखा नहीं हूं।"

"ज्यादा इम्तहान पास कर लेने से भी कुछ नहीं होता। तजुरबा भी कोई चीज होती है! लोगों से जान-पहचान और देस-परदेस में ठोकरें खाने से भी आदमी की अकल बढ़ती है।"

"देस-परदेस तो घूमने का अभी मौका ही कहां मिला है मुझे! हां, अब इस घोड़े के धंधे में आप जैसी सिनेमा वालियों से बातचीत कर जरूर मेरी अकल बढ़ती रहेगी।"

"हिश्श! मैं सिनेमा की एक्ट्रेस कहां हूं? मैंने तुम्हें बताया नहीं, मैं पत्रकार हूं।"

"तो क्या आपके अखबार में सिनेमा की एक्ट्रेसों की तस्वीरें नहीं छपतीं, पहले ही पेज में?"

बादल कुछ और घनघोर हो गए थे। महिला ने पूछा—"तुम्हारा नाम?"

"अल्लादिया, बता ही चुका हूं! मेरे अब्बा का नाम था अब्दुल्ला। वे बोट हाउस में बड़े खानसामा थे। वहां पहले काले आदमी की परछाईं भी नहीं घुस सकती थी। अब गोरे अगर हिंदुस्तान छोड़कर चले गए तो क्या क्लब के दरवाजे सबके लिए खुल जावेंगे?"

उसकी इस बात का कोई उत्तर न देकर वह महिला अपनी किसी दूसरी विचारधारा में बही जा रही थी। उसने पूछा—"तुम्हें उस महात्मा का घर ठीक नहीं मालूम है?"

"ठीक उनका घर तो मालूम नहीं है, पर रहते हैं यहीं कहीं, स्नो-व्यू के आस-पास।"

"स्नो-व्यू अभी और कितनी दूर है? बादलों ने जोर पकड़ लिया है। अगर बारिश आ गई तो क्या होगा?"

"आप तो किसी मकान के बरामदे में चली जावेंगी, मैं घोड़े को लेकर कहां जाऊंगा?"

"घोड़े के क्या कोई कपड़े भीग रहे हैं?"

"लीजिए, आपने वारिश का नाम लिया, और छोटी-छोटी बूंदें बरसने भी लग गईं।"

"यहां क्या टूरिस्टों के लिए आंधी-पानी से बचने को कोई शेड नहीं बनाया गया है?"

"स्नो-व्यू के टीले पर है तो सही! घोड़े को दौड़ाइए।" अल्लादिया ने घोड़े की टांगों में एक टहनी तोड़कर मारी। घोड़े के दौड़ने से पहले ही बारिश बड़ी-बड़ी बूंदों में बरस पड़ी।

महिला घोड़े की पीठ पर से नीचे कूद गई, और उसने अल्लादिया के कंधे पर से अपनी दूरबीन और फोटो का कैमरा उतार लिया। दौड़कर पास ही के एक बंगले की ओर चली। अल्लादिया भी अपने घोड़े की लगाम पकड़ उसके पीछे-पीछे हो लिया।

महिला उस अस्त-व्यस्त-से बंगले के बरामदे में चली गई। अल्लादिया भी क्या करता? घोड़े को नीचे एक पेड़ के तने छोड़, उसपर से जीन निकाल, खुद भी बरामदे में चढ़ गया। बारिश बढ़ चली।

बरामदे में पैरों की आहट पाकर, भीतर से उसका निवासी बड़ी जोर से चिल्लाया—"कौन है? बिना पूछे क्यों मेरे बंगले में चढ़ आए?"

उसके मुंह से बंगला नाम सुनकर महिला ने अब ध्यानपूर्वक देखा। कभी होगा वह बंगला, पर अब तो वह न जाने कब से बिना देख-भाल के ही पड़ा था। उसकी दीवारों का पलस्तर जगह-जगह उखड़ गया। द्वारों पर कांच तड़क, कहीं तो बिल्कुल नदारद हवा से बचने को जहां गत्ते काटकर जड़ दिए गए थे। बाहर जो फुलवारी थी, वह भी अपनी दशा में दीन-हीन। गुलाब-गुड़हल के जो ठूंठ बचे रह गए थे, वे भी इस बात के साक्षी थे कि वहां कभी रंग भरे सुरभित फूल बहार देते होंगे। एक ओर फाटक की दीवार पर परित्यक्त पड़ी हंसकली की बेल बकरियों से चरी जाने पर भी अपनी पहचान दिखा रही थी।

महिला ने फिर उसके कोसने पर उत्तर दिया—"वर्षा से बचने को चले आए, अभी चल देंगे।"

भीतर से फिर आवाज आई—"कौन? तू कोई औरत है? क्या तुझे मालूम नहीं! तूने मेरे दरवाजे पर चिपका यह नोटिस नहीं पढ़ा?"

"नहीं पढ़ा।"

फिर भीतर से वह बोला—"जान-बूझकर मैं औरतों को नहीं देखता। इसलिए नहीं बता सकता कि तू पढ़ी-लिखी है भी या नहीं?"

"पढ़ी-लिखी तो हूं।"

"फिर पढ़ती क्यों नहीं?"

महिला ने द्वार पर, हाथ का लिखा वह लेख चिपका देख लिया। पास जाकर वह उसे पढ़ने लगी। उसमें लिखा था :

"शहर से दूर इस मकान में एक साधक रहता है। मकान के भीतर आकर किसीको उसके एकांत ध्यान में बाधा डालने की इजाजत नहीं है।"

कुछ देर बाद वह फिर भीतर से चिल्लाया—"क्या नहीं पढ़ा, अभी तक?"

"पढ़ा तो सही! पर घसीट हिंदी अभी पूरी-पूरी समझ में नहीं आई। फिर पढ़ती हूं।"

महिला ने उसे तो क्या पढ़ना था, धीरे-धीरे अल्लादिया से पूछा—"क्यों भाई, यही तो वह महात्मा नहीं है, जिसने इस जंगल में परिवार-नियोजन की जड़ी ढूंढ़ निकाली है?"

अल्लादिया अपना एक हाथ बाहर कर आकाश से गिरते हुए पानी की बूंदों को नाप रहा था, बोला—"मेमसाब, मैं यह नहीं बता सकता।"

"यह औरतों से नफरत करता है, क्या इसके उस जड़ी को ढूंढने की यही वजह तो नहीं है?"

"मैं क्या बताऊं, इनसे ही पूछ लीजिए।"

इस बार भीतर से वह बोला तो नहीं पर उसने एक अलार्म घड़ी की घंटी बजाई। महिला उसका मतलब समझकर बोली—"हां महात्माजी, मैंने आपका लिखा नोटिस तो पढ़ लिया, पर इस मूसलाधार बारिश में मैं जाऊं कहां? मैं नारी जात, बहुत बारीक झिलमिल साड़ी पहने हुए हूं। पानी में वह पारदर्शक हो जाएगी और मेरा सारा भरम मिट जाएगा।"

"और यहां क्या मेरी तपस्या में विघ्न नहीं पड़ जाएगा?"

"बारिश बंद हुई नहीं कि हम चले जावेंगे।"

"तुम्हारे साथ यह दूसरा कौन है?"

"मेरे घोड़े का सईस।"

"इसका नाम ?"

"अल्लादिया।"

"अल्लादिया। अल्लादिया भगाओ, भगाओ, यह नहीं चाहिए मुझे। यह पश्चिम में भगवान को पुकारनेवाला, हिन्दुस्तान के दो टुकड़े करने वाला। भगाओ, भगाओ इसे।"

'पूरब-पश्चिम का भेद हमारे ही मन की भूल है। यहां मे जो पश्चिम है, अमेरिका से क्या वही पूरब नहीं हो जाता ? हिन्दुस्तान के दो टुकड़े— अकेले ही नहीं, दोनों ने मिलकर किये हैं।"

अल्लादिया न जाने क्या सोचकर बोला—"मेम साब, मेरा किराया दे दीजिए, मैं जाता हूं। यही है वह !"

"कौन ? क्या वही महात्मा ?"

"हो सकता है।"

"नहीं, तू कहीं नहीं जावेगा, अभी बारिश हो रही है और मैं भी कैसे अपने होटल में लौटकर जाऊंगी।"

"नहीं, मैं यहां नहीं ठहर सकता। यह दूसरी जातों से नफरत करने वाला, अगर इसने गर्दनिया देकर मुझे बेइज्जती से बाहर निकाल दिया, तो ?"

"कैसे निकालेगा ? अगर यह वही महात्मा है तो मैं इसका सारा सिड़ीपन निकालकर जाऊंगी। तुम घबराओ नहीं, मैंने तुम्हारे लिए एक तरकीब सोच ली है।"

"वह कैसे ?"

"सारा झगड़ा नाम का है ! अरे नाम तो सिर्फ बाहरी बनावट है, सारा झगड़ा इसीका है। भगवान एक ही है, हिन्दुओं का भी और मुसलमानों का भी। इस बोली ने ही उसमें फर्क डाल दिया।"

"अब मुझे याद आ गई। औरतों को भी यह दूसरी जात वाला समझता है।"

"अब तुम अपना नाम भगवानदीन रख लो, इस नाम से तुम्हारा हड्डी-चमड़ा वही रहेगा, हमारी इज्जत रह जाएगी।"

हड्डी-चमड़े का नाम सुनते ही अल्लादिया के मन के भीतर अब्दुल्ला की

वे हड्डियां चमक उठीं, जिन्हें बीनकर वह घर ले गया था। और वह संसार की इस असारता पर चुप हो रहा।

भीतर से फिर वह साधक बोला—"क्यों तुम गए नहीं ?"

"महात्माजी, मैंने अल्लादिया को इसी बारिश मे बर्खास्त कर दिया।"

"पर तेरा क्या होगा ?"

"मैंने पतलून पहन अपनी जात बदल दी।"

"अभी तो तूने कहा था कि झिलमिल साड़ी पहन रखी है ?"

"महात्माजी जब आप नारी को जान-बूझकर देखते ही नही, तो समझ लीजिए मैं कोट-पतलून में ही बोल रही हूं। अगर मुझे आपकी इस सनक का पता होता तो अपने वही कपड़े पहन लाती। मैं हर तरह के कपड़े अपने साथ लाई हू और पहनती भी हूं।"

"क्या तू सिनेमा की एक्ट्रेस है ?"

भगवानदीन ने भी बड़े मजे से उस महिला पर अपनी आखें टिका दी। वह मन में सोचने लगा—"अरे यह सिनेमा की एक्ट्रेस है ? खुदा ने कैसे मेरे सपने खोलकर मेरे सामने रख दिए।"

महिला ने उत्तर मे कहा—"महात्माजी, आप नारी से इतनी दूर क्यों भागते हैं ?"

"वह मेरे ध्यान में बहुत बडी बाधा है।"

"ध्यान की बाधा तो दूसरी होती है। थोड़ी देर बारिश से बचने के लिए जो मैं यहा आ गई—उसको आप क्यों कसूर समझते हैं ? सुन लीजिए, जब तक आप नारी को अपनीसाधना का शत्रु समझते रहेंगे, तब तक आपकी तपस्या कभी पूरी नहीं होगी, क्योंकि नारी नर की पूरक है, चूरक नहीं !"

"क्या खाक पूरक है ! अरे उसीके कारण तो यह भीड़ बढ़ती जा रही है। जहां देखो, बस भीड़ ही भीड़ ! सड़कों और बाजारो में जैसी भीड़ कभी त्योहारों के दिन होती थी, अब वह हर रोज देखने में आती है। यह महंगाई, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार क्या इन सबका सबब नारी ही नही है !"

"आप क्यों इसे नारी का कसूर कहकर खुद बरी हो जाते हैं ? क्या यह नर का ही असंयम नहीं है ? लेकिन मैंने सुना है, इन पहाड़ के जगलों में ऐसी बूटी ढूढ ली गई है, जिसे सूंघने मात्र से इस बढ़ती हुई आबादी पर

लगाई जा सकती है।'

इसका उस महात्मा ने कोई जवाब नहीं दिया। भगवानदीन फिर हाथ बाहर कर बारिश को नाप रहा था।

महिला ने कहा—"महात्माजी,दूरदर्शी लोगों ने अभी से इस बढ़ती हुई आबादी के खतरे को समझ लिया है। उन्होंने भविष्यवाणी की है, अगर अभी इसका उपाय नहीं किया गया तो आजादी से यह आबादी महंगी पड़ जाएगी।"

"तू जो यह राजनीति का ज्ञान खोल रही है; इससे साफ जाहिर है, तू सिनेमा वाली नहीं है। तो फिर कौन है? साफ-साफ बताती क्यों नहीं?"

"महाराज, मैं आपको धोखा क्यों दूं? मैं पत्रकार हूं।"

"तो क्या तुम अपने अखबार के ग्राहक या विज्ञापन बटोरने आई हो?"

"नहीं महाराज, मैं उसमें समाचारों को तरतीब देती हूं।"

"उनमें मनमाना रंग देती हो कि तुम्हारा अखबार ज्यादा बिके?"

"यह छोटी उपलब्धि है। हम जनता का उपकार चाहते हैं। हमने इस आबादी के दानव को एक महामारी की तरह अपने मुल्क में बढ़ते हुए देख लिया है। मैं उसीके लिए यहां आई हूं, और इसे भगवान की देन समझती हूं कि इस वर्षा के कारण मुझे आपके दर्शन हो गये।"

"मेरे दर्शन? नहीं-नहीं, तू मुझे नहीं देखने पावेगी!" कहने को तो कह दिया उन महात्मा ने, पर उनके भीतर उस महिला के दर्शन करने की लालसा जाग उठी। और उनकी यह इच्छा मन में बार-बार जागकर सघन होने लगी।

"आपके दर्शन न सही, पर उस रहस्य को तो मुझे दे दीजिए!"

"रहस्य कैसा?" अब महात्माजी उस महिला से कटे-छंटे नहीं रह सके। दरवाजे के एक टूटे हुए कांच पर जहां उन्होंने एक कागज जड़ रखा था, उसे हटाकर उन्होंने बाहर बरामदे में अपनी आंख दौड़ाई। उस महिला को देखा। और जब उसके हाथों में दूरबीन और कैमरा देखा तो झट से पीछे हट गये।

महिला ने कहा—"महाराज, मैंने सुना है, आपने ही आबादी पर रोक लगा देने वाली बूटी को ढूंढ़ लिया है। मुझे उसको दिखा दीजिए; मैं उसका

फोटो लेकर अपने अखबार मे छाप दूंगी कि जनता भी उसे पहचानकर उससे लाभ उठावे, और सरकार भी उसका संग्रह कर, विना मूल्य प्रजा में बाट-कर इस आवादी के विस्फोट को शात कर दे।"

"मैं इस जड़ी-बूटी की जड़ता को कोई कीमत नही देता। ये बाहरी भोग सब कामना को बढाने वाले हैं। मैं ध्यान के जगत मैं उसे ढूढता हू।"

"नही महाराज, आप मुझे कोई व्यापारी समझकर टाल रहे हैं। जनता की भलाई की इस खोज को आम जनता मे फैलाने दीजिये,विना मूल्य!"

"मेरे किसी दुश्मन ने ही तुझे मेरा पता बता दिया है। बजरगगढ मे किसी बावा के हाथ लग गई होगी वह जडी। यहा क्यो आई तू, उनसे जाकर पूछ! अब यह बरामदा मुझे सात बाल्टी पानी से धोना पडेगा, तब इसकी छूत जावेगी।"

अल्लादिया धीरे-धीरे बोला—"मेम साव, अब तो वारिश थम गई।"

"अच्छी बात है, चलो बजरंगगढ!"

"आप जहां भी कहेगी, वहा चला चलूगा।"

"पाकिस्तान कहू तो?"

अल्लादिया ने अपने कधे पर के झाड़न से जीन पोंछकर रख दी—"वहा जाने का खर्चा क्या मिलेगा सरकार से? वहां घर-मकान, जमीन-जायदाद भी मिलेगी क्या?"

"यहां जो कुछ छोड़ जाओगे, उसके बदले मे कुछ मिलेगा ही। बाकी मुझे कुछ मालूम नही!" कहते हुए महिला घोड़े पर चढ गई। अब उतार ही उतार था। उसने पूछा—"बजरंगगढ कितनी दूर है? क्या बराबर ऐसा उतार ही उतार है?"

"तल्लीताल तक उतार फिर मैदानी सड़क है। होगा कोई यहा से दो-ढाई मील!"

दो मील की लंबाई बहुत अखर गई उस देवी को। उसने घोड़े को एड लगाई और चाल बढा दी।

अल्लादिया उसकी पूछ पकड़े दौड़ते हुआ चिल्लाया—"नहीं, नही मेम साव, उतार में दौड़ाइए नही। कही घोड़े के साथ आप भी गिर गईं, तो क्या होगा?"

"मैं क्यों गिरूंगी, मुझे क्या तुम कोई कच्चा सवार समझते हो?" फिर एक एड़ और लगा दी उसने।

घोड़ा और वह महिला तो नहीं गिरी, हां,पीछे से पूंछ पकड़े अल्लादिया गिर पड़ा। उसके पैर में चोट लग गई। उसको घोड़े की पूंछ छोड़नी पड़ी। वह अपना पैर पकड़कर रो उठा—"मेरे पैर में मोच आ गई मेम साब, आपने यह क्या कर दिया? मुझसे उठा ही नहीं जाता। अब मैं क्या करूं?"

उसका रोना सुनकर देवीजी को घोड़ा लौटाना पड़ा। उसके निकट आ उन्होंने पूछा—"क्यों कैसे लगी?"

"कैसे बताऊं? मेम साहब, मैंने पहले ही आपसे कह दिया था कि घोड़े को दौड़ाइए नहीं। दौड़ाया तब मुझे भी दौड़ना पड़ा और मेरे पैर में मोच आ गई।"

"उठो, जरा देर चलो-फिरो, हड्डी ठीक जगह पर आ जाएगी।"

कराहते हुए अल्लादिया बोला—"नहीं मेम साब, यह पैर तो उठाया ही नहीं जाता।"

"जूता उतारो और जरा ऊपर-नीचे इसपर हाथ फेरो। अभी ठीक हो जाएगा!"

"नहीं-नहीं, जूता कैसे उतारूं?"

"वह तो उतारना ही पड़ेगा। बिना उतारे कैसे काम चलेगा? दिल को मजबूत करो। थोड़ा-बहुत दर्द हो भी तो उसे सह लो। दर्द दूर करने के लिए यह सब किया जा रहा है।"

अल्लादिया ने दोनों जबड़े कसकर एक-दूसरे से मिला लिए, जूता खोल ही डाला और बड़ी दयनीयता से महिला की ओर देखता हुआ बोला—"अब क्या करूं?"

"अब धीरे-धीरे मालिश करो।"

"सूखी मालिश कैसे करू? हाथ की उंगलिया पैर के ऊपर फिसलेंगी क्योंकर?"

"ठहरो, है मेरे पास एक दवा!" महिला ने अपना वैनिटी केस खोला। उसमें से एक ट्यूब निकालते हुए कहा—"लो, हथेली इधर करो।"

ट्यूब में से सफेद लेई की बत्ती बाहर निकलती हुई देखकर वह बोला

—"मेम साब, यह तो दंत मंजन है।"

"दंतमंजन नही है।" हसती हुई महिला ने कहा—"यह मेरे मुंह पर लगाने की छूमंतर क्रीम है, अरे हथेली पर लेकर जरा इसे सूंघो तो, अभी तुम्हारा सारा दर्द साफ हो जायेगा और हड्डी ठीक अपने घर पहुंच जावेगी !"

अल्लादिया को हिचकिचाहट देखकर वह फिर वोली—"घबराओ नहीं, दस रुपये की ट्यूब है तो क्या हुआ ? अब यहा इसके सिवा और चारा ही क्या है ! लो लो सहो, इससे पैर पर तुम्हारा हाथ आसानी से सरक जायेगा और मालिश में मदद हो जाएगी।"

यह सुनते हुए अल्लादिया ने रूखी उंगलिया पैर पर धीरे-धीरे मलनी शुरू की, फिर अपने वायें हाथ की हथेली फैलाकर वह पेस्ट ले लिया।

महिला ने कहा—"घबराते क्यों हो ? लो थोड़ा और भी; तुम्हारी मजूरी में से थोड़े काटी जाएगी इसकी कीमत !"

अल्लादिया ने पहले हथेली नाक पर ले जाकर उसे सूघा। सचमुच उसकी गंध से वह विमोहित हो गया। कुछ क्षण के लिए उसने अपनी मोच की पीड़ा भुला दी।

"क्यों, क्या मेरी बात सही नही ?" महिला ने पूछा।

अल्लादिया ने सिर हिलाते हुए दाहिने हाथ की दोनों उंगलियों में वह पेस्ट लेकर पैर पर मलनी शुरू की। वायुमण्डल मे गंध ने फैलकर उसका ध्यान कुछ क्षण के लिए बंटा दिया, और उंगली शायद जोर से पैर पर रपट गई, वह जोर से चिल्ला उठा—"अम्मा री, मैं तो मर गया !"

महिला को उसकी पीठ पर हाथ रखकर सहारा देना पड़ा—"क्या हो गया खुदादीन ?"

वह रोते हुए वोला—"खुदादीन कहा है मेरा नाम ?"

"माने तो वही हैं—खुदादीन कहो, चाहे भगवानदीन ! अल्ला कह देने से वह जो सबका मालिक है, क्या दूसरा रंग पकडता है—और भगवान कहने से क्या उसकी हस्ती बदल जाती है ? धीरे-धीरे मलते रहो अल्लादिया, अब मैं नहीं भूल सकती तुम्हारा नाम !"

"अब क्या करूं मैं, आदत की मजबूरी है ! इसी नाम को तो

चला आया हू न ! और आप ऐसा कहती हैं।"

"क्या कहू ? मैं कुछ दूसरी ही बात सोच रही थी।" मेम साब ने कैमरा हाथ मे लेकर सामने किया और साड़ी के छोर से उसका लैंस पोछने लगी।

अल्लादिया मालिश करते-करते रुआंसा होकर बोला—"क्या मेरी फोटो खींचेंगी आप ?"

"हां, जरूर खींचूगी ! मैं पत्रकार हू, कार्य के कारण को बड़ी गहराई से सोचती हू। फोटो कैमरा ही क्या, मुझे तो टेपरेकार्डर भी साथ ही रखना चाहिए।"

"मेरी ऐसी दर्द से छटपटाती फोटो क्या आप अपने अखबार में छापेंगी ?"

"कसूर न तुम्हारा है न मेरा, नहीं इस घोड़े का ! सड़क कैसी ऊबड़-खाबड है। बरसात के पानी से सारी मिट्टी बहकर इसमें जगह-जगह गड्ढे हो गए हैं, और ऊपर निकले हुए पत्थरो में ठोकरें पैदा हो गई। क्यों अल्लादिया, ऐसे ही एक पत्थर मे तो तुम्हारा पैर रपटकर मोच खा गया न ?"

"हां देवीजी, ठीक ऐसा ही हुआ !"

अल्लादिया के मुख से एक नया संबोधन पाकर देवीजी खुश होती हुई उसके ऊपर कैमरा का फोकस ठीक करने लगी।

वह अपना मालिश करता हुआ हाथ उनकी ओर बढाता हुआ बोला —"लगड़ाते हुए, ऐसे जमीन पर बैठे हुए फोटो खीचकर क्या करेंगी ? मुझे ठीक होकर जरा उठ जाने दीजिए !"

"पब्लिक को ऐसी ही तस्वीर तो दिखाई जाएगी; तभी तो सड़क की दुर्दशा खुलेगी।" और उन्होंने ने खट् से एक तस्वीर खीच ही ली।

वह कराहता हुआ लगन से मालिश कर रहा था। देवीजी ने पूछा—"क्यों आ गई न हड्डी जगह पर ?"

"आऊ।" अल्लादिया ने उसे कोई भरोसा नहीं दिया।

"कोशिश करो भाई ! उठो, पैर टेको जमीन पर !"

उसने उठने की चेष्टा की। पैर जमीन पर रखा ही था कि फिर धब-

राकर वैठ गया—"अब मैं शाम घर भी कैसे पहुंच सकूगा ?"

देवीजी ने अपने मन में सोचा—"मैं तो होटल पैदल भी पहुच जाऊंगी। लेकिन घोड़े को और इस मरीज को यहां ऐसे ही छोड़कर जाना क्या उचित होगा ?"

अल्लादिया को देवीजी के इस विचार की शायद कोई हवा मिल गई थी, जो उसने कहा—"मेम साव, अगर आप चली गईं तो मेरा क्या होगा ? आज वारिश की वजह से कोई भी सैलानी इस सड़क पर दिखाई दे नहीं रहा है।"

"हां, अगर तुम अंधेरा होने तक भी ऐसे ही बैठे रह गए, तो भाई, तुम तो यहां के वाशिंदा हो, मैं परदेशी, फिर औरत जात, कैसे रात तक तुम्हारा साथ दे सकती हूं ? तुम्हारी पूरी मजूरी के साथ और पांच रुपये तुम्हें इनाम के भी दे जाऊंगी। हां, घोडा भी यही तुम्हारे ही पास छोड़ जाती हूं।"

अल्लादिया उसका मुंह देखता रह गया—"मेम साव, क्या रुपया ही सव कुछ है ? इसान की हमदर्दी की बड़ी कीमत है ! यहां इस सूने जंगल में मैं किसे पुकारू ? कौन मेरी मदद को आवेगा ?"

महिला अपने पर्स मे से पाच-पाच रुपये के दो-तीन नोट निकालते-निकालते रुक गई—"अच्छा, तुम्हारी मदद को मैंने एक बात सोच ली है। तुम घोड़े पर सवार हो जाओ। मैं तुम्हे सभाल-सभालकर ले चलूंगी, और नीचे बाजार मे पहुंचा दूगी। वहा तुम्हारी पहचान का कोई न कोई तुम्हें मिल ही जावेगा।"

अल्लादिया के मुख पर एक रोशनी चमक उठी—"हां मेम साव, आपने यह बहुत बडी बात सोच डाली। पर घोडे पर उचककर बैठ कैसे जाऊ ? पैर न जमीन पर ही टेका जायेगा, न रकाब पर ही !"

"मैं तुम्हारा हाथ पकडकर तुम्हे उठने में सहारा दे दूगी।"

अल्लादिया सिर से पैर तक सकोच के सागर में डूब गया—"मेम साव, आप कैसे मुझे उठा सकेंगी ?"

"अगर इंसान अपनी हिम्मत हारता नही, तो उसकी अकल उसकी मुश्किल हल करने के लिए कोई न कोई रास्ता निकाल ही देती है।"

अल्लादिया उसकी इन बातों को सुनकर साहस से भर गया। वह पैर टेक-टेककर उठने लगा। दर्द ने उसे फिर जमीन पर ही बैठ जाने को विवश किया। वह बैठने लगा ही था कि देवीजी ने फिर उसका उत्साह बढ़ा दिया। वह एक पैर पर खड़ा हो गया। मोच वाला पैर उसने मोड़ लिया।

महिला उसे उठाकर घोड़े पर नहीं बैठा सकती थी। पर वह स्वयम् ही मन मे हारकर फिर भूमि पर बैठ गया।

"अब क्या हो ?" महिला निराश होकर भूमि पर रखी अपनी दूरबीन और कैमरे को उठाती हुई कहने लगी। अचानक उसे नीचे से एक बोरा पीठ पर रखे हुए डोट्याल आता हुआ दिखाई दिया।

डोट्याल जब वहां आया, उसने दर्द में सना अल्लादिया का मुंह देखा। समवेदना से खड़ा हो गया। महिला ने उससे कहा—"एक काम करोगे ?"

डोट्याल ने कोई उत्तर नहीं दिया और अपनी पीठ का बोझ सामने की दीवार पर उतार दिया।

जब डोट्याल महिला के आगे आकर खड़ा हुआ तो उसने कहा—"इस आदमी को उठाकर घोड़े पर चढा सकते हो ? हम तुमको पैसा देगा।"

डोट्याल हंसता हुआ बोला—"यह कितना भारी है ?" फिर उसने अपनी नजर से घोड़े की ऊंचाई नापी।

अल्लादिया चिल्लाया—"नहीं मेम साब, यह कैसे रखेगा मुझे घोड़े पर ?"

"क्यों नहीं रख सकता ? मैं एक मन का बोझ उठाकर तल्लीताल से इस चढाई पर बराबर ला रहा हूं। तुम क्या इस बोरे से भी भारी हो ?" डोट्याल अल्लादिया को पकड़कर उठाने लगा।

अल्लादिया ने उसके हाथ अलग करते हुए कहा—"ठहर जा। घोड़े को तू इसकी लगाम पकडकर जमीन पर बिठा सकता है ?"

"हां, बिठा दूंगा।" डोट्याल ने यह कहकर लगाम पकड़ ली। घोड़ा समझदार था। उसने लगाम की खींच में डोट्याल का मतलब समझ लिया और सड़क के एक किनारे बैठ गया।

महिला अब कठिनाई से उबरकर प्रसन्न हो गई। अल्लादिया डोट्याल का हाथ पकड़कर एक पैर से खड़ा हो गया। फिर उसी पैर को सरकाता हुआ घोड़े के पास तक चला गया। अब उसका साहस बढ़ा। उसने डोट्याल का सहारा पाकर घोड़े पर सवारी कर ली। दोनों पैर घोड़े के दोनों ओर कर लिए। एक पैर में रकाव भी पहन ली, पर चोट खाया पैर वैसे ही लटकता रहा। अल्लादिया ने लगाम पकड़ ली। और घोड़ा चला उसका इशारा पाकर।

अब अल्लादिया हो गया मेम साब की जगह पर और मेम साब अल्लादिया के पैरों पर। सहसा उसे डोट्याल को पारिश्रमिक देने की याद आई। उसने बटुवा निकाल जो पीछे को देखा, तो डोट्याल अपना बोरा पीठ पर लादकर चढ़ाई पर हो गया था।

महिला ने पुकारा—"डोट्याल !"

उसने उत्तर देनेका लालच छोड़ दिया। उसकी पीठ का बोझ भारी था।

वाला अस्पताल में अगूठे मे दवा लगाने चला गया था। जब बारिश होने लगी तो सोमाल कबाड़ी की दूकान में जाकर जम गया। वहां कुछ समय गप्पें लड़ा, बीड़ी पीकर और अखबार में काट दिया। जब बारिश बंद हो गई तो नीचे मैदान की ओर चला गया। वहा फुहारे के पास पाडार के पेड़ के नीचे पड़ी एक लोहे की बेंच पर बैठ गया।

कुछ समय बाद जब उसने अपने घोड़े को लौटता हुआ पाया, तो उस दृश्य को देखकर चकित हो गया। मेम साब पैदल-मैदल और अल्लादिया घोड़े पर !

चिंता में उठकर वह घोड़े तक बढ़ा। अल्लादिया बोला—"लो, तुम यहां बैठे हो? हम तुम्हें न जाने कहा-कहां ढूढ़ आए। तुम्हें सोमाल की दूकान मे ही हमारी राह देखनी थी।"

वाला ने चिंता में भरकर पूछा—"क्या तुम किसी गड्ढे में गिर पड़े? कितनी चोट लगी, कहा-कहा?"

"बड़ी असगुनिया जीन निकली यह। इसे लौटा देना पड़ेगा।"

वाला ने हाथ जोडकर महिला को देखा—"क्या घोडा कहीं बिदका तो नहीं? आपके तो कोई चोट नहीं लगी?"

"नहीं, मेरे कोई चोट नहीं, इसीके पैर में मोच आई। अच्छा, मैं अब अपने होटल के पास आ गई, लो अल्लादिया !" उसने पांच-पांच के तीन नोट उसकी ओर बढ़ाए।

अल्लादिया बोला—"इन्हीको दे दीजिए।"

बाला तीनो नोट सभालकर मन में सोचने लगा— "बोहनी तो अच्छी हुई है, फिर जीन को क्यो कोस रहा है यह ?"

महिला होटल की ओर जाने लगी। अल्लादिया घोड़े पर चढ़ा-चढा बोला—"मेम साब, सलाम ! कसूर की माफी चाहता हू।"

बाला ने भी उसे हाथ जोड़कर अल्लादिया से पूछा—"क्यों, कैसी है मोच ?"

इसका कोई जवाब न देकर उसने ऐसे ही कह दिया—"मेम साब अखबार चलाती हैं। मुझसे कह गईं कि पाकिस्तान बहुत बढ़िया जगह है। अगर तुम घोड़े का धधा करोगे तो वहा ऐसी ऊबड़-खाबड़, चढ़ाई-उतराई की सड़कें नही है। साफ चौरस, और गिरने-रपटने का कोई खतरा ही नहीं। इसके ऊपर मजूरी चौगुनी !"

"अरे भाई, सब हवा ही हवा है ! जिस जनम भूमि की मिट्टी से तुम बने हो, वह दूर देश की मिट्टी तुम्हें कब हजम होगी। हमारा भी तो खयाल करो ! ऊचा-नीचा कहा नही है ?"

"अच्छा, वह जो होगा, देखा जाएगा। इस वखत अब मेरा इन्तजाम क्या है ?"

"जैसा कहो !"

"सोमाल की जीन-लगाम लौटाकर सीधे घर को चलो। गाव में देखा जाएगा पैर।"

सोमाल कबाडी की दूकान पर पहुचकर अल्लादिया बोला—"बाला भाई, अब मुझे जरा सहारा देकर इस घोड़े से नीचे उतार दो, और जीन-लगाम खोलकर फिर इसपर काठी जमा दो।"

"अल्लादिया, क्या तू पागल हो गया है ? दो-चार दिन में ही तेरा पैर ठीक हो जाएगा। क्या तू हमेशा के लिए लगडा हो गया है कि घोड़े के पीछे न दौड़ सकेगा ? इसपर फिर काठी रख देना मुझे मंजूर नहीं। मुझे ठाकुर से

तोड़-तोड़कर आलुओं की कीमत वसूल कर लेने में भी कोई एतराज नहीं। लेकिन मुझे डर है, बोट हाउस क्लब से तुझे जो दो-चार सौ रुपया अब्बा की हड्डियों की कीमत का मिलेगा, वह तू सबका सब सिगरेट-सिनेमा में फूंक देगा!"

"नहीं वाला भाई, मैं यह सबका सब रुपया तुम्हारे नाम से डाकखाने में जमा कर दूंगा।"

"मेरे नाम से करने को क्या हो गया तुझे, क्या तू कोई नाबालिग है?

"अच्छा वाला भाई, यह जो पाकिस्तान की बम्नी का रास्ता बन रहा है, यह बस से तय होगा या रेल से? या कोई पैदल ही जाना चाहे तो कितने दिन में पहुंच जाएगा?"

"वह क्या किसी एक शहर का नाम है? पूरा ही एक सूबा पश्चिम में, एक पूरब में।"

"यह भी मान लिया। वहां जाने का क्या खर्चा मिलेगा, सरकार से?"

"मैं तेरे इस सवाल का क्या जवाब दूं? मुझे क्या कहीं जाना है? भगवान् ने जिस जगह पैदा किया है, उसीमें जनम काट देना है। तू कहेगा, फिर पाकिस्तान क्यों पैदा हुआ? अगर मैं यह कहूं कि कुछ बड़े दिमाग वालों की ऊंची-ऊंची कुर्सियों में बैठने की हवस का ही नतीजा है, तो क्या मैं झूठ बोलूंगा?"

"तो क्या मैं बोलूंगा झूठ, जब यह कहूंगा कि क्लब से मिलनेवाले सारे रुपयों से मैं अपनी जमीन में सेब और संतरे के पेड़ लगाऊंगा। ये बढ़िया फल हैं। अमरूद के पेड़ों से क्या आमदनी होती है!"

"तेरी यहीं पर अक्ल खुल गई? उस जमीन की ऊंचाई और आबहवा में क्या सेब और संतरे की खेती कभी हो सकती है?"

अल्लादिया सोमाल की दूकान के भीतर दूर तक नजर डालकर बोला—"इस कबाड़ी का तो कहीं पता ही नहीं! अगर शाम तक भी नहीं आया तो क्या होगा?"

वाला ने ठाकुर के पास जाकर पूछा—"क्यों, यह सोमाल बाबू कहां गए हैं?"

ठाकुर आधे-आधे ध्यान में था, रासवती के। अपनी झूम तोड़कर

बोला—"मैं क्या जानूं, कौन कहां है? उनका रास्ता अलग, मेरा ठिकाना दूर! वात मत करो भाई, इस वखत!'

अल्लादिया घोड़े की पीठ पर से कहने लगा—"वाला भाई, मुझे जमीन पर उतारकर, यह जीन-लगाम खोल, उसकी दूकान में रख जाते हैं। इस ठाकुर को समझा देंगे। फिर कल आकर सारी वातें हो जावेंगी।"

"अपने पैर की तो कहो!"

"ठीक हो जाएगा, एक-दो दिन में।"

"तो क्या अपने इरादे वदल नही सकते?"

"नही, जीन के वदले इसकी पीठ पर काठी रखनी ही पड़ेगी!"

इतने मे सोमाल आ गया। अल्लादिया खुद ही उतरने लगा था। उसकी कठिन हालत देखकर सोमाल ने पूछा—"क्यों, क्या वात हो गई?"

वाला ने उसे सहारा देकर नीचे उतार दिया।

"हां सोमाल वावू, यह जीन इस घोड़े पर ठीक फिट नही होती।"

उसे लगड़ाता देखकर सोमाल बोला—"क्या गिर पड़े तुम? नये ही नये घुड़सवार हो! घोड़े और जीन का कसूर वतलाते हो।"

"कुछ भी हो भाई, यह जीन वापस रख लो!"

"क्यों?"

उसने धीरे से उसके कान में कहा—"मैं पाकिस्तान चला जाऊंगा।"

'क्यो?"

"फिर आकर तुम्हे वता जाऊंगा। इस समय इनके सामने इसकी वात ही नहीं करनी है।"

वाला ने भी किसी और दिशा मे सोच लिया था, और अल्लादिया से बहस करने की जरूरत नहीं समझी। उसने जीन-लगाम उठाकर सोमाल की मेज पर रख दी और वोला—"सोमाल वावू, रख लो इस जीन को।"

"क्यों, क्या वात हो गई?"

"मेरी मर्जी, मैं अपना घोड़ा नही दूंगा इसे।"

"क्यो? वेशऊर है क्या?"

"हां! आज अपना पैर तोड लाया, पहले ही दिन। कल कहीं चीना पीक से नीचे लुढक पड़ा तो मैं इसकी मां को क्या जवाब दूंगा?" कहता

हुआ बाला चला गया। उसने काठी उठाकर फिर अपने घोड़े पर जमा दी।

सोमाल ने जब बाला के मुख से जीन को वापस करने का दूसरा कारण सुना, तो वह चुप हो रहा। उसने अल्लादिया का मतभेद अपनी जेब में रख लिया।

बाला ने फिर उसकेपास आकर कहा—"मेरे आलूओं का क्या होगा?"

"ठाकुर ने मुझे क्या अभी कोई पैसा दिया है? अपने आलू उठा ले जाओ, उसकी दूकान से।"

अल्लादिया रोनी आवाज में कहने लगा—"मैं फिर अपने घर कैसे पहुंचूगा?"

बाला ने सोमाल से कहा—"यहां कोई मालिश करने वाला नहीं है, नजदीक में, जो इसकी हड्डी जगह पर जमा दे?"

"नहीं बाला भाई, कोई जरूरत नहीं है। सीधे घर चले चलो!" अल्लादिया इस बार अपनी मोच को भूलकर खाट से उठा, और उस पैर को सभालता हुआ घोड़े की काठी पकडकर उसपर चढने को तैयार हो गया।

बाला उसके यह रंग देखकर दंग रह गया—"अरे ठहर तो सही! मेरे आलू के दोनों बोरे क्या खटाई में पड़ जावेंगे?"

ठाकुर अपनी नीद से बाहर होकर बोला—"अबे तो तेरे अगर दस बोरे भी हैं तो क्या ठाकुर उन्हे मार जावेगा? ठाकुर में कुछ खोट है क्या? क्या मैं कोई खोटा सिक्का चलाता हूं या किसीकी जेब काटता हूं? लेना है तो लो, नहीं तो घर को जाओ!"

"तुम बिल्कुल सच कह रहे हो ठाकुर, पर अब तुम्हें आलुओं की कीमत सोमाल बाबू को देनी नहीं है।"

"वाह क्यों नही दूगा? जो जुबान हो गई, बस हो गई,! हर मंगल को दूगा, वह भी बत्ती जलने के बाद। पांच, दस या बीस, जो भी हो सकेगा दूगा!"

"पर अब हमने उनकी जीन लौटा दी है। वह देख लो, सामने घोड़े पर फिर काठी रख दी है।"

"अरे तो मेरे देने में क्या फरक पड़ता है? इसे नहीं दी, मुझे दू"

"लेकिन मैं हर मंगल को तुम्हारे पास नहीं आ सकता। एक

आऊगा।"

"एक महीने तक हर मगल का पैसा मेरी जेब मे ठहरा नही रह सकता। मंगल-मगल को हर मंगल को, मैं इस पुराने दस्तूर को तोड़ नही सकता!"

"अच्छा, तुम हर मगल को सोमाल बाबू के पास हमारी किस्त जमा करते रहना। क्यों सोमाल बाबू?"

सोमाल यह सब सुन रहा था, अपनी दूकान से उसने सहमति में सिर हिला दिया।

ठाकुर हसते हुए बोला, "तो जीन फिर घोड़े पर जमा देने की ठानी है?"

अल्लादिया घोड़े को दूकान के पास ले आया। दूकान की ऊंचाई पर जाकर घोड़े पर चढ गया और चल दिया।

बाला उसकी बेसब्री पर बोला—"अरे ठहर तो सही! अगर घोड़े पर से गिर पड़ा, फिर मोच के बदले हड्डी टूट गयी तो?"

"नही, अब सब ठीक हो गया। घर पहुंचते-पहुंचते रात नही कर देनी है।"

बाला ने सोमाल को हाथ जोड़ते हुए कहा—"अच्छा सोमाल बाबू, हर मंगल को मेरे रुपए जमा करना मत भूलना!"

सोमाल इशारे से बाला को अपने निकट बुलाकर फुसफुसाया—"अरे यह तेरा घोड़ा लेकर तो पाकिस्तान नही जा रहा है?"

"जाएगा भी तो घोड़े पर चढ़कर कितने दिन मे पहुंचेगा? अच्छा सोमाल बाबू, हर मगल का ध्यान रखना! जै राम जी की!" बाला ने दौड़कर अल्लादिया को घोड़े पर पकड़ लिया। तल्लीताल में चाय पीकर और कुछ सौदा-पत्ता खरीदकर वे लोग दिन डूबते-डूबते अपने गांव पहुंच गए। अपने घर के पास घोड़े से उतरते हुए उसने कहा—"अब मेरा पैर बिल्कुल ठीक हो गया है। अम्मा से यह सब कहने की कोई जरूरत नही है। फिर वह मुझे घर से बाहर कहीं जाने ही नही देगी।"

"क्या तेरा उन्हें यहीं छोड़ पाकिस्तान जाने का तो इरादा नही है?"

"जाऊंगा भी तो क्या तुम्हारी राय लिये बिना ही?"

"अम्मा को क्या यहीं छोड़कर?"

इसका उसने कोई जवाब नही दिया, और सीधा हमीदा को ढूढ़ना

हुआ खेतों पर निकल गया। हमीदा अपनी एक मुर्गी को पकड़ती इधर-उधर फिर रही थी।

ऊपर से ही वह चिल्लाया—"अम्मा, मैं आ गया।"

हमीदा मुर्गी को पकड़ उसके पास चली आई। बड़ी आशा में उसने पूछा—"लाट साहब ने क्या कहा?"

उसने घोड़े के सौदे की ओर अपने पैर के मोच की सारी बातें गोल कर दी। बोला—"लाट साहब तो जरूरी इंतजाम के लिए लखनऊ चले गये, लेकिन मेरा हिसाब-किताब करना नहीं भूले। दफ्तर में लिख-पढ़कर गए हैं। दो-तीन सौ रुपया जमा होकर मुआवजे का मुझे मिल जायेगा।"

बहुत निराश होकर हमीदा बोली—"बस? सिर्फ दो ही सौ रुपया, तेरे अब्बा की जन्म-भर की खिदमत का सौदा?"

"रुपया बढ़ने में आया तो क्या कहीं देर लगाता है? मैं सोच रहा था, गांव में एक होटल खोलने की बात। उसमें खासी आमदनी होती। लेकिन मेरी दूकान में कोई चाय पीने ही नहीं आएगा। इसलिए किराने की दूकान खोलना ठीक है। उसके साथ साग-सब्जी भी और फल-फूल भी। ये तो हमारी जमीन में उपजते ही हैं!"

हमीदा इस बात पर बिल्कुल राजी न होकर बोली—"तेरे यार-दोस्त दूकान का सारा सौदा-पत्ता ऐसे ही उधार में उधेड़कर खा-पीकर बराबर कर देंगे।"

माता की इस सीख का उसने कुछ भी बुरा नहीं माना, क्योंकि दूकान खोलने की उसके मन में कोई योजना ही नहीं थी। उसके मन में तो पाकिस्तान ने चिराग जला रखा था।

दूसरे दिन बाला घोड़े को लेकर माल ढोने हल्द्वानी चला गया। जाते समय उसने कहा—"देखो अल्लादिया, अब तुम्हारे तुम ही हो अपने। तुम्हें सोच-समझकर काम करना है। अपनी ही जिद का काम हमेशा बढ़िया नहीं होता। दो-चार समझदार आदमियों की राय से जो काम किया जाता है, वह ठीक ही होता है।"

मालूम नहीं, इस नसीहत का उसने कितनी दूर तक पीछा किया चार दिन बाद उसका पैर ठीक हो गया और वह अपना रुपया वसूल कर

को नैनीताल बोट हाउस क्लब मे जा पहुचा।

क्लब के बाबू के आने मे अभी कुछ देर थी, तब तक वह अपने बाप के साथी-संगियों के साथ अपने आगे के प्रोग्राम पर बहस करने लगा।

एक अधेड़ उमर के खानसामा ने कहा—"क्या गांव वाले तुम्हें लाठी मारकर भगा रहे है?"

अल्लादिया ने कहा—"नही।"

"तो क्या वहा से तुझे कोई बुला रहा है?"

"नही, ऐसा भी नही है।"

"तो फिर अपने बसे-बसाए घर और जमी-जमाई खेती-पाती को छोड़, तेरे सिर पर कौन-सा पहाड़ खडा हो गया है, जिसे हल्का करने तू उस परदेस को जा रहा है?"

अल्लादिया ने उस बूढ़े की दकियानूसी बातो को ठोकर मार दी। एक छोटा खानसामा अडे उबाल रहा था, उससे जाकर बोला—"भैया सलाम! जन्म-भर अडे उबालते और छीलते ही रहोगे? जिंदगी में कुछ और ऊपर उठने का हौसला ही नही? तुम अधे कुए के मेंढक न सही, इस खुले तालाब की मछली हो, और किसी दिन कोई अपने काटे में मरा केंचुआ बाधे, तुम्हारी गर्दन फसा, तुम्हे हवा मे तड़फा देगा!"

"ज्यादा बको नही! मैं समझ गया तेरी बात। छीलू अंडा तेरे लिए?"

"मैं तुमसे सोने के अडे की बात कह रहा हू, और तू इस मुर्गी के अडे में पड़ा है।"

"हां-हां, चलूगा तो कह रहा हू। पहले राह-खर्च का तो इंतजाम कर। तू तो अकेले दम है। मैं तो बाल-बच्चे वाला हू।"

इतने मे वही बूढ़ा खानसामा वहां आकर बोला—"अरे, तू यहा बक-वास में पड गया? सेक्रेटरी साहब आ गए। सबसे पहले उनके कानो मे अपनी जरूरत गिड़गिड़ा दे। नही तो फिर कोई और फाइल खुल गई तो तू टापता ही रह जाएगा!"

अल्लादिया झट से रोनी सूरत बनाकर सेक्रेटरी साहब के पास जा पहुचा और रोते हुए बोला—"सरकार मेरे सिर का सहारा उड़ गया। अब मैं कैसे दिन काटू?"

उन्होंने उसे एक चेक देते हुए कहा—"लो, यह तीन सौ रुपये हम लोगों ने तुम्हारे लिए जमा किए है। तुम्हे दस्तखत करना आता है?"

"जी हा!" फिर वह रोता हुआ बोला—"अब आगे मैं अपनी पढाई कैसे कर सकूगा?"

"बैंक से यह रुपया लेकर तुम पाकिस्तान चले जाओ।"

"हुजूर, ये सिर्फ तीन सौ रुपये लेकर कैसे चला जाऊंगा! मेरी बुढ़िया मा है। वहा बिना जम-जमाव किये उसे कैसे ले जा सकता हू? उसके यहां रहने का खर्चा देना पड़ेगा। फिर मुझे अपने अब्बा की कब्र भी तो वही ले जानी पड़ेगी।"

"अच्छा, हम एक सौ रुपये का चेक तुम्हे और लिख देते हैं। फिर हम लाट साहब से भी तुम्हारी सिफारिश कर देंगे, कि तुम्हे और सरकारी मदद मिल जाए, पाकिस्तान जाने के लिए।"

दोनों चेक जेब में रख वह सीधा बैंक जा पहुंचा। वहां उन्हें भुनाकर उसने चार सौ रुपयों की गड्डी भीतरी जेब में रख ली और पाकिस्तान जाने के सपने में रंग भरता हुआ सीधे गाव जा पहुचा।

बाला बनजारा हल्द्वानी से सामान लाने गया था। अभी लौटा या नहीं सबसे पहले उसीको देखने गया।

किसनी हाथ में लग्गी लिये उचक-उचककर, गाम के खेत में दाड़मी के पेड़ पर फंसी एक बेल पर से तोरई तोड़ रही थी। पर वह उसके हाथ ही नहीं आई।

अल्लादिया ने वहां पहुंचकर कहा—"लाओ मैं तोड़ दू।"

किसनी ने छाती पर का आंचल संभालते हुए धीरे से लग्गी भूमि पर रख दी। अल्लादिया ने एक ही कोशिश में तोरई लग्गी में लपेटकर बेल से छुड़ा, खेत में गिरा दी। किसनी उसे उठा लाई और बिना पूछे ही बोली—"नही,अभी नहीं लौटे वे, हल्द्वानी में।"

अल्लादिया कुछ निराश होकर जाने लगा तो वह बोली—"कभी रे आए नैनीताल में? कितने?"

"हां भौजी, आया तो हू।" मगर कोई संतोष नही चमका ...

पर।

"देखो, अम्मा का एक सहारा सिर्फ तुम ही हो। दिन-भर वह तुम्हारे ही लिए जी-तोड मेहनत करती है ! अब उनकी कितने दिन की जिंदगी है। तुम्हे उनकी सेवा में लगा रहना चाहिए। मेरी समझ में, जो भी टका-पैसा तुम लाए हो, सब उन्हीको सौप दो। तुम्हारे ही काम आएगा !"

हसता हुआ वह बोला—"अब तुम्हे क्या बता दू, उनके पास बहुत रुपया जमा है। न जाने कहा गड्ढो मे छिपा रखा है ! इस रुपये को भी उनके हवाले कर दू—किसी बद हवा मे घुटकर रह जाने को ? रुपये का किसी धधे मे लगा रहना ही ठीक है ! मैं यहा कोई दूकान खोलना चाहता हूं।"

"लेकिन तुम्हारी अकल अभी किसी एक बात पर जमी नही जान पडती। तुमने घोडा लेकर फिर लौटा क्यो दिया ?"

"गरीबो की मदद करने वाले लोग कम है, उनका दिल तोडने वाले बहुत ज्यादा।"

"उन्होने क्या अपना घोड़ा देकर तुम्हारी मदद नही की ? जब तुम घोड़े पर से नही गिरे, तो तुमने उसे असगुनिया क्यों समझ लिया ?"

उसी समय रास्ते मे खटाखट बजती हुई घोड़े की टापो में बाला का आना प्रकट हो गया। अल्लादिया फौरन उसकी ओर दौड़ पड़ा—"तुम खूब आए बाला भाई !"

"रुपया कितना लाए, बलब से ?"

"हा, उसीका लेखा-जोखा करने तुम्हे खोज रहा था।"

"चलो तुम, मैं आ जाऊगा तुम्हारे पास। घोड़े का सामान उतारकर रख दू, मैं भी तरोताजा हो जाऊं। तभी तो ठीक-ठीक तुम्हारी बात सुनूगा।"

अल्लादिया हमीदा के पास जाकर उसे समझाने-बुझाने लगा, और उधर किसनी ने बाला के कान भर दिए।

अल्लादिया के आंगन के बाहर अमरूद के पेड़ के चारो ओर चबूतरा था, वहा खडे होकर बाला ने उसे पुकारा।

अल्लादिया बाहर आया। बाला का हाथ पकड़ उसे बिठाते हुए बोला—"बैठो तो सही, बहुत-सी बातें कहनी-सुननी है।"

बाला बैठने को तैयार नही हुआ—"क्या बातें सुनू तेरी ? अरे, जिस बेदर्द के भीतर अपनी अम्मा की ममता नहीं, वह हमसे क्या वास्ता

रखेगा ? क्या सुनूं उसकी और कहूं क्या उससे !"

अल्लादिया ने हाथ पकड़कर जबर्दस्ती उसे चबूतरे पर बैठा दिया—"देखो भैया, न तो तुमने और न मैंने ही यह किया है। हमारे समझदार लीडरों की राय से ही तो हिन्दुस्तान दो हिस्सों में बंटा है !"

"नक्शे में एक लाइन खींचकर वे दोनों क्या अलग-अलग काट दिए जा सकते हैं ? फिर तुम यहां से टूटकर वहां जा रहे हो ?"

"भाई, तुम्हारा कहना बिल्कुल सही है। लेकिन जब हमारे बड़े लोगों ने वह जगह बना ही दी है, तो हमारे जैसे छोटे लोगों को उसे बसाना नहीं चाहिए ?"

"जावें वे जिनका यहां कोई ठौर-ठिकाना नहीं ! तुम्हारा यहां जो यह घर-मकान, खेती-बाड़ी, फलों के पेड़, सब्जी की क्यारियां, गाय-बकरी-मुर्गियां हैं—इनका क्या होगा ?"

"हां, मैंने इसके लिए भी पूछताछ की है, अगर तुम किसी अफसर से मेरी यहां की जायदाद का कागज लिखाकर दे दोगे, तो वहां मुझे उसी हिसाब से मिल जाएगा।"

"और तुम्हारी यहां की यह जमीन किसकी हो जाएगी ?"

अल्लादिया ने बहुत धीरे से बाला के कान में कहा—"अगर मुझे वहां रहने को मकान और नौकरी या खेती करने को जमीन मिल गई, तो बाला भाई, मैं तुम्हें यहां की जमीन सौंप जाऊंगा।"

यह सुनते ही बाला की खोपड़ी में किसनी के बार-बार कहे हुए वे लफ्ज गूंज उठे, कि अगर उसके पास अल्लादिया के बराबर जमीन बिल्कुल नहर से सटी होती तो वह अकेली उसमें इतनी आमदनी दिखा देती कि बाला को घोड़ा लेकर देश-विदेस मारे-मारे फिरने की जरूरत ही न रहती।

लेकिन बाला बनजारे ने अपने उस-लालच पर लात मार दी और बोला—"अल्लादिया, ये दूर के ढोल बड़े सुहावने लगते हैं। इस चुपड़ी का लालच न कर ! तुझे जो भी रुपया मिला है, इसे गांव की दूकान में लगा। सुना है, अब यहां मोटर रोड आवेगी, स्कूल खुलेगा, बिजली आवेगी। सरकार अस्पताल और डाकखाना भी खोल देगी। अगर तू अच्छी तरह से तो तेरी दूकान चल पड़ेगी। कोई भी तुझे अपनी लड़की दे देगा; ...

आदमियों में गिनती हो जाएगी।"

"तीन-चार सौ रुपये में क्या दूकान खुलेगी? दूकान का सही नक्शा बनाने को, इसे नये सिरे से पक्का और खूबसूरत बनाना होगा। दूकान की सजावट के लिए रंग-रोगन, फरनीचर और सामान रखने को अल्मारी-संदूक बनाने होंगे।"

"पहले कोई छोटी पूंजी की दूकान खोल ले, फिर धीरे-धीरे बढ़ाये जाना।"

"छोटी पूंजी की दूकान चाय और पान की ही हो सकती है। मेरी दूकान में चाय और पान खाने कौन आवेगा? मुल्क के दो टुकड़े होने का एक खास सबब यह भी नहीं है क्या? यह छूत-छात?"

"अल्लादिया, मैं आऊंगा तेरी दूकान में, और अपने साथियों को भी लाऊंगा। फिर हमारी देखा-देखी कौन नहीं आवेगा? हम पाप की छूत मानेंगे, इंसान की नहीं!"

"यह सब कहने की बातें हैं, असल में बात कुछ और होती है। मुझे जाना ही है—आज नहीं तो कल-परसों!"

"अम्मा से भी पूछ लिया? वे तुम्हारे साथ जाने को तैयार भी हैं क्या?"

"अभी तो उनसे इस बात का जिकर ही नहीं करना है। मैं वहां जाकर अपना ठौर-ठिकाना तय कर आऊंगा, गुजर-बसर के लिए कोई धंधा पा जाऊंगा तभी तो! क्यों यह सुनहरा मौका छोड़ दिया जाए? तुम अम्मा से अभी इसकी बात न करना!"

"वे अकेली यहां तुम्हारे लौट आने तक कैसे अपने दिन काटेंगी?"

"अरे तुम लोग इतने भलेमानुस हो, तुम्हारा विश्वास है मुझे! लो, मैं तुम्हें ये एक सौ रुपये दे जाता हूं। अम्मा अपने खाने-पीने लायक सभी कुछ जमीन से उपजा लेती हैं। अकेली दम, खाती ही क्या हैं वह! कुछ कपड़ा, नमक-तेल की जरूरत पड़ेगी, तुम ला देना हल्द्वानी से।"

"नहीं भाई, मुझे इस सफट में न डालो! तुम्हारी अम्मा समझेंगी, उनकी जमीन झटकने के लिए ही हमने तुम्हें पाकिस्तान का रास्ता सुझाया है।" बाला ने रुपया लेने से साफ इनकार कर दिया। वह जबर्दस्ती करने

लगा तो उठकर सीधे अपने घर चला गया।

किसनी ने पति की नाराजी को भांप लिया—"क्यों, क्या बात हो गई ?"

"वह अम्मा से बिना कुछ कहे-सुने पाकिस्तान चला जाना चाहता है। उन्हें फिर ले जाएगा।"

"यह घर और खेती, जानवर ?"

"चचा-ताऊ कोई होंगे तो वे भी जायेंगे ही; किसके नाम करेगा, बेच जावेगा !"

किसनी की लार टपक पड़ी—"तो खरीदने की बात तुम क्यों नही कर लेते ?"

"देख किसनी, लालच से क्या होगा ? लोग कहेंगे, हमने उसकी जमीन लूट लेने के लिए उसे यहां से भगा दिया।"

"तुम्हारी अकल मारी गई है क्या ? उसका ग्राहक जो आएगा, न जाने कौन हो, कैसा हो ! हमारे विचारों के साथ उसकी पटरी बैठे भी या नही। और दूसरे गाव वालों से भी उसकी आदतें न मिलें, तो सभी हमसे कहेंगे—तुम कैसे लोग हो, जो उसे आने दिया !"

"तुम जानती ही हो, मेरा क्या किसी बैंक में रुपया जमा है जिससे यह खरीद की जा सके ? उधार सौदे की तो कोई बात ही नही हो सकती।"

किसनी बोली—"मेरे पास जो भी टूम-छल्ला है, मैं उसे बेच देने को तैयार हूं। मेरे हाथों को मेहनत करने के लिए पानी वाली जमीन मिल जाएगी, तो वह जेवर किस काम का, जो चोर की नीयत डिगाता है।"

"मेरी कोई अकल काम नही कर रही है।"

"मैं अभी जाकर हमीदा मौसी को खबरदार करती [illegible]।"

बाला ने किसनी का हाथ पकड़ उसे रोक लिया—"नहीं-नहीं, अभी उनसे कुछ नही कहना है। मुमकिन है, समझाने-बुझाने पर अल्लादिया अपना विचार छोड़ दे !"

उस वखत तो बाला ने उसे रोक लिया; लेकिन दूसरे दिन बाला ज्योतीकोट किसी काम से गया था, तो किसनी सीधी पहुंच गई हमीदा के पास—चाय का गिलास लेकर।

हमीदा तब क्यारी में फालतू उगी हुई घास निकाल रही थी।

"क्यों मौसी, तबीयत ठीक है ?"

"क्या ठीक, क्या बेठीक बेटी ! वक्त को भुलाने को ही खेतों में चली आई हूं। लेकिन मन भूलता कब है ? यादें टूट-टूटकर उसके भीतर से निकलती चली आती हैं, और आंसू फिर क्या अपने काबू में रहते हैं ? अगर इनके पानी में अंदर की सारी जोत बह गई तो फिर क्या होगा ? फिर तो अपने हाथ-पैर भी पराये हो जावेंगे।"

"लो, चाय पी लो !"

"नहीं, मैं सोच रही हूं, चाय-पानी सभी कुछ छोड़ दूं। जब मेरे भीतर पानी ही नहीं पहुंचेगा तो आंसू बनेंगे कैसे ?"

"यह क्या कहती हो मौसी ? चाय-पानी नहीं पिओगी, तो फिर आंसू खून के बनने शुरू हो जावेंगे। अल्लादिया की शादी कर बहू ले आओ। वह तुम्हारा हाथ बटा देगी। तुम्हारी सेवा करेगी, तुम्हारा दु:ख भूल जाएगा तो अपने-आप आंसू रुक जावेंगे। और बेटा घर ही पर कोई काम करना शुरू कर देगा, जिंदगी के आखिरी दिन ठीक-ठीक कट जावेंगे।"

"झूठे ही मुझसे कहता है, लाट साहब नैनीताल में ही नौकरी देने को कहते हैं। रहने को नौकरघर भी मिल जाएगा। पर मैं यहां की खेती-पाती छोड़कर कैसे जाऊं ?"

जब उसने अल्लादिया को मिले हुए रुपयों का कोई जिक्र ही नहीं किया तो किसनी भी चुप हो रही। बोली—*"अब गूल में हाथ धो लो मां ! चाय ठंडी क्या अच्छी लगेगी !"*

हमीदा ने कहना मान लिया। हाथ धोती हुई बोली—*"अब खुदा उठा लेता तो ठीक था !"*

"नहीं-नहीं, ऐसा मत कहो···" किसनी ने उसके हाथों में चाय का गिलास देते हुए कहा—*"अभी बहुत-सी देनदारी चुकानी है तुम्हें !"*

"नहीं बेटी, हमने भूखे ही सो जाना पसंद किया, पर किसीसे उधार की कोई पाई नहीं ली !"

हंसती हुई किसनी बोली—*"नहीं मां, ऐसा उधार नहीं ! बेटे की शादी करना क्या तुम्हारा उधार चुकाना ही नहीं है ?"*

"पर न तो वह पढ़ा-लिखा है, न कहीं कोई नौकरी ही करता है। कौन मरा खेतों में काम करने को उसे अपनी लड़की देगा?"

"वह पढ़ी-लिखी लड़की चाहता होगा, जो उसके साथ घूमने जावे।"

"उन्होंने इसका नाम नैनीताल के स्कूल में लिखाया था, पर यह ताल किनारे पाल की नावों में सैर करता, तालाब में मछलियां मारता, बीड़ी पीता और जुआ खेलता था। घर से फीस और किताबों के लिए जो पैसे ले जाता, उन्हें न जाने कहां खर्च कर देता! एक दिन जब स्कूल के कोई मास्टर उन्हें मिले तो पता चला कि फीस जमा न होने के सबब से उसका नाम स्कूल से काट दिया गया।"

"खेतों में काम करने वाली लड़की ही ले आओ!"

"इसके अब्बा क्या पढ़े-लिखे थे? सिर्फ तनखा के टिकट पर दस्तखत करना जानते थे। वह भी मेहता बाबू ने उन्हें अंग्रेजी के दो-तीन हरूफ सिखा दिए थे, उनका हाथ पकड़-पकड़कर। क्या कमी रही उनको? रुपया भी कमाया, नाम भी पैदा किया।"

किसनी के मन में हुआ कि उसी समय अल्लादिया की झूठ खोल दे, पर उस इच्छा को दबाकर वह बोली—"मेरी बात मान लो अम्मा, सभी कुछ ठीक हो जाएगा।"

"तुम्हारी बात मानू भी कैसे? इस गांव में मेरा और कौन है अपना? मेरे मैके वाले सब लखनऊ में और उनके चचा-ताऊ सब कानपुर में। क्या मालूम, फिर कहां गए?"

"तो भी क्या, चिट्ठी-पत्री से विलायत तक के काम चल जाते हैं।"

"बेटी, अब क्या होगा। उनकी समूची जान चली गई। अल्लादिया ने लखनऊ को खत लिखवाकर भेजा था। क्या मालूम, पता ही ठीक न था! तुम देख ही रही हो, मैं इतने बड़े संकट में किसीने मुड़कर इधर देखा भी नहीं, चिट्ठी का जवाब भी नहीं दिया।"

"चिट्ठी नहीं मिली होगी, या किसी दूसरी जगह बदल गए होंगे।"

"अब यह दूकान खोलने को कह रहा है। शायद मुझसे कुछ पैसा ऐंठ लेने की भी मशा है।"

"तुम्हारे पास कौन खजाना जमा है?" किसनी के मन में अल्लादिया

को मिले हुए रुपये चमक पड़े।

"अब तुमसे क्या छिपाऊं, मैंने एक पतीली में जरूर कुछ सिक्के जमा कर रखे हैं—इसकी शादी के लिए। ये क्या इसे दूकान में लुटा देने को दे दूं?"

"नहीं मौसी, एक भी पैसा मत दो!",

"मैं तुम्हारी सही राय पाकर बहुत खुश हो गई।"

हमीदा की सरलता-भरी वाणी ने किसनी की अन्तरात्मा को झकझोर दिया। उसके अन्तर के द्वार खुल पड़े। अब सच्ची बात कहने को वह तैयार हो गई। वह हमीदा का हाथ पकड़कर धीरे से उसे अमरूद के चबूतरे पर ले जाकर बोली—"मां, अब तुमसे क्या छिपाऊं? तुम्हें नहीं बताया उसने। बोट क्लब वालों ने उसे चार सौ रुपए दिये हैं, नगद!"

हमीदा ने चिल्लाकर कहा—"या खुदा, उसने अभी तक मुझे नहीं बताया। तुमसे किसने कहा?"

किसनी क्या उत्तर देती? अल्लादिया आगन की दीवार पर खड़ा होकर पुकारने लगा—"अम्मा, तुम फिर खेतों पर उतनी दूर चली गई हो। घर बैठो, और मुझे दूकान खोल लेने दो!"

हमीदा ने चाय पीकर गिलास धोकर रख दिया था। किसनी उसे उठाकर जाने लगी। अल्लादिया पर नजर पड़ी तो हंसते हुए पूछा—"किस चीज की दूकान खोलोगे?"

"चाय की दूकान! गाहक और दूकानदार दोनो को वही सस्ती पड़ेगी। तुम पी लोगी, मेरी दूकान की चाय?"

वह गिलास दिखाती हुई बोली—"क्यों नहीं, इसी गिलास में!"

हमीदा बोली—"बड़ी देर लगा दी। कहां गए थे?"

"जितुवा लोहे-लकड़ी दोनों कामों मे बहुत होशियार है। दूकान का ढांचा बनवाने मे उसकी मदद लेना चाहता था, पर वह आनाकानी कर रहा है।"

"क्यो कर रहा है, मैने तो सुना है, तुम नोटों की गड्डी बाधकर लाये हो, नैनीताल से। और तुमने मुझसे उसकी आधी बात भी नहीं की!"

"हा मा, आपकी दुआ से कागज बन रहा है। अभी एक कागज

वना है, फिर दूसरा। फिर वैंक में जाकर उस कागज के वदले कागज का ही नोट भी मिलेगा। वाला भाई के पास जाता हूं। शायद वह जितुवा मिस्त्री से मेरी कुछ सिफारिश कर दे।" वह चलता वना।

माता को टाल देने के लिए ही वह वहां से चला गया था। और जव वह वाला के घर से भी कटकर इधर मोटर के स्टेशन की ओर चढ़ने लगा तो वाला ने उसकी आहट पा ली, वाहर आकर उसे पुकारा—"अल्लादिया, सुनो तो सही !"

वह रुका नहीं, और भी तेजी से कदम वढाते हुए वोला—"ठहरो अभी आता हूं।"

वाला ने उसे छोड़ दिया और खुद उसकी माता के पास जाने लगा। चूड़ियों की खनक के साथ किसनी अन्दर से वोली—"लो, जव चाय तैयार हो गई तो चल दिए ! तुम्हारे साथी के लिए भी तो ला रही हू।"

"वह ऊपर दूकान मे गया है, और मैं जा रहा हू उसकी अम्मा के पास।"

"चाय पी जाओ !"

"नही, अगर वह लौट आया तो उसकी मां के साथ ठीक-ठीक वात पूरी न हो सकेगी।"

वाला को हमीदा वाहर आगन मे ही आलू छीलती मिल गई। वोली—"क्यों वेटा, अल्लादिया नहीं मिला तुम्हे ? वह तो तुम्हारे ही यहां गया था।"

इस वात से वाला के मन मे कुछ खटका जरूर हुआ—"कोई वात नही। मैं तुमसे मिलने आया हूं।"

उसने पास ही पड़ी चारपाई दिखाकर कहा—"वैठो !"

"वैठने का वखत नही, वह आ पहुचेगा ! उससे छिपाकर ही तुमसे कुछ कहना है।"

"क्या रुपयों की वात ? कितने रुपयों में लाया है, वाप की हड्डियों का मोल ?"

वाला ने उसे तसवीर का दूसरा हिस्सा दिखाते हुए कहा—"वह कहीं भाग जाना तो नही चाहता ?"

हमीदा ने उसका हाथ पकड़ लिया—"कहां को ?"

"उसके रग-ढग यही कहते हैं! तुम्हें अब तक उसकी शादी कर देनी थी।"

"ठीक-ठीक बताते क्यो नही, कहां जाना चाहता है ? हल्द्वानी, दूकान का सौदा-पत्ता लाने जावेगा। तुमने जितुवा मिस्त्री से उसकी बातें करा दी ?"

"नही, वह और भी दूर जा रहा है।"

"या खुदा ! कहता तो था, फिलम मे फोटो खिचाने बंबई जाऊगा। फिर मैं उसे चलता-फिरता, बोलता-चालता, नाचता-गाता यही देख लूगी। नही बेटा, रोक दो उसे ! अब उसे बाप का डर तो रहा नही। पास-पड़ोसी तुम्हारा ही भरोसा है ! बुलाओ उसे, कहां गया ?"

"दूकान पर गया है, बीडी-सिगरेट लेने को। बंबई तो अपने ही मुलक मे है।"

"फिर वह और दूर कहां जा रहा है ? क्या लाट साहब के साथ विलायत को ?"

"लाट साहब उसे क्यो ले जाने लगे ? लेकिन उसके लिए विलायत यही बना गए, उसीका नाम है पाकिस्तान।"

"वह कितने मील पर है ?"

वाला इसका जवाब देता, कि तभी ऊपर उतराई में उसे पनसूपिया के लाल-हरे पत्तो के बीच से वह आता दिखाई दिया। वह जाते हुए बोला—"आ गया ! उससे मत कहना, जो मै तुम्हे बता गया।" वाला ओट ही ओट मे अपने घर को खिसक गया।

फिकर मे खड़ी उसकी राह देखती हुई हमीदा का हाथ पकड़ लिया अल्लादिया ने—"क्यों मा, चेहरे पर उदासी पोतकर क्या मेरी ही राह देख रही हो ? मै कही वह गया था क्या ? दियासलाई की डिबिया लेने गया था। इशा अल्ला, अब गाव मे मेरी ही दूकान खुल जायेगी, तो लोग दियासलाई लेने यही आयेंगे। पूरी पेटी ही मगवाकर रख लूंगा मै यहां।"

हमीदा बिना कुछ बोले-चाले फिर आलू छीलने बैठ गई। छिले हुए आलू चाकू के साथ थाली मे पड़े थे। उसके होंठों पर कोई भी शब्द नही

आया।

फिर उसी को वोलना पडा—अम्मा ऐसी गुम-सुम होकर क्यों वैठ गई हो? क्या यह जरूरी होगा कि हर वक्त मैं ही दूकान मे वैठा रहूं? एक नौकर रखूगा। खेती-पाती का सारा काम वही देखेगा। जव मैं इधर-उधर जाऊंगा, तो दूकान में तुम वैठोगी। आटा-चावल, साग-सब्जी की दूकान के साथ-साथ पान-सिगरेट और चाय-नाश्ते का होटल भी शुरू कर देंगे। फिर धीरे-धीरे एक तरफ कपडे का धंधा भी जमा लेंगे।"

हमीदा ऊब उठी—"यह शेखचिल्ली की-सी वातें मुझे जरा भी पसन्द नही! तू नैनीताल से रुपये लाया है, और झूठ बोलता है कि वह कागज में है।"

"मां, वह ठोस चादी का रुपया जो तुमने देखा, उसका जमाना अब कहा रहा? नोट का रुपया क्या कागज ही में नही है? फिर इसमें क्या झूठ?"

हमीदा रोती-रोती उठी और अल्लादिया का हाथ पकडकर बोली—"वेटा, सच-सच बता, क्या तू चला जाएगा मुझे छोड़कर?"

"नही मां, क्यो जाऊंगा कही? वैसे अगर वीच में कोई खटका हो गया तो मजबूरी है!"

"खटका कैसा," वड़ी चिन्ता में भरकर हमीदा ने पूछा।

"लाट साहब की साल-गिरह जैसा! यानी जैसे अब्बा को वाघ खा गया।"

"लाट साहव तो विलायत चले गए, फिर उनकी साल-गिरह क्या यहीं रह जावेगी?"

"वे अपनी कोठी और कुरसी थोड़े ले जायेंगे। और वे क्या यहां खाली ही पड़ी रहेंगी, धूल वैठने के लिए?"

"तू बात को क्यों गड्ढे मे डाल रहा है? तू जहां जानेवाला है, मुझे उसका नाम मालूम है।"

"वताती क्यों नही?"

"हां-हां, याद आ गया—पाकिस्तान! यह नाम अभी चला है।"

"हां, नया ही मुल्क वना है।"

"घर एक नया बनता है; कुछ बरसों में वहां एक गांव बन जाता है, जो बीसियों बरस में एक कसबे की शकल ले लेता है लेकिन एक ही रात में वह समूचा मुल्क किस जादू का करिश्मा है?"

"मुल्क तो पुराना ही है। अपनी सहूलियत के लिए दो हिस्से कर एक नया नाम रख दिया गया है।"

हमीदा ने अनमनी होकर पूछा—"किसके दो हिस्से कर दिये गए?"

"सभी चीजों के! खेत-खलिहान, खजाना-टकसाल, कल-कारखाने, स्कूल-कॉलिज, पुलिस-पलटन, रेल-जहाज, डाकखाना-अस्पताल, जंगल-पहाड़, नदी-झील—सब आधे-आधे कर आपस में बांट दिये गए।"

"अरी मां! मर गई मैं! नैनीताल में पानी के टुकड़े कहां से हुए? साहबों के हिस्से में तल्लीताल आया या मल्लीताल?"

"क्या बात कर रही हो? पूरी सठिया गई हो! अरी, साहब तो हिस्से कर चल दिया, अपनी पतलून की खाली जेबों में हाथ डालकर। हिस्से मिले हिन्दू-मुसलमानों को। ज्यादा हिस्सा हिन्दुओं को, कम मुसलमानों को!"

"फिर यह इन्साफ तो ठीक नहीं रहा!"

"आबादी के हिसाब से यह हिस्सा तो ठीक ही रहा। लेकिन कुछ बातें और हैं।"

हमीदा को बेटे की बातों में कोई सार नहीं जान पड़ा। इतने में उधर से बाला आता दिखाई पड़ा। वह बोली—"लो, यह बाला भाई आ गया। यह करेगा, तेरे सच-झूठ का इन्साफ!"

बाला ने अपनी बात अलग रखकर कहा—"क्यों, क्या झगड़ा है?"

"यह बेकार जमीन का टुकड़ा डगलस डेल के साहब के बेच देने से पहले हमें मिला था। यानी उन्होंने मेरे दादा को उनकी खिदमतों के लिए बखशीश में दे दिया था। मेरी दादी ने ही रात-दिन की मेहनत से ऊंचे टीलों को काटकर गड्ढे भरे और दलदलों को पाटकर उनमें खेत बना दिए।"

हमीदा बोली—"उन्हीको देख-देखकर मुझे भी माटी से मुहब्बत हो गई; और मरते वखत वे जो अपने अधूरे काम मुझे बता गईं, वे सब मैंने पूरे किये।"

"मेरे अब्बा ने दादा की खानसामागिरी संभाल ली। लेकिन मैं ही एक

कपूत किसी काम का नही निकला। जो न तो आग का ही धंधा सीख सका, न ही मिट्टी-पानी का।"

वाला ने कहा—"तुम महामूरख हो ! अब्बा का काम तो तुम्हें मिल ही जाता, कुछ मेहनत करने पर। तुम्हारे दिमाग में न जाने कौन-सी हवा भर गई है कि तुम उडे ही उडे फिर रहे हो !"

"तो तुम मेरी भलाई के लिए जो भी कहोगे, क्या मैं उसे टाल सकता हूं ?"

"मैं तेरे लिए कही कोई काम भी ढूढ़ सकता हूं।"

"मुझे यहीं दूकान खोलने मे मदद दो !"

"दूगा; पर पहले तुम्हे अपनी तबीयत एक जगह जमाने के लिए पक्का वादा करना पडेगा।"

"वह भी करूगा।'

"नीचे अम्मा के पैर छू; ऊपर आसमान मे खुदा को गवाह बना, कि तू अम्मा को छोडकर कही नही जायेगा।"

वैसा ही कर वह बोला—"अम्मा को और तुम्हे छोडकर कही नहीं जाऊंगा !"

वाला ने उसे गले से लगाकर कहा—"मजहब हमारे घर भीतर की चीज है। गाव के रिस्ते में तू मेरा भाई है, और हम दोनों के मन पाक और साफ हैं तो हम एक ही पाकिस्तान के वाशिंदे है।"

"तुम ठीक वखत मे इसका मन तोलकर इसे आदमी बनाने को आ गए !"

"अम्मा, यह तुम जो भी समझो; पर अभी किसनी बोली कि नमक की एक भी ककरी नही है। मैं बिना चीनी की चाय सुड़क जाऊगा, पर बिना नमक की दाल नही निगल सकता। अब इस अंधेरे मे ऊपर दूकान तक जाऊं भी तो वहां नमक मिल जाएगा ?"

"इसीलिए तो वाला भाई, यहा अल्लादिया की दूकान खुलनी जरूरी हो गई। यहा तुम्हें सभी कुछ मिलेगा—नमक-मिर्च, दाल-चावल, घी-तेल, पान-सिगरेट, दूध-चाय !"···

मा वाहर मकान पर छायी हुई अंगूर की बेल मे से एक पत्ता तोड़ ले

गई, उसमे नमक रख बाला को देती हुई बोली—"नमक नंगे हाथ मे देने से झगड़ा होता है !"

"क्या हम कभी झगडे है, जो अल्लादिया को उतनी दूर जाना पड़ेगा ?"

अल्लादिया ने भी हा भरकर इस बात को समर्थन दिया ।

बाला जाते-जाते बोला—"अल्लादिया इस गाव का है और यह गाव अल्लादिया का । खुदा हाफिज !" वह चला गया ।

हमीदा ने हसते-हसते अल्लादिया का हाथ पकड़ पहले उसे घर के भीतर किया । फिर बोली—"अगर यह 'जैरामजी की' कहता, तो मैं नही समझती कि उससे खुदा की न दिखाई देने वाली शकल मे कोई फर्क पड़ जाता !"

अल्लादिया अपनी चारपाई पर चला गया। उसपर एक खिड़की खुलती थी। उसके उजाले में उसने देखा, बिस्तर पर एक बद लिफाफा पड़ा था, उसे उठाकर वह बोला—"डाकिया डाल गया होगा यह चिट्ठी ! ऐसी जल्दी भी क्या है ? क्या यह उसकी ड्यूटी नही है कि वह खत पाने वाले को ही दे !"

हमीदा आलू लेकर रसोईघर मे चली गई । अंधेरा वहां बढ़ गया था । उसने पुकारा—"बेटा, दियासलाई तो दे जा !"

उसने रसोईघर की ढिबरी जलाकर लैंप भी जला दिया । पूछा—"खत किसका है ?"

"फरीद का । तुम पहचानती हो उसे ! हल्द्वानी जा रहा होगा । आवेगा यहा भी !"

हमीदा रसोईघर मे चली गई । अल्लादिया चिट्ठी पढ़ने लगा । वह थी तो फरीद की ही, पर मामला कुछ और था, इस तरह :

> "नये सूरज ने नया दिन दिखाया है, पाकिस्तान ही हमारी मंजिल है ! चलो, फौरन ही चलो, आज ही चलो, अभी चलो ! मौसी को हमे भरपेट रोटी देने से दरकार है। चलो, पहले वहां जाकर मकान और नौकरी अपने नाम लिखा आते हैं । फिर मैं अपनी बहन को ले जाऊगा । तुम भी ऐसा ही करना, अभी इन्हें बता दोगे तो मामला ठप्प हो जाएगा । सामान भी कुछ साथ मे नही रखना है । कोई पैसा भी नहीं। सरकार जिम्मेवार है। पूजी सिर्फ पक्के

इरादे की !"

अल्लादिया ने अपनी भीतरी जेब टटोली, उसमें नोटों की गड्डी ने उसकी कमर बाध दी। हमीदा ने देखा—बड़ी गहराई में डूबकर उसका बेटा खत पढ रहा है। उसने पूछा—"क्यों बेटा, क्या लिखता है फरीद इतनी लबी चिट्ठी ?"

"बड़ी घसीटकर लिख रखी है। पढने की मुश्किल !"

"मैं रोटी पकाने लग गई। गरम-गरम खा ले !"

"जरा-सी चिट्ठी और रह गई। अभी तो तुमने सब्जी छौकी है।" वह फिर पढने लगा :

> खाने के लिए कोई रोटी बांधनी नही है, न ही सोने के लिए दरी। कल सुबह हल्द्वानी को जानेवाली पहली मोटर पर मुझे ज्योतीकोट के बस-स्टेशन में मिल जाना। फकत !"

बाला उसके मन में जो नक्शा बिछा गया था, फरीद की चिट्ठी ने उसे लपेटकर अलग रख दिया। पूरे सरकारी खर्चे पर ही वह इधर का उधर हो जावेगा—यह सोच-सोचकर उसकी सारी भूख हिरन हो गई। रसोईघर में यह सोचता हुआ वह घुसा कि अब अगले वखत की रोटी वह पाकिस्तान के ही रास्ते में खाएगा।

खाते-खाते वह सोचने लगा—"अम्मा को अब अगर मैं एक सौ रुपये दे भी जाऊं, तो न जाने वह क्या सोच-सोचकर अपना वहम बढा ले। अगर बाला भाई को सौंप जाऊं तो उनपर मेरा इरादा खुल पड़ेगा।"

खाते-खाते उसने मां से पूछा—"मा, तुम्हारे पास कितने रुपये जमा हैं ?"

"यह पूछते हुए तुझे शरम नही आती ? क्या मेरी कही नौकरी है ? तेरे अब्बा मुझे हर महीने कोई पेंशन देते थे ? या तेरी ही कमाई भरी है मैंने ? खुदा झूठ न बुलावे, दस-बीस रुपया पास-पड़ौसियों मे तेरी ही शादी की खुशी मे बाटने को रख छोड़े है।"

"अम्मा, मैं तो लौमैरेज करूगा।"

"लौमैरेज क्या हुई ?"

"बस, जहा लौ लग गई ! वहा बस सिर्फ लौ ही चाहिए। घोड़ा-कोड़ा,

बिजली-बाजा, खाना-पीना, पान-सिगरेट, आव-भगत सब खतम ! दोनों ने एक-दूसरे को हार पहना दिए, हाथ में हाथ मिल गए—बस ! सादगी का जमाना है, जल्दी का जमाना है—हो गई शादी !"

"ऐसा भी कहीं हो सकता है ? पास-पड़ौसी और इधर-उधर के नाते-रिश्ते, *जिनका खाया-पिया है, उनका अब और कब लौटाऊंगी ? अकेले ही* अपनी बहू को डोली मे उतारकर कैसे घर के भीतर ले जाऊगी ?"

"अब डोली का जमाना लद गया । बस मे आवेगी वह ऊपर ! तब चाहे तू उसे उतार लेना, चाहे वह खुद ही बाहर कूद जाए !"

"मेरे एक-दो लड़के और भी होते तो बात दूसरी थी !" कहते-कहते हमीदा की आखों से आसू निकल पडे ।

माता की ममता से पराजित होकर अल्लादिया ने उस समय फरीद की चिट्ठी को भुला दिया । दूकान का ही नक्शा उसकी आंखो मे चमकने लगा । फिर जल्दी ही वे दोनो विचार आपस मे लड़ने लगे । उसके निवाले छोटे ही नही, गले मे अटकने भी लगे ।

अम्मा बोली—"क्यो बेटा, किस दुविधा मे फस गए ? बताते क्यो नही, तुम्हारी लौ कहा लगी है ?"

"अम्मा, पहले रोटी का इतजाम करना है, फिर रोटी बनाने वाली का !"

अगर तू गाव से किसी लड़की को लायेगा, तो वह तेरे दोनों काम संभाल लेगी । अब मुझसे तेरी खेती-बाड़ी, गाय-बकरी, फल-फूल, चूल्हे-चक्की का कुछ नही हो सकता । अपनी आखों मे किन्ही अच्छे हाथो मे यह सब देख जाती, तो उनके बद हो जाने की मुझे कोई परवा न थी । पर तेरी लौ…"

और उस समय अल्लादिया के मन मे बत्ती की लौ चमक रही थी—दूर-दूर पाकिस्तान तक, जहा इच्छाओं की फसल, खाने को बढ़िया-बढ़िया चीजें और जरा-सी मेहनत पर बडी से बडी तनखा मिलने वाली थी ।

अल्लादिया अम्मा के साथ बिना कोई बात आगे बढाए, रोटी बिना तोड़े ही उठ गया । हाथ धो, कुल्ला कर सोने के लिए चला ।

हमीदा ने भी खा-पीकर चूल्हा बुझा दिया । बर्तन धोये । दिन-भर की हारी-थकी उसने भी अपनी चारपाई पकड़ी । धीरे-धीरे पुकारा—"अल्ला-

दिया, क्या सो गया ?"

उसकी आंखों में अभी नींद कहां ? पर उसने मां की पुकार का कोई जवाब न देकर यह जता दिया कि वह सो गया। माता की ममता ने फिर दूसरी आवाज से उसकी कच्ची नींद तोड़ देना ठीक नहीं समझा। दरवाजा पहले ही बंद कर दिया था। बत्ती बुझाकर उसने भी खुदा से सबका भला करने की दुआ मांगी और खुद भी सो गई।

अब अल्लादिया गांव छोड़कर कहीं नहीं जाएगा—इस बेफिक्री में हमीदा को झट से नींद आ गई; और अल्लादिया भविष्य के अंधेरे में पाकिस्तान जाने वाली सड़क ही टटोल रहा था।

वह ऊपर मोटर की सड़क पर हल्द्वानी को जाने वाली पहली बस को पकड़ने के फेर में था। इसी चिंता में उसकी नींद उचट गई। आधी रात में उसने एक द्वार खोल दिया, साकल हटाकर।

माता की नींद खुल गई। उसने पूछा—"क्या बाहर जाओगे ?"

"कहीं नहीं जाऊंगा। गरमी लग रही है। जरा हवा आ जाए तो ठीक रहेगा।"

"लेकिन तुम जेब में जोखम रखे हो। कोई भेदुवा अगर चोर बनकर आ गया तो ?"

"कोई डर नहीं अम्मा ! रकम कागज में है। बिना मेरे दस्तखत के कोई उसे निकाल नहीं सकता। हाथों में हथकड़ी पड़ जाएगी।"

वह इसी को सच समझी और फिर सो गई।

अल्लादिया फिर जैसी भी पूरी-अधूरी नींद सोया, उसने सपने में देखा, सड़क पर बस आ गई। फरीद गाड़ी से उतरा, इधर-उधर देखने पर जब वह कहीं नहीं मिला, तो जोर-जोर से चिल्लाया—"अल्लादिया अल्लादिया ! अरे कायर ! डरपोक ! नालायक ! तू मर्द किस बात का है ? तूने वादा तोड़ दिया ! तो जा, जहन्नुम में ही रह। देख, मैं चला गया पाकिस्तान को।"

अल्लादिया की नींद टूट गई, घबराकर वह उठा। दरवाजा खुला ही हुआ था। उसकी अम्मा नींद में बेसुध थी। चारपाई के नीचे कुछ फटा-पुराना गूदड़ पड़ा था। न जाने क्या सूझी उसे ! धीरे से उठाकर उसने चारपाई पर अपनी लंबाई-चौड़ाई बनाकर ढक दिया। फिर मन ही मन

को सलाम किया—"मैं सिर्फ अपने ही मतलब के लिए नहीं जा रहा हूं। तुम्हें यहा कडी मेहनत करनी पड रही है। वहां मौज से चारपाई पर बैठी-बैठी राज करोगी। यहां की सारी जायदाद तुम्हे वहा मिल जाएगी। फरीद ने मुझसे वादा किया है। वह अपनी बहन को शादी मेरे साथ कर देगा, पर पाकिस्तान की सर जमीन पर, यहा नहीं!" उसने अपनी जेब के नोटों को टटोला और चप्पल हाथ मे लेकर ऊपर सडक पर चढ गया।

सड़क बिलकुल सुनसान थी, दूकानें बिलकुल बद। पशु-पक्षी सब विश्राम मे खोये हुए, यहां तक कि हवा के निश्चल होने से पेड-पत्तों मे भी कोई हलचल नहीं।

वह सड़क पर आया। दूर कहीं सियार बोल उठा। फिर तो कई सियारों ने कोरस छेड दिया, और गावों में कुत्ते भौंक उठे। वह समय का कोई अनुमान नहीं पा सका। घर लौट जाना उसकी पराजय थी, और वहा खड़े-खड़े गाडी का इतजार करना भी मूर्खता। तीन-चार घटे की प्रतीक्षा का किसी देखने वाले को क्या समाधान देता। वह मोटर की सडक ही सड़क चल पड़ा, पैदल ही हल्द्वानी को। वह कहीं भी पहली गाडी मे फरीद को पकड़ लेगा।

हमीदा रोज के ही समय से उठकर अपने कामों में लग गई। दूध दुह लाई। चाय का पानी खौल गया। अल्लादिया को चारपाई पर देखा—"क्यों रे! अभी तक सोया ही पडा है? हल्द्वानी जाकर दूकान का सौदा खरीदने की बात करता था।"

पर अल्लादिया की चारपाई पर रखी डमी टस से मस कहां होती? माता ने फिर जोर से उसे पुकारा। उसका बुत वैसे ही चारपाई पर पड़ा था—उसी रेखा और उसी कोण मे, कोई करवट नहीं बदली।

"क्यों रे रोज सुबह उठते ही चाय मागता था, आज आवाजें देने पर भी नहीं उठा।" हमीदा चिंता मे उसकी चारपाई पर गई। उसे झकझोरकर उठाना चाहती थी कि गोल किया गूदड़ उसके हाथ लगा। सिर पीटकर चिल्लाई—"अल्लादिया! अल्लादिया!"

किसनी उन्हींके यहा आ रही थी। बाला की तबीयत खराब हो गई थी। उसके पित्त चढ गया था। उसीके लिए कागजी नीबू तोड़ने चली आई थी। बाहर से तभी उसने हमीदा की चिल्लाहट सुनी तो नीबू को भूलकर

घर के भीतर घुस गई। उसे देखकर हमीदा और भी चिल्लाकर बोली—"या खुदा, अब क्या करूं मैं?"

किसनी ने भीतर-बाहर चारों ओर देखा, अल्लादिया का कही भी पता नहीं। मन ही मन उसने सोचा—"क्या उसे भी तो कोई बाघ नही उठा ले गया?"

उसीका यह विचार हमीदा की वाणी में फूट पड़ा। वह चिल्लाई—"बाघ! आदमखोर बाघ! वही, जो अल्लादिया के अब्बा को ले गया!" वह पछाड़ खाकर भूमि पर गिर पड़ी।

किसनी ने समवेदनापूर्वक उसे उठाते हुए कहा—"मौसी, धीरज रखो! ऐसी बे-सिर-पैर की बात क्या मुह से निकाल दी जाती है? अभी आ जावेंगे!"

"कहा से? मैं क्या जानू, कहा है! रात मुझसे पहले ही खा-पीकर सो गया था। फिर क्या बताऊ मै—कहा गया?" अब तो वह फूट-फूटकर रोने लगी—"यह दरवाजा उसीने खोल दिया था।"

किसनी को यह तो मालूम था कि बाघ कभी सांकल भी खोल डालता है। उसके मुह से तुरन्त ही निकल पड़ा—"सांकल तो भीतर से बन्द होगी। फिर कैसे···"

हमीदा ने उसके इस संशय की पूर्ति की—"यही तो उसकी अक्ल मारी गई। रात ही में उसने हवा के लिए दरवाजा खोल दिया था अपनी मौत बुलाने को?"

"ऐसा असगुन न बोलो मौसी! कही पास-पडोस मे ही गये होगे। अभी आते ही होगे!"

किसनी लौटी नही तो वाला भी बेचैनी से घर से बाहर निकल आया। वहा उसने जो हमीदा का रोना-धोना सुना तो अपनी बीमारी भूल गया। उसका सारा पित्त पडौसन के सकट को सुनकर बैठ गया। वह दौडकर हमीदा के यहा पहुचा और पूछा—"क्या हो गया?"

"ले गया, वही ले गया जो उसके अब्बा को ले गया था। अब्बा को तो जंगल से ले गया था, उसे बिस्तर पर से ही! या खुदा, अब मैं क्या करू?"

उस अनहोनी को सुनकर वाला को क्या विश्वास होता! वह बिस्तर,

फर्श और आगन से बाहर भी देख आया। कहीं रक्त का कोई निशान क्या छींटा भी नहीं था।

वह भीतर आकर बोला—"इस चारपाई पर यह रजाई का गूदड़ क्या आप ही उधेड़ गया, और तुम्हारी नींद तब भी नहीं खुली ?"

"नहीं, यह गूदड़ चारपाई के नीचे डाल रखा था। उसने इसे निकाल कर अपने बचाव के लिए ढाल का काम लिया होगा।"

बाला को उसका यह तर्क बड़ा थोथा जान पड़ा, फिर भी वह चुप होकर सुनता रहा।

हमीदा कह रही थी—"और रजाई से ढके इस गूदड़ को मैं बड़ी देर तक यही समझती रही कि मेरा बेटा अभी सो ही रहा है !"

"नहीं मां, यह गलत बात है कि बाघ घर के भीतर घुसकर तुम्हारे बेटे को उठा ले जाए और तुम्हें कानों-कान खबर ही न हो ! वह जंगल गया होगा, अभी आ जायेगा।"

कुछ धीरज रखकर वह बोली—"तो बेटा, उसे ढूंढकर ला दो न, तुम्हारे बड़े गुन मानूंगी !"

बाला ने अपनी घरवाली से कहा—"जा किसनी, नींबू की अब कोई जरूरत नहीं। मेरी तबीयत ठीक हो गई। तू मेरे आने तक घर जगा !" वह अल्लादित्ता की खोज में गया।

कुछ पड़ोसियों ने भी इस अनहोनी को सुना। उसे ढूंढने को तो शायद ही कोई गया हो; कार मोटर स्टेशन की दुकानों पर यह खबर पहुंच गई कि अल्लादित्ता को घर के भीतर से एक आदमखोर बाघ घसीटकर ले गया। उसकी मां उस समय डर के मारे चारपाई के नीचे छिप गई। जब बाघ बेटे को घसीट ले गया तो फिर हाय-तौबा मचाने, रोने-चिल्लाने लगी।

साढ़े ८ बजे फरीद की बस ज्योतीसरोट के बस स्टेशन पहुंची। उसने गाड़ी से उतरकर भी इधर-उधर देखा, अल्लादित्ता का कहीं पता न था। सीधे घर के रास्ते से भी दूर तक चलकर देख आया; पर कहीं वह दिखाई नहीं दिया तो भावावेश में उसके मुंह से निकल पड़ा—"बूटा कहीं का !"

किसी ने सुन लिया; पूछा—"क्यों, किसे ढूंढ रहे हो ?"

फरीद के मन का गुबार फूट पड़ा—"अल्लादित्ता को जानते हो ?

उसीसे कुछ सवाल-जवाब था।"

बड़ी उपेक्षा से वह बोला—"अरे, अब उससे क्या सवाल-जवाब ? वह तो गया !"

फरीद ने मन में अटकल लगाई—"सबसे पहली बस से तो मैं आ रहा हूं। वह किधर से चला गया ?"

इतने ही में उसने कह दिया—"उसे तो एक बाघ घसीट ले गया। उसकी बूढ़ी मां रोती-पीटती सारा आसमान सिर पर उठाये है। जाओ, बिचारी को ढाढस बंधा आओ ! तुम्हारी रिश्तेदारी है क्या, उनके यहां ?"

फरीद इधर-उधर कर बोला—"मेरा सामान है बस में !" यह दौड़कर बस में घुस गया। कंडक्टर ने सीटी दी; बस चल पड़ी उतार में तेजी से और आठ बजने से पहले ही पहुंच गई काठगोदाम। ज्योतीकोट से वहां तक रास्ते-भर फरीद अल्लादिया की दुख भरी याद में डूबा रहा।

फरीद के बाप की कबाड़ी की दूकान थी। पुराने टीन, डिब्बे खाली शीशी-बोतलें, रद्दी किताब, अखबार इत्यादि बोरों में भर-भरकर वह हल्द्वानी भेजता था। बेटा इण्टर तक पढ़-लिख गया था। इस काम में उसका मन नहीं लगता था। घर में उसकी मां भी नहीं थी। मौसी का बर्ताव उसके साथ ठीक नहीं था। इन्हीं कारणों से नये मुल्क का सपना उसके मन में घर कर गया।

अल्लादिया उसका बचपन का साथी था। एक से दो भले, यही सोचकर उसके साथ सांठ-गांठकर उसने पाकिस्तान में हाईजंप लगा देने का निश्चय कर लिया था। अब आज उसे बाघ का शिकार हो गया सुनकर उसका दिल आधा भी नहीं रह गया।

अब जाए या न जाए ?—इसी सोच में पड़ गया वह। घर से भाग आया था, वहां लौटे भी तो कैसे ? साथ में एक अटैची, एक थैला और एक टिफिन कैरियर भी ले आया था। यह भी एक अड़चन थी।

उसने सोचा—"जब बाप के घर में ही कोई अपना नहीं, तो बाहर का क्या लालच ? जिसे अपना बना लूंगा, वह हो ही जाएगा।"

उसने बस के बाहर पहला कदम रखा ही था कि अल्लादिया ने फौरन उसके हाथ की अटैची ले ली।

अपनी आवाज में दूना होकर चिल्लाया फरीद—"अरे कौन ? तू अल्लादिया ? तेरे घर पर तेरी मौत के लिए तेरी मां रो रही है। सारे गांव में यह खबर फैल गई है कि तुझे कोई लकडबग्घा चारपाई पर से ही घसीट ले गया। यह गलत बात क्यों फैला आया तू ?"

"मेरे दुश्मनों ने फैला दी होगी !"

"तो तू जाकर पहले अपनी मां के आंसू पोछ आ ! मैं यहां तेरा इन्तजार करूंगा।"

"अम्मा के आंसू पोछने वाले वहां कई हैं। और ऐसी बेबुनियाद बात भी कहीं ठहर सकती है ? चल, पहले वहां जाकर अपना ठौर-ठिकाना कर आते हैं। फिर मैं अपनी अम्मा को लेने आऊंगा। और क्या तू अपनी बहन को मौसी के ही बर्तन मांजने को छोड आवेगा ?"

"क्या पागल हूं जो छोड़ आऊंगा ? अब तेरे आ जाने से मेरा टूटा हुआ दिल मजबूत हो गया। तेरा सामान कहां है ?"

"अकेले ही दम आया, सिर्फ थैला लेकर; नहीं तो पकड़ में आ जाता!"

"चलो, वेटिंग रूम में। फिर देखेंगे, हमारे लिए स्पेशल ट्रेन का इन्तजाम कब होगा !"

बाला नदी के किनारे बहुत दूर तक देख आया, कहीं कुछ पता न मिलने से मोटर स्टेशन पर चढ़ गया। उसे पूरा विश्वास यही था कि वह या तो हल्द्वानी गया है या नैनीताल ! वहां बुकिंग आफिस में कोई पता नहीं चला। वह निराश होकर हमीदा के पास लौट आया।

उस समय हमीदा के पास गांव के प्रधान रामसिंह की और दो-तीन भले घरों की औरतें उसे समझा रही थी कि बाघ अगर उसे ले जाता तो क्या कोई निशान नहीं छोड़ जाता ! हमीदा रोती हुई उनकी बातें सुन रही थी।

बाला झूठी खुशी दिखाता हुआ उसके सामने जाकर खड़ा हो गया—"मां, वह नैनीताल गया है। एक आदमी ने मुझे खबर दी है !"

"तो फिर वह मुझसे बताकर क्यों नहीं गया ?"

"जल्दी में पैदल ही गया। तुम्हारी नींद तोड़ना ठीक नहीं समझा।"

"खाना खाने में देर हो जाती, तो क्या चाय भी नहीं पीनी थी ?"

"बोट हाउस क्लब में उसके अब्बा ने अपनी सारी उमर खपाई है।

वहां उसे चाय और नाश्ते का क्या घाटा है ? शाम को आ पहुंचेगा !"

बुढ़िया को धीरज बंधाकर सब अपने-अपने घर चल दिए। सबके मन में बाघ का खटका तो नहीं, यही विश्वास हो चला था कि वह जरूर कहीं न कहीं परदेश चला गया। उसकी जेब में जो पूंजी थी, वही उड़ा ले गई उसे।

बाला ने घर जाकर किसनी से कहा—"मैं उसे समझता हूं, अल्ला-दिया न तो पैसे के लालच में नैनीताल गया है, न दूकान का सौदा खरीदने हल्द्वानी ! वह सीधा पहुंच गया बंबई। वह हीरो बनने की धुन में था, जरूर वहीं गया है ! एक दिन मुझसे कहता था—मैं हिन्दुस्तान के हर सिनेमा हाल में नजर आऊंगा और हर घर की दीवारों पर मेरी तस्वीर लटक जाएगी।"

"बड़ा बेदर्द निकला ! अब उसकी अम्मा के हाथ-पैर थम जायेंगे तो फिर क्या होगा ?"

"क्या मालूम ? भगवान् की अजीब लीला है ! अगर सचमुच में वहाँ उसकी तकदीर चेत गई, तो अपनी अम्मा को भी वहीं ले जाएगा।"

"फिर यहां की खेती-पाती, कारोबार ?"

"यहीं बेच जाएगा, और क्या !"

"कोई ऐरा-गैरा आकर हमारे गांव में घुस आए, यह किसीको भी बर्दाश्त नहीं होगा। फिर हम ही क्यों इसे नहीं खरीद लें !"

"अपनी कमजोरी को समझते हुए भी तुमने फिर वही राग अलापना शुरू कर दिया ? बिचारी हमीदा अम्मा !"

"भगवान् से प्रार्थना करती हूं, उसके अच्छे दिन लौट आवें !"

"लेकिन पड़ोसी की जायदाद को हथिया लेने के अपने इस लालच को पूरा कैसे करोगी ?"

"वह हमें क्या उधार न दे देगा ? कहीं सात समुंदर पार चला जाएगा क्या ? हमारा दुश्मन होकर तो नहीं जा रहा है ! रेल और डाकखाने से हमारा रिश्ता उसके साथ बना रहेगा। हम सारा रुपया मनीआर्डर से भेज देंगे।"

"उधार नहीं मानेगा वह ! मुट्ठी का आधा रुपया भी समूचे से

होता है।

"प्रधानजी, से मांग लाओ !"

"अरी, उनका लालच क्या हमसे कुछ कम है ! वे खुद इस जमीन को हथिया लेने के चक्कर में पड़ जाएंगे।"

"तो क्या करें ?"

"दुनिया को अपनी ही चाल से चलने दे !"

हमीदा घर के काम करती-धरती अनमनी ही रही। कभी दरांती उठाती कभी कुदाल। कभी घास काटने लगती, कभी खेत गोडती। खाना बनाकर बेटे के लौट आने की आशा में रख दिया था। अंत में उदास होकर एक दीवार पर बैठ गई। नजर उसकी उसी रास्ते पर थी, जहां वह अपने बेटे को लौटता हुआ देखती—हल्द्वानी या नैनीताल से।

पर वह कहीं से भी उसे आता नहीं दिखाई दिया। उसने अपने हाथ का औजार जमीन पर डाल दिया, और टीले पर बैठकर और भी ऊपर तक उस रास्ते पर एकटक देखने लगी।

बाला आंगन के चबूतरे पर बैठा चिलम पी रहा था। किसनी दूसरे दिन सुबह के लिए चावल बीन रही थी। थाली में से फेंके गए धान के दानों को एक गौरैया ने देख लिया। वह फुदक-फुदककर निर्भय हो उसके सामने आ गई। उसका यह रोज का कार्यक्रम था।

गौरैया किस अचूक निशाने से धान को उठा, उसे छीलकर खाती जा रही थी ! किसनी को यह बड़ा सुहावना लग रहा था। कभी धान के मिलने में देर हो गई, तो वह चावल का दाना ही चिड़िया के आगे फेंक दे रही थी। क्या वह चिड़िया उस मानवी के मन के रहस्य तक पहुंच भी सकती होगी ?

बाला चिलम में फूंक मारते-मारते थक गया था। कोयले कुकाठ के थे, उनमें ताव आया ही नहीं। खीझकर वह बोल उठा—"किसू, अगर तुमने मन लगाकर मेरी चिलम भर दी होती, तो तम्बाकू के बढ़िया धुएं में मैं रुपया पैदा करने की कोई न कोई राह देख ही लेता। पर तुम तो उस बिचारे की सारी जमीन बख्शीश में ही हड़प लेने की सोच रही हो। जब तुम्हारा दिमाग ही सही काम नहीं कर रहा है, तो मैं क्या करूं ?"

थोड़े से चावल और रह गये थे बीनने को। सरसरी निगाह से उन्हें

देखकर समेट लिया उसने, शेप चावलों के ढेर में। फिर थाली में ही उन्हें छीटते हुए बोली—"देख लिया तुम्हारा दिमाग, महीने में बीसियों दिन इधर का माल उधर ढोते हो। तुमसे तो पीठ पर बोझा ढोने वाला डोट्याल बढ़िया, जो साल में दो बार बांध-बांधकर रुपया घर पहुंचा आता है! तुम इस मजूरी को व्यापार कहते हो?"

बाला ने चिलम दूर रख दी और अपनी जांघ पर थपेड़ी बजाता हुआ गाने लगा—"सब ठाठ पड़ा रह जावेगा, जब लाद चलेगा बनजारा!"

"कोरी बकवास!" थाली संभाल वह उठ गई।

"अगर अल्लादिया के पैर में मोच न आती, तो उसने घोड़ा खरीद ही लिया था। फिर तीसों दिन तेरे सामने घर बैठा मैं क्या करता? ले, चिलम भर ला! मैं अभी क्यों नहीं घोड़ा बेचकर रकम जमा कर लूं? गांव-गांव फिरने से यही क्या बुरा है कि मैं खेतों में मेहनत करूं।"

किसनी चिलम उठा खुश होकर भीतर गई ही थी कि हमीदा रोती हुई आ पहुंची—"अरे बाला, तुमने ऐसे ही झूठी दिलासें में मुझे भर दिया! लो, अब शाम होने को आ गई। अगर अल्लादिया नैनीताल गया होता, तो क्या अब तक न लौट आता! बताओ, अब मैं क्या करूं?"

"अरी अम्मा, नैनीताल न सही! गया होगा हल्द्वानी। वह कौन-सी विलायत है! अभी तो वहां से कई गाड़ियां आवेंगी।"

"अगर वह रात तक भी नहीं आया, तो मैं क्या समझू—वह कहां गया?"

"आवेगा-आवेगा, जरूर आवेगा! एक ही दूकान से क्यों, दूकान-दूकान में माल की जांच और भाव की परतीत होती है। फिर दूकानों की भीड़ में भी अपना नम्बर निकालना होता है। अगर आज नहीं आया, वहीं रात हो गई तो कल आ पहुंचेगा।"

"तो मैं रात को उस सूने घर में कैसे रहूंगी?"

"तुम्हारे घर में ऐसा कौन चांदी-सोना भरा है! उसमें ताला देकर सोने को यहां आ जाना। दो रोटी भी यहीं जीम लेना। किसनी क्या तुमको अपनी मां नहीं समझती?"

"अगर कल भी नहीं आया तो?" उसकी आंखें भर आईं।

बाला को इसका उत्तर देने की अड़चन किसनी ने मिटा दी। वह भीतर से चिलम मे फूक मारती हुई आ पहुंची। बाला ने बेसब्री से नारियल उसके हाथ से ले लिया और गुडगुडाने लगा। हमीदा के सवाल का बोझ जा पड़ा किसनी पर !

किसनी बोली—"क्यों नही आवेंगे ? देर-सवेर हो भी गई, तो क्या हमें बेसब्र हो जाना चाहिए ?"

"फिर उनको घर आते-आते क्यो बाघ उठा ले गया ? अगर अल्लादिया का भी यही हश्र हो गया, तो मैं सबर कहा से लाऊ ?"

"अगर नहीं भी आए, तो क्या तुम्हें उनके लिए ऐसी अनहोनी बात सोच लेनी चाहिए ! मुमकिन है पाकिस्तान चले गए होंगे !"

"पाकिस्तान चला गया ?" चौककर हमीदा बोली—"फिर अभी तक तुमने यह सच्चाई मुझ पर खोली क्यो नही ?"

"नही-नही, जल्दी मे मेरे मुह से···"

"जरूर यही सच्चाई है ! अब मैं क्या करूं ? हिन्दुस्तान की यह तोड़-फोड़, यह काट-छांट क्यों कर दी गई ? बाला, तुम देस-परदेश फिरते हो, तुम्हें सब सच्चाई मालूम होगी।"

बाला ने चिलम में एक दम और खीचा, इस बार बतिया सुलग गई थी। मुंह से खूब धुआ निकालकर वह बोला—"बाघ के मुह से बचकर अगर वह पाकिस्तान भी चला गया है, तो क्या बुरा है मां ?"

हमीदा ने ठंडी सास ली !

"नही-नही, अम्मा, मेरे मुह से जल्दी मे बिना सोचे-समझे वह लफ्ज निकल गया। बिना तुम्हें बताए वे उतनी दूर कैसे चले जाते ?"

"तो वह अभी तक लौटकर क्यों नही आया ? अब रात मे क्यों आने लगा ! मैं अकेली उस सूने घर मे कैसे रहूगी ?"

किसनी बोली—"अम्मा, तो मैं चलकर रात मे तुम्हारे साथ सो जाऊगी या तुम यही आ जाओ !"

"तुम्हारे साथ से क्या होगा ? मैंने वहां अल्लादिया की शादी की दावत के लिए जिन्स जमा कर रखी है; उसके लिए कपड़े और बहू के वास्ते जेवर बनाकर रखा है। वह सब यहां कैसे ले आऊ ?" कहती हुई हमीदा अपने घर

चली गई।

किसनी बोली—"क्यों, तमाखू बड़ा बढ़िया सुलग गया था, तुमने अरुचि से उसे अलग क्यों रख दिया ?"

"क्या करूं ? एकाएक बड़ी जोर का जाड़ा लगने लगा मुझे। शरमा-शरमी उनका साथ देना ही पड़ा, कहीं ऐसा न समझ लेती कि मैं उन्हें टालने को बहाना बना गया।"

"चलो, अब मैं तुम्हें बिस्तर में ओढ़ा दूं।"

बाला चारपाई पर पड़ते-पड़ते बोला—"किसनी, मैं भी यही समझता हूं, अल्लादिया कहीं दूर ही चला गया है—बम्बई या पाकिस्तान ! ओ हो हो—हो ! बड़ी जोर का जाड़ा। किसनी, एक कंबल और ओढ़ा दे !"

कंबल ओढ़ा देने पर वह उसके भीतर बड़बड़ाया—"और हम कब तक अम्मा को तरह-तरह के बहाने बताकर बहकाते रहेंगे ?" फिर जाड़े से कांपता हुआ बोला—"किसनी, अपनी रजाई भी ओढ़ा दे मुझे !"

"हां-हां, वह भी लो ! क्यों, अभी जाड़ा लग ही रहा है क्यों ?"

"बहुत जोर का !"

"खाने को क्या बनाऊं ?" उसने रजाई भी ओढ़ा दी।

"अरी, यहां जाड़ा मुझे ही खाए जा रहा है, तुझे खाने की पड़ी है ! कोई कपड़ा और नहीं है क्या ?"

"तुम्हारा वह गरम कोट ?"

"हां, उसके भीतर वह जूट का अपना पेटीकोट भी सही।"

किसनी ने उसके ऊपर कपड़ों का पहाड़ लगा दिया, फिर पूछा—"क्यों, जाड़ा गया या नहीं ?"

"मैं सोचता हूं, अगर वह कल को लौट आया तो ठीक है। अगर बंबई या पाकिस्तान से भी उसकी चिट्ठी नहीं आई, तो अम्मा की बात ही कहीं सच तो नहीं है !"

घबराकर किसनी ने पूछा—"अम्मा की कौन-सी बात ?"

इतने में बाहर से चिल्लाता हुआ इसरिया आ पहुंचा—"बाला दद्दा ! बाला दद्दा !"

किसनी ने बाहर आकर देखा। उसके दाढ़ी बढ़ी हुई थी, ठीक-ठीक नहीं

पहचान सकी। वह उसके पैर छूकर बोला—"मामी, जै हिंद !"

अब वह पहचान गई और खुश होकर बोली—"अरे इसरिया लल्ला, कब आए ? अभी आ ही रहे हो क्या ? जेल से छूट गए ?"

"हां, सरकार से समझौता हो गया। सभी राजनैतिक कैदी छोड़ दिये गए। दद्दा कहां है ?"

"वे बुखार मे पड़े हैं। चलो भीतर !"

इसरिया नैनीताल मे अखबारों का नौकर था। झंडा-सत्याग्रह मे गिरफ्तार कर लिया गया था। एक साल के लिए उसे जेल हुई थी। वह बाला की बुआ का लड़का था। अभी उसके रहने-खाने का कोई ठिकाना नही हुआ था। नैनीताल मंदिर की धर्मशाला मे वह रहता था, वह खाली न थी।

कुछ उसकी लटी-पटी तो सरकार ने कुर्क कर ली थी; बाकी जेल में रहने पर जो कुछ भी उसका वहा रह गया था, वह किसीने सब साफ कर दिया।

उसे मुआवजा मिलेगा और उसके रहने-खाने का इंतजाम किया जाएगा। कोई ठीक नौकरी भी उसे दी जाएगी। तब तक के लिए वह बाला की शरण में आ गया।

इसरिया ने बाला के ओढने के पर्वत पर हाथ रखकर कहा—"दद्दा-जी, क्या हाल है ?"

"जाड़ा-बुखार है। तू आ गया, बड़ी खुशी की बात है !"

इतने मे किसनी उसके लिए एक गिलास मे चाय ले आई—"लो खाना खाया या नही ?"

"अब रात को ही खाऊंगा।"

उसने बाला से पूछा—"तुम्हारे लिए भी लाऊं ?"

बाला ने इसका कोई जवाब न देकर, मुह बाहर कर उसे देखा और कहा—"अरे इसरिया, क्या जेल में दाढ़ी बनाने की इजाजत नही थी ?"

"थी तो, पर मैंने आजादी पाने तक के लिए इसकी कसम खा ली !"

इतने मे पास के मकान से हमीदा का रोना-चिल्लाना सुनाई दिया। इसरिया ने घबराकर पूछा—"अम्मा क्यो रो रही है ?"

"बेटे की ममता ! मालिक को नरभक्षी बाघ खा गया, तुम्हें मालूम ही होगा ! बेटा इनसे बिना कुछ कहे-सुने न जाने कहां चल दिया। उसी दुख मे पड़ी है।"

"इनका बेटा तो मैंने नैनीताल में बोट हाउस क्लब के बाहर मैदान में बैठा देखा था।"

बाला खुश होकर उठने लगा—'चलो, चलो, फिर अम्मा को यह खुश-खबरी सुना दो !"

किसनी ने उसे बिस्तर से उठने नही दिया—"सुबह भी तुमने ऐसा ही किया। जितना फायदा दवा से होता है, उतना ही जरूरी परहेज भी है। अभी तुम्हें उतना जाड़ा लगा, और अभी तुम बाहर ठंड में कूद जाने को तैयार हो गए ! इसका फल क्या होगा ?"

"अरे दूसरे की भलाई की राह में अपना कुछ भी नही बिगड़ता !"

"तो तुम पड़े रहो, मैं जाकर बता आती हूं।" किसनी ने फिर उसे ओढ़ा दिया।

बाला ओढ़ने के भीतर से ही बोला—"अब इसके आ जाने से अम्मा के साथ का भी ठीक हो गया। इसकी चारपाई वही डाल दी जाएगी। भगवान एक दुख देता है, तो एक सुख का भी इंतजाम कर ही देता है !"

किसनी इसरिया को लेकर हमीदा के पास जाकर बोली—"अम्मा, तुम नाहक फिकर में पड़ गई हो ! हमने कहा नही था—अल्लादिया ने जल्दी की वजह से ही तुम्हारी नींद नही तोड़ी होगी। वे नैनीताल ही पहुंच गए हैं। इनसे मिले वहां। ये अभी नैनीताल से आ रहे है।"

हमीदा ने इसरिया के कंधे पर हाथ रखकर पूछा—"कौन है यह ?"

"उनकी फूफी के लड़के ! अभी जेल से छूटकर आये है।"

बुढ़िया ने कुछ धीरज रखकर पूछा—"क्या कहा अल्लादिया ने इनसे ?"

किसनी ने कोई जवाब नही दिया। हमीदा फिर अधीर होकर बोली—"क्यों जी, बोलते क्यों नहीं ?"

"अम्मा, क्या बोलता वह ! वह होगा बोट हाउस क्लब के मेंबरों की इनजारी में। वे सब गुद को क्या लाट साहब से कम समझते हैं ? और मैं

जेल की कालिख मे सना। वह क्या बात करता मुझसे ?"

"तुम्हे पूछना था उससे, वह बिना अपनी अम्मा को बताए क्यों चला आया यहां ?"

"अब कल तो खुद ही आ जावेगा !"

किसनो बोली—"तो मा, ये तुम्हारे बेटे की खुशखबरी तो लाये ही रात को यहा रहकर तुम्हारा साथ भी कर देंगे।"

यही किया गया। इसरिया खा-पीकर हमीदा के घर आ गया। उसने अपनी चारपाई बाहर बरामदे में ही डाल ली और सो गया।

सोते समय हमीदा ने उससे अंदर ही सोने का आग्रह किया था, पर वह नही माना। उसका सकोच भगाने के लिए अम्मा को यह भी कहना पड़ा कि अगर कोई बाघ उसकी टाग घसीट ले गया तो वह गुनहगार नहीं होगी।

इसरिया फिर भी निडर ही रहा। लेकिन सोते समय जो डर का बीज उसके मन मे पड गया था, वह उसकी नीद मे अकुरित हो गया। उसने बाघ की गर्जना सुनी।

पास-पड़ौस वाले इस बात की गवाही देते हैं कि और किसीने भी वह गर्जना नही सुनी। निकटतम पडौसी किसनी भी यही कहती है, बाला भी।

बाघ की गर्जना से जब इसरिया की नीद खुली तो उसने अपनी ओर दो चमकती हुई आखो को झपटते देखा। उसके पास बचाव के लिए कुछ भी न था। लेकिन उसकी हिम्मत ने साथ दिया और सूझबूझ ने भी। वह जोर-जोर से चिल्लाया—बाघ ! बाघ ! और उसने अपना कंबल उसके ऊपर डाल दिया।

उसके इस चिल्लाने की बड़ी अजीब प्रतिक्रिया हुई। हमीदा सोचने लगी—मरा छोकरा ! मैंने कहा नही था पहले ही, कि बाहर मत सो। उसकी जीभ मे इसान का लहू लग गया है, मैं बाहर जाकर क्या उसे बचा सकती हू ?

और भी नजदीक के जिन पडौसियों के कानो मे इसरिया की चिल्लाहट गई थी, सभी अपने-अपने घरों मे दुबक गए। दरवाजे खोलकर बाहर आना तो एक तरफ, कुछ ने कुडियो मे ताले डाल दिए और कुछ ने दरवाजो के

आगे भारी-भारी संदूक जमा दिए।

लेकिन वाला ने कहा—"किसनी, गंडासा कहां है? मेरा धरम बुला रहा है मुझे बाहर!" वह उठकर बाहर जाने लगा।

किसनी ने उसे रोक लिया—"मैं जाती हूं! तुम्हें धक्के लग रहे हैं, और मेरा रखा हुआ गंडासा तुम ढूंढ़ भी नहीं सकते।"

किसनी द्वार खोलकर बाहर आई, उसके पीछे-पीछे वाला भी गिरता-पड़ता। किसनी ने गंडासा उठाया। चारपाई पर देखा, इसरिया बिना कंबल के नंगा! डर के मारे उसकी आवाज बंद हो गई थी। किसनी ने जब उसे टटोला तो सहारा पाकर उसकी सांस में सांस आई। धीरे-धीरे उसके होंठों पर लफ्ज बनने शुरू हुए, पर फिर भी साफ-साफ नहीं—"हूं-हूं!"

वाला ने उसके अंग पर हाथ फेरते हुए पूछा—"कहीं उसका पंजा या दांत तो नहीं लगा?"

"दांत क्या, वह तो मुझे समूचा ही निगल गया होता, अगर मेरी अक्ल नहीं जाग उठी होती! मैंने अपना कंबल उसके ऊपर डाल दिया, और वह समझा, जरूर यह कोई सवा शेर है! वह भाग गया।"

अब तो वहां से शेर का भाग जाना सुनकर सभी लोग चारों तरफ से दौड़े-दौड़े आ पहुंचे। प्रधान जी बोले—"नहीं जी, शेर नहीं हो सकता! कोई कुत्ता होगा।"

"वाह, अच्छी कही! शेर की गरज सुनी—कुत्ते के भौंकने को नहीं पहचानता क्या मैं?"

एक ने कहा—"अरे बिल्ली होगी, तुमने उसकी आंखों की झलक देखी होगी! शेर की मौसी!"

अब तो हमीदा भी द्वार खोलकर वहीं आ गई—"बेटा, मैंने कहा नहीं था तुझसे—अंदर ही सो रह! लेकिन तूने मेरी सीख को माना ही नहीं! अब तुझे बाघ उठा ले जाता, तो यह दाग मेरे ही सिर पर न रह जाता कि एक बेगुनाह लड़का, बुढ़िया ने घर के भीतर जगह न देकर मरवा दिया!"

प्रधानजी बोले—"भाई, तुमने तो कोई बाघ की दहाड़ सुनी ही नहीं! वह होता तो इतने नजदीक आकर तुझे घसीट न ले जाता?"

"अजी, घसीट कैसे ले जाता? मैंने उसके ऊपर अपना कंबल जो डाल

दिया और वह अंधा होकर भाग गया !"

हमीदा सिर पीटकर वोली—"और मेरे वेटे को इतनी अकल भी न आई कि वह उसके ऊपर अपनी रजाई डाल देता !"

वाला ने झट से उसका प्रतिवाद करते हुए कहा—"अम्मा, तुम फिर यह वहकी-वहकी वातें करने लगी !"

"फिर और कैसे मैं उसकी सूनी जगह को पूरा करूं?"

"अल्लादिया को यह इसरिया वोट हाउस क्लव में बैठा हुआ कल नहीं देख आया क्या ?"

प्रधानजी ने कहा—"भली चलाई इसके देखने-सुनने की ! जव यह बिल्ली को शेर वता रहा है, तो किसीको भी अल्लादिया कह सकता है ! क्यों रे इसरिया, क्या तूने उसके साथ कोई वात की ?"

"वात करने को कोई थी ही नहीं, तो क्या करता ? दूर से देखा वस !"

वाला अपना-सा मुह लेकर रह गया और किसनी उसका हाथ पकड़कर वोली—"चलो, बुखार में तुम ऐसे ही बिना ओढे चले आए हो, तबियत कहीं और खराव न हो जाए !"

किसनी वाला को ले गई और उसे चारपाई पर फिर ओढ़ाकर सुला दिया। वाला मुह ढके-ढके फिर वडवड़ाया—"भली चलाई इसरिया की ! न जाने इसने क्लव के दरवाजे पर बैठा किसे देखा और अल्लादिया वता दिया !"

किसनी वोली—"ज्यादा वातें मत करो। चुपचाप पड़े सो रहो !"

इसरिया की वातों से हमीदा को कुछ भरोसा जागा था, तो प्रधानजी ने उसकी आखों की कमजोरी वताकर उसका दिल तोड़ दिया। वे जाते हुए वोले—"वाघ था या नही, अव इस वात को छोड़ो, दिशाएं खुलने लगी हैं। अव तो उठने का भी वखत हो गया। चलो, सव अपने-अपने काम से लगें !"

"अव आज से मैं तुझे यहा वरामदे में सोने नहीं दूगी !"—कहकर हमीदा भीतर जाने लगी।

इसरिया ने भी विस्तर लपेट दिया और वोला—"मां, मुझे एक लोटा दे दो, जगल जाना है।"

हमीदा ने एक ओर रखे हुए टीन के मग को दिखाकर कहा—"उसे

ले जाओ !"

इसरिया के जंगल जाने पर हमीदा ने उसकी चारपाई कमरे में उठा-कर उसी समय अपने भीतर के एक कमरे में रख दी।

इसरिया जब लौटकर आया तो एक हाथ में एक जोड़ा जूते का और एक टोपी भी लिये था। हमीदा ने उसे देखा तो घबराकर बोली—"ये जूते और टोपी तो अल्लादिया की हैं ! तुझे कहां मिली ?"

"यहीं जंगल में !"

हमीदा ने जूते और टोपी उसके हाथ में छीनकर फिर पहचाना, और रोते-रोते पूछने लगी—"अरे तू कहता है, कल तूने उसे नैनीताल में देखा ? अरे, तो उसके पैर में जूता नहीं, और सिर नंगा था क्या ?"

"यह तो मैंने ठीक-ठीक ख्याल ही नहीं किया।"

"पर ये जूते और टोपी उसीकी हैं। क्यों वह इन्हें यहीं जंगल में फेंक-कर नैनीताल चला जाता ? नैनीताल का रास्ता तो उधर है। फिर वहां जाते हुए उसे इन्हें उतार देने की जरूरत ही क्या थी ?" कहते-कहते हमीदा के चेहरे का रंग उतर गया और आवाज क्षीण पड़ गई।

उसे ढीला पाकर इसरिया बोल उठा—"मां, मैं समझ गया, पर उसे कहूं कैसे !"

"अरे रे ! तू क्या कहेगा ? क्या मैं इतनी कम अकल हूं, जो इस मोटी-सी बात को न समझ सकूं ?" फिर उसका गला रुंध गया और वह जोर-जोर से रोने लगी।

फिर बुढ़िया का रोना सुनकर बाला बिस्तर छोड़कर उठ खड़ा हो गया। किसनी ने दौड़कर उसका हाथ पकड़ रोक लिया—क्यों-क्यों, क्या हो गया तुम्हें ? फिर जाने लगे ?"

"दो-चार बातें कहकर उसे दिलासा दे आता हूं।"

"नहीं, मैं तुम्हें अब नहीं जाने दूंगी ! तुम्हारी बीमारी बढ़ गई तो [illegible] मैं क्या करूंगी ?"

"छोड़ो किसनी ! इस बात को समझ लो, बीमारी [illegible] ही नहीं जाती, न ही दवा पी लेने से। वह दूसरे की हमदर्दी से भी [illegible] अम्मा का अब यहां और कौन है ? अब अगर [illegible]

समझ लिया, तो हमने मनुष्यता के धर्म को नष्ट नही कर दिया क्या ?"

"तो तुम बैठो, यही सोए रहो, मैं जाकर उन्हें समझा देती हूं !"

"तुम नही समझा सकोगी ! उनका मन कमजोर है; उनको उन्हींके लफ्जों में समझाना होगा। तुम्हें उन लफ्जों की पहचान नही है !"

किसनी ने चारपाई के नीचे से उसकी चप्पल निकालकर उसे पहना दी, उसके सिर पर टोपी दे कंबल भी ओढा दिया।

वाला ने वहां जाकर देखा, हमीदा अल्लादिया के जूते और टोपी लेकर जोर-जोर से रो रही थी। इसरिया उसके सामने बड़े पछतावे से हाथ मलते हुए खड़ा था। बाला की समझ में कुछ नही आया। उसके पीछे-पीछे किसनी भी चली आई थी।

हमीदा रोती ही जा रही थी। वह कुछ नही बोली तो बाला ने पूछा—"इसरिया, ये जूते और टोपी किसकी है ?"

अब हमीदा बोली—"तुम मुझे कितने दिन तक धोखे में रख दोगे ? इसको सिखाकर ले आये कि इसने अल्लादिया को नैनीताल में देखा है और यह सच्चा आदमी जंगल से उसके जूते और टोपी उठाकर ले आया। अब बताओ, वह नगे पैर और नगे सिर लाट साब से मिलने नैनीताल गया, या बाघ उसे पेट भरने को ले गया—जहां से यह उसके जूते और टोपी उठाकर ले आया !"

एक क्षण बाला अवाक् रह गया। उसे कुछ भी नही सूझा। फिर उसको अकल लौटी और कहने लगा—"मां, वह नया जूता और टोपी ले गया होगा ! जूता फटा और टोपी मैली, इन्हें पहनकर लाट साहब के पास जाने में उसे शरम लगी होगी, सो इन्हें फेंक गया !"

हमीदा बोली—"तुम सिर्फ मेरा मन रखने के लिए ही यह बातें बना रहे हो। अच्छा, मैं मान लेती हूं, आज के दिन और भी। अगर आज भी नैनीताल से लौटकर नही आया तो ?"

बाला गाल पर हाथ रखकर कुछ सोचने लगा, और इसरिया के मन में भी यह विचार आने लगा कि शायद उसे दूर सड़क पर से देखने में वहम हो गया।

हमीदा अपने आंसू पोछती हुई बोली—"तुम बुखार का बहाना ओढ़-

कर पड़े थे। आ गए, मेरे रोने-चिल्लाने पर ताला लगाने। अच्छी बात है, अगर तुमने मेरे अल्लादिया को शाम तक मेरे सामने खड़ा नहीं किया, तो फिर मुझे चुपाने के लिए तुम्हारे पास दूसरी क्या कहानी होगी ?"

बाला ने अल्लादिया की तरफ देखकर इसरिया से पूछा—"तुमने उसे देखा है न, क्लब में बैठे हुए ?"

अब इसरिया ने अपने वहम को छिपाकर कहा—"हां-हां, देखा क्यों नहीं।"

बुढ़िया उस समय चुप तो हो गई, पर उसके मुंह से बड़े तीखे बोल निकल पड़े—"जाओ, जाओ। तुम उसके हाथ अपना बूढ़ा घोड़ा बेच, उसके बाप की हड्डियों की रकम ठग लेना चाहते थे। मैं तुम्हारी चालाकी समझती थी। खुदा ने उसके पैर में मोच देकर मदद कर दी। हां-हां, तुम्हारी औरत दिखावे के लिए मुझे हमदर्दी दिखाती है, पर उसकी नजर चिपकी हुई है—मेरे पानी के नीचे की जमीन और पक्के मकान पर।"

"मां, तुम्हारे लफ्ज तीर की तरह मेरी छाती में गड़ गए। मैं किसनी की इस नीयत पर···" वह इतना ही कह पाया था कि किसनी उसे हाथ पकड़कर अपने घर खींच ले गई। वहां उसे चारपाई पर सुलाकर ओढ़ाते हुए बोली—"दुखों के बोझ से अम्मा का दिमाग सही काम नहीं कर रहा है, और तुम मुझे गाली खिलाने के लिए इस बुखार में भी वहां पड़े रह गए।"

"इसरिया को झूठ बोलने से मतलब ?"

इसरिया अपनी चारपाई पर बैठा-बैठा बड़े गहरे विचार में डूब रहा था। हमीदा भीतर चली गई थी। रो तो नहीं रही थी वह, पर रुआंसी होकर कुछ बड़बड़ा रही थी।

इसरिया अल्लादिया की टोपी और जूतों के बारे में सोच-सोचकर अब यह समझने लगा कि उसने बोट क्लब-क्लब में जिसे देखा, वह अल्लादिया नहीं हो सकता। और वह बुढ़िया के इस विचार को भी समर्थन नहीं दे सका कि उसे बाघ उठा ले गया है।

हमीदा के घर का वायुमंडल उसे ठीक नहीं जचने लगा। वह बाला को अपनी रिहाई का समाचार देने ही आया था। उसके सिर पर जो हमीदा की चौकीदारी थोप दी गई, उसे खलने लगी। अंत में उसे

जाना तो था ही,और इसके लिए उसने बहाना भी ढूंढ ही लिया।

वह हमीदा के पास जाकर बोला—"मा, मैं मैंनीताल जाकर अल्लादिया को बुला लाता हू।"

"अगर तू उसे बुला लाया तो, तूने मेरे दिल में—उसके जूते और टोपी दिखाकर जो घाव कर दिया है, वह भर जाएगा।"

इसरिया ने जब मैंनीताल लौट आने की जल्दी दिखाई तो बाला समझ गया, और किसनी बोली—"जाना ही है तो खाना खाकर जाओ।" इस पर भी जब वह नहीं माना, तो किसनी ने उसे चाय और नाश्ते के लिए रोक लिया।

चाय देने से पहले किसनी उसे एक गिलास हमीदा को दे आने को कहा। वह आनीकानी कर गया, तो वह खुद ही चाय लेकर उसके पास गई—"अम्मा, लो चाय पी लो।"

हमीदा चुप ही रही। किसनी ने चाय का गिलास खिड़की में रख दिया और बोली—"अम्माजी, आप नाहक ही मुझसे नाराज हो गई। पर मैं अपना फर्ज करूंगी ही। यह चाय रख जा रही हूं। आप इसे पी लें या रहने दें। और कोई सेवा हो तो बतावें।"

हमीदा इसपर भी कुछ न बोली तो किसनी उल्टे पैरों चली आई। उसे बाला की देख-रेख करनी थी। घर आकर उसने देखा, इसरिया का कही पता ही न था।

बाला मुह ढके पडा हांफ रहा था। किसनी ने इधर-उधर देखकर इसरिया को पुकारा। फिर बाहर जाकर कुछ और जोर से भी। पर कही से कोई उत्तर न मिलने पर वह बाला के पास लौट आई और पूछा—"क्या तुमने इसरिया लल्ला को कोई चीज लेने ऊपर दूकान मे भेजा है?"

"नही तो।"

"फिर वे कहा गये?

"मैं समझता हू, शायद प्रधानजी के यहा।"

"क्यों, क्या मैंने उनकी आव-भगत में कोई कसर कर दी थी?"

"नही, शायद हमीदा अम्मा ने अपने दुख की जलन मे उससे भी कुछ कह दिया।"

"अच्छा, मैं प्रधानजी के यहां से उसे बुला लाती हूं।"

"नहीं, कोई जरूरत नहीं। इसमें हमारा क्या कसूर है ?"

"प्रधानजी के यहां से तुम्हारे बुखार की दवा भी तो लानी है।"

"पर उसे जिद कर मत बुला लाना। वह गया है तो आवेगा भी नहीं।"

किसनी प्रधानजी के यहां से बुखार की दवा मांग लाई, जब उसे वहां कहीं भी इसरिया की छाया नहीं दिखाई दी तो लौट आई।

बाला दवा खाकर कुछ आश्वस्त हुआ। तीन-तीन घंटों बाद उसने दो खुराकें और भी खाईं।

शाम होने को आ गई। और हमीदा झूठे दिलासे में—अल्लादिया के नैनीताल से लौट आने की आशा में—उसकी राह में आखें बिछाती रह गई। अंधेरा होते-होते उसका मुंह लटक गया और फिर वह जोर-जोर से रोने लगी। किसनी से हाथ छुड़ाकर बाला फिर उसके पास जाने लगा तो वह बोली—"अम्मा के पीछे तुम्हारा दिमाग भी घूम गया क्या ?"

"नहीं किसनी, ऐसा मत सोचो। स्वार्थ ही सबका दिमाग घुमाता है।"

किसनी अनखाकर बोली—"तुम हमेशा मेरा ही कसूर समझते हो। क्या लालच है मेरा ? क्या मैं अम्मा की दुश्मन हूं ? क्या मैं उनको छूकर फिर गंगाजल से नहाती हूं ? क्या मैं उनके खुदा को अपने ही भगवान् का दूसरा नाम नहीं समझती ? मैं कभी नहीं चाहती कि वे अपनी खेती-पाती मेरे लिए छोड़कर कहीं चली जाएं।"

"अच्छा, मैंने तुम्हारी बातों का विश्वास कर लिया। अब तुम मुझे रोको नहीं।"

किसनी ने उसे जाने दिया। हमीदा ने द्वार बंद कर लिए थे। बाला के खटखटाने पर बोली—"क्यों रे, तू फिर क्यों आ गया ? क्या अपनी बहू की इजाजत लेकर आया है ?"

"भलाई के लिए वह रोकने वाली कौन है ?"

"किसकी भलाई ? कैसी भलाई ? भलाई कि तुम्हारी अपनी खुदगरजी, कि मेरे रोने से तुम्हारी नींद में खलल न पड़े। जा-जा, देख—वह फिर तेरा हाथ पकड़ तुझे बुलाने आ गई।"

बाला ने देखा, सचमुच किसनी भी उसके पीछे आकर निकट ही खड़ी हो गई थी। उसने इशारे से लौट चलने को कहा।

"दरवाजा खोलो अम्मा। रात हो गई। किसनी तुम्हारे लिए खाना बना रही है। मैं चिराग जलाने आया हूं।"

"जा-जा, मैंने खाना बनाकर रखा है, अपने और अपने बेटे के लिए भी। और अब वह रात की बस से आने वाला है? उसके जूते और टोपी लिए मैं बैठी हूं। मेरे घर में आग लग गई, और तू कैसा चिराग जलाने आया है? जा, भाग जा, मैं नहीं खोलूंगी दरवाजा।"

किसनी फिर उसका हाथ पकड़कर खींच ले गई। "चलो, दवा खाने का वक्त हो गया।"

दो-तीन दिन बीत गए। हमीदा की दशा में कोई अंतर नहीं आया। बाला की तबीयत कुछ ठीक हो गई थी। उसके साथ और लोगों ने भी हमीदा को समझाया कि अगर बाघ उसपर झपटा होता, तो क्या जंगल और खेत या आंगन में कहीं खून पड़ा न दिखाई देता!

हमीदा को कुछ तसल्ली होती, वह चुप हो जाती। मुंह-हाथ धोती, खाना खाती। पर फिर उसके दिमाग में वही सनक लौट आती और उसका रोना-चिल्लाना जारी हो जाता।

उस रात जब हमीदा बड़ी जोर से अल्लादिया को पुकार-पुकारकर रोने लगी, तो बाला, प्रधानजी तथा कुछ दूसरे लोग भी उसे समझाने को खड़े थे। इतने में एक कुली के सिर पर अपना बिस्तर-ट्रंक रखे पटवारी जी आ पहुंचे। कुली के हाथ में धुएं से काली एक लालटेन भी थी।

"यहां क्या कोई मीटिंग हो रही है, रोने की? इस सूनी रात में इसी आवाज से खिंचकर मुझे इधर आना पड़ा। कौन है यह रोने वाली?"

"खानसामा अब्दुल्ला की घरवाली।"

"अभी तक इसका वह घाव पूरा नहीं हुआ? अब तो काफी दिन हो गए।"

"अब इसे अपने बेटे का रोना है।"

"क्या उसे कहीं नौकरी नहीं मिली?"

कौन उनके इस प्रश्न का उत्तर दे? सभी चुप कर गए।

कुली पटवारीजी के सभी सामान लिए खड़ा-खड़ा बोला—"सामान कहां रखूं ?"

प्रधानजी कुली को रास्ता दिखाते हुए बोले—"चलो, मेरे यहां रख दो।"

पटवारीजी हमीदा के द्वार खटखटाकर बोले—"अम्माजी, आपको क्या तकलीफ है ? मैं सरकारी आदमी हू । आपकी मदद के लिए आया हू।"

एक क्षण के लिए रोना बंद कर हमीदा ने भीतर से कहा—"तो क्या तकलीफ होने पर रोना कानून में मना है ?"

"लेकिन अम्माजी, हर चीज की हद होती है, एक मियाद भी !"

हमीदा फिर-रोते-रोते बोली—"जो चोट पूरी होने लगती है, उसके रोने की हद होती है। जो बराबर चोट ही बनी रह जाए, उसका क्या हो ?"

"धीरज से सब कुछ होता है ! दरवाजा खोलिए । ये आपके लिए खाना लेकर आयी हैं । दुख-तकलीफ से भी खाना खाकर ही लड़ा जा सकता है।"

वह बोली—"मेरे लड़के का पता बता सकते हो ?"

पटवारीजी ने उपस्थित लोगों से सलाह-मशवरा कर कहा—"जहां भी होगा, आ जाएगा ! हम इधर-उधर उसका हुलिया बताकर सबको आगाह कर देंगे।"

"कौन, तुम लाट साहब हो क्या ? क्या हुलिया बताओगे ? उसके जूते और टोपी की पहचान तो यहीं छूट गई !"

पटवारीजी को फिर बाला ने कुछ समझाया और वे बोले—"अम्मा, कोई फिकर की बात नहीं है ! तुम्हारा ख़याल गलत है ! वह जहां भी होगा, हम रेडियो से उसे ख़बर कर देंगे। वह जल्दी ही तुम्हारे पास आ आएगा। नहीं तो उसकी चिट्ठी आ जाएगी।"

बड़े निश्चय के शब्दों में वह बोली—"कहीं से कभी नहीं आएगा ! तराई में कुछ जादूगर बाघ का भेस रख लेते हैं। फिर वे औरतों को मार-कर उनके जेवर उतार लेते हैं।"

प्रधान जी बोले—"तो तुम्हारा बेटा कौन-से जेवर पहने था ?"

हमीदा बोली—"बाप की बिक्री के रुपये थे उसकी जेब में। मुझसे छिपाकर रखे थे। उन्हीं के लिए बाघ ले गया उसे !"

पटवारीजी ने फिर वहां खड़े लोगों से बातचीत की। किसी नतीजे पर पहुंचे, फिर बोले—"अम्माजी, आप धीरज रखें ! हम कल इस बात की सरकारी जांच करेंगे। दरवाजा खोलिए। यह खाना ठंडा हुआ जा रहा है। जितनी इच्छा हो, खा लीजिए।"

हमीदा ने कोई जवाब नही दिया, न द्वार ही खोले, और रोने का तार भी नहीं तोड़ा। अन्त मे सभी इस बात पर एक मत हो गए कि बेचारी का मानसिक संतुलन गड़बडा गया है। सभी अपने-अपने घर चले गए।

दूसरे दिन सुबह भी नही होने पाई थी कि उसकी करुण पुकार सुनाई देने लगी—"किसनी ! किसनी !"

किसनी रात-भर उसके रोने से जागी हुई, तुरन्त ही उसकी पुकार का उत्तर देने उसके घर दौड़ी हुई जा पहुंची। हमीदा का द्वार खुला पडा था। किसनी के हाथों का स्पर्श पाकर वह बोली—"देख, मेरी दोनो आखें सूज गई हैं, और मुझे कुछ भी नही सूझ पड़ता !"

"मा, कल रात तुमने गाव के चार भले आदमियों की बातों पर कुछ भी ध्यान दिया होता, तो यह नौबत न आती ! अब सिर्फ एक ही उपाय है। पहली बस से नैनीताल चलो, वहा अस्पताल में भरती कराकर तुम्हारा इलाज कराया जाएगा। मैं जाकर प्रधानजी से कहती हू।"

"नही-नही, मैं अस्पताल हर्गिज नही जाऊंगी ! ये लोग मेरी दोनों आंखों मे सुई चुभाकर हमेशा के लिए मेरी दुनिया के चांद-सितारे बुझा देंगे।"

"अब भी अगर तुम दूसरों की बातों पर ध्यान दे सकती तो···"

"तुम सबसे पहले मेरी उंगली पकड़कर नदी की तरफ ले चलो। मैं दिशा-मैदान जाऊंगी। हाथ-मुह धोकर फिर तुम्हारी बातें समझ लूगी।"

किसनी ने बड़ी समवेदनापूर्वक हमीदा की यह सारी सेवा कर दी। फिर बरामदे मे उसकी चारपाई बिछा दी। वह बोली—"नही-नही, यहां नही—अन्दर, बिलकुल अंधेरे में लिटा दे मुझे कही ! आंखों से तो कुछ भी

नही दिखाई दे रहा है। पर सूरज की रोशनी पलकों को फाड़कर मेरे दिमाग में घाव कर दे रही है।"

अम्मा की चारपाई वहां से हटाकर, भीतर अंधेरे कमरे में बिछाकर किसनी अपने घर से एक लोटा ले प्रधानजी के यहा से दूध मागने गई।

प्रधानजी ने पूछा—"उनकी आखों की पीड़ा कैसी है?"

"दोनो आखें सूजकर गेंद-सी हो गई हैं। बिलकुल दोनो पलकें एक-जान हो जाने से कुछ भी नही दिखाई दे रहा है।"

पटवारीजी ने कहा—"उन्हें फौरन ही आंख के अस्पताल मे भरती करा देना चाहिए।"

एक सेवक जो पटवारीजी की लालटेन की काली चिमनी पोछ रहा था, बड़े आराम की सास लेकर बोला—"हा, बुढ़िया वहां रात को चिल्ला-चिल्लाकर लोगों की नीद नही तोड़ने पावेगी।"

उसकी इस कठोरता पर किसनी ने दूध का लोटा लेते हुए कहा—"आदमी को दूसरे की तकलीफ को अपनी ही समझना चाहिए!"

हमीदा जब पानी-पानी चिल्ला रही थी, किसनी ने वहा पहुचकर कहा—"पानी ठीक नही होगा। मै तुम्हारे लिए बढ़िया दूध लायी हूं। तुमने रात खाना ही नही खाया। दूध से तुम्हारी भूख भी मिटेगी, और प्यास भी बुझ जाएगी। मैं इसे गरम कर लायी हूं।"

"नही, गरम दूध से मेरे और भी आग लग जायेगी। पानी, पानी!"

किसनी को उसकी जिद के आगे हार माननी पड़ी। पानी पिला देने के कुछ देर बाद उसने फिर दूध पीने को कहा तो वह मान गई। भूखी तो थी ही, थोड़ा-थोड़ा कर वह सारा दूध पी गई। बदन मे कुछ ताकत आ जाने से उसकी आख की पीड़ा को चैन मिला और मन का दुख हरा हो गया, वह फिर रोने लगी।

अब तो तन और मन दोनों की पीड़ा से वह जर्जरित हो उठी। पास-पड़ौसी भी उसकी दवा-दारू और समझाने-बुझाने मे असफल होकर ऊब उठे।

कुछ दिन बीत गए। हमीदा किसी अस्पताल में जाने को राजी नही हुई। छोटे-मोटे इलाज—जिसने जो बताया—किये गए, पर कोई भी

कारगर नहीं हुआ। दिन-भर लोग अपने काम-धन्धे मे भूले रहते। पर रात मे हमीदा की पीडा बढ़ जाती और उसका रोना-पीटना शुरू हो जाता।

कोई दवा काम नही आई, किसी का समझाना-बुझाना भी सफल नही हुआ। कुछ लोगों ने कहा—इसका दिमाग फिर गया है; और कुछ ने समझा—इसे कोई भूत-प्रेम चिपट गया है।

अल्लादिया का कुछ पता नही चला। कई दिन हो गए, न तो वह वापस आया, न ही उसकी कोई चिट्ठी, कोई समाचार या किसीके मार्फत कोई सन्देश ही मिला। सबने यही अन्दाज लगाया कि या तो वह बम्बई चला गया, या पाकिस्तान। कुछ लोग हमीदा के विश्वास मे भी अपना अनुमान मिलाकर कहते—संभव है, उसे बाघ ही ले गया हो।

हमीदा की परिस्थिति दिन-रात बिगडती गई। उसकी भूख भी कम होती गई और भोजन के प्रबध भी टूटने लगे।

अन्त में एक दिन वाला ने प्रधानजी के पास जाकर कहा—"ऐसा जान पडता है, अब इनकी आखो की रोशनी बिलकुल चली गई। मेरा भी बनज-व्यापार सब छूट गया।"

प्रधानजी बोले—"तुमने घोडा बेच दिया, ठीक ही किया। अरे गाव-गाव, नगर-नगर मारे-मारे फिरने से क्या बुरा है तुम अपने घर ही मे रहने लगे। अल्लादिया के बदले उस अन्धी बुढिया की सेवा का भार तुम्हारे ऊपर पड गया।"

"नहीं, उसका भी हमें कोई दुख नही है। हमें उसकी सेवा की कोई शिकायत नही है। हम दोनों दिन-भर उनकी खेती-पाती मे लगे रहते हैं। उसकी उपज से उनकी सेवा क्या, अपना पेट भी भरते हैं।"

"तो फिर जैसे दिन चल रहे है, चलने क्यो नही देते?"

"उसके मन का काटा तो नही निकाल पा रहे है! एक उपाय मैंने सोचा है।"

प्रधानजी ने हथेली पर ताली बजाकर उसमे मसली हुई सुरती का शेष चूना उडा दिया। और हथेली वाला की ओर बढ़ाते हुए कहा—"हा, क्या उपाय सोचा है?"

"मैं अल्लादिया बनकर उनको चुप करा सकता हू।"

प्रधानजी को सुरती का नशा वड़ी जोर से दिमाग में घूमता-सा नजर आया, कुछ बाला के शब्दो ने भी उन्हें चक्कर में डाल दिया। वे फौरन ही चारपाई पर से उठे, एक ओर थूककर उन्होंने कुछ शांति पायी और वोले—"वाला, तुम यह क्या कह रहे हो? वात मेरे पल्ले पड़ी नही!"

वह प्रधानजी के कुछ और निकट होकर वोला—"चाचाजी, असल वात तो यही है हमारे ये वाहरी खोल अलग-अलग हैं। इन्हे ही हमने अलग-अलग लेवल लगाकर तरह-तरह के नामो से पुकारा है।"

प्रधानजी ने अचकचाकर उसके कन्धे पर हाथ रखकर पूछा— 'कैसे अलग-अलग नाम से रे? तू तो वड़ी पंडिताई की-सी वातें कर रहा है!"

"हा, अलग-अलग नाम। कोई हिन्दू और हिन्दुओं मे भी वामन, वनिया, ठाकुर, हरिजन, आर्यसमाजी, सनातनी और मुसलमानों में भी शिया, सुन्नी; ईसाइयों में भी कई तरह के···"

"हा-हां, मैंने भी किताबें पढ़ी हैं! तू वात को फैला क्यों रहा है, मतलव पर आता क्यों नही!"

"हा चाचाजी, लेकिन जो वह अंदर से वोल रहा है, क्या वह सबके भीतर एक ही नही है? वह कहां से आता है, कहा चला जाता है—किसी-को पता नही!"

"हा-हा, आगे कह!"

"हा, आपकी मदद की जरूरत है। मै इस वाहरी लेवल को उतार कर, मानो इस वाला नाम के ऊपर अल्लादिया का नाम लिख देता हूं।"

प्रधानजी हंसकर वोले—"तो मेरी मदद कैसी?"

"वस, आप इस नये नाटक को चलाने हमीदा के घर चलिए। उन्हें सुनाते हुए जोर-जोर से मुझसे कहिए—'क्यों रे अल्लादिया, तू कव आया? वहुत खराव लड़का है तू! अपनी अम्मा से कुछ भी नही कह गया। कहा चला गया था?' वस, फिर आगे मैं संभाल लूंगा।"

प्रधानजी सुनकर हंस पड़े—"वोला, मैंने तो मान ली तेरी वात। पर क्या तू अपनी मेम साव से भी पूछकर आया है?"

"इस वात का फायदा उसे भी तो होगा! अगर हमीदा अम्मा को उनका वेटा मिल गया तो उनका रोना-धोना वंद हो जाएगा, और हम सभीको

रात की नींद मिल जाएगी।"

"अच्छा चल !"

प्रधानजी हमीदा के घर के निकट जा पहुंचे। वह उस समय बरामदे में हाथों से टटोल-टटोलकर कुछ ढूंढ रही थी। वाला कुछ दूर पर खड़ा हो गया और प्रधानजी को इशारा करने लगा। उसका मतलब था, वे नाटक शुरू करें।

प्रधानजी जोर से बोले—"क्यों रे अल्लादिया, तू कहां से आ रहा है ?"

वाला कुछ बनावटी आवाज में बोला—"प्रधानजी, सलाम ! हां, अभी आ रहा हूं। कहां से आ रहा हूं, यह तो बड़ी लंबी कहानी है। बैठकर जरा सुस्ता लूं, तभी कही जाएगी।"

हमीदा ने लोटा ढूंढ लिया था, अल्लादिया का नाम सुनते ही वह उसके हाथ से गिर पड़ा। वह भी गिरते-गिरते बची। उसके मुंह से निकल पड़ा—"अल्लादिया ? कौन, अल्लादिया ?"

प्रधानजी बोले—"हां अम्मा, अल्लादिया, तुम्हारा ही बेटा तो !"

प्रधानजी ने फिर वाला से पूछा—"क्यों रे, तेरे पास बिस्तर-ट्रंक कुछ भी नहीं ?"

उसने जवाब में कहा—"सब रेल में खो गया।"

हमीदा उसे टटोलती हुई बोली—"जाने दे बेटा, खो जाने दे ! तू आ गया तो मुझे सभी कुछ मिल गया।"

किसनी हमीदा के लिए एक गिलास में चाय लेकर आ रही थी। प्रधानजी दौड़कर वाला की ओर इशारा करके बोले—"किसनी, यह चाय तुम हमीदा के लिए ले जा रही हो ? अब आज से उनकी सारी सेवा अल्लादिया करेगा; तुम्हें छुट्टी हो गई।"

किसनी चौंककर कभी प्रधानजी को देखती, कभी अपने पति को। वह सच्चाई समझने की कोशिश करती ही रह गई।

वाला उसके हाथ से गिलास लेने के लिए उसकी तरफ बढ़ा ही था कि वह पीछे हट गई, उसके स्पर्श से दूर ही दूर !

प्रधानजी मुस्कराकर बोले—"क्यों बेटी, अपनी ड्यूटी इसे सौंपते हुए क्यों घबरा रही हो ? क्या अल्लादिया की छूत मानती हो ? छूत तो चोरी,

झूठ और बेईमानी की होनी चाहिए। मनुष्य को मनुष्य की छूत, यह तो अब मानने की चीज ही नहीं !"

किसनी फिर भी दूर ही दूर रही।

प्रधानजी फिर कहने लगे—"जिसके पास रोशनी है, जो देख सकता है, वह नाम के धोखे में क्यों आने लगा ! अम्मा की आंख का भरम मिट चुका है। वे माया के चक्कर में पड़ी रहें, तो रहें ! भगवान् के जो भी रूप हैं, वे सब हमारे मन माने हैं। जब इंसान का ज्ञान बढ़ जाता है, फिर वह भगवान् को किसी रूप में नहीं बांधता।"

बाला जब किसनी के हाथ से गिलास लेने को उसके नजदीक पहुंचने लगा, तो उसने गिलास जमीन पर रख दिया। वह गिलास लेकर हमीदा के पास चला; किसनी भी उसके पीछे-पीछे चली।

हमीदा चारों तरफ टटोलती हुई ढूंढ़ने लगी—"अल्लादिया ! अल्ला-दिया ! अरे, आकर तू फिर कहां चला गया ?"

"कहीं नहीं मां, तुम्हारे लिए चाय लेने गया था।"

"तूने पी या नहीं ?" हमीदा ने उसके दोनों हाथ पकड़ अपने माथे से लगा लिये। फिर उसके मुंह पर हाथ फिराकर उसकी शकल को अपने मन की आंखों से देखने लगी। फिर उसके सिर पर अपने दोनों हाथ घुमाने लगी।

जब हमीदा का हाथ उसके सिर पर गया और बाला की चुटिया उसके हाथ आने को हुई, तो वह झट से पीछे हटकर बोला—"नहीं मां, मैंने अभी नहीं पी !" वह चुटिया अपने हाथ में लेकर इधर-उधर देखने लगा, तो प्रधानजी अपनी हंसी रोककर बोले—"इसके लिए और आ जाएगी।"

बाला किसनी के निकट जाकर अपनी दो उंगलियों से कैंची चलाने का इशारा कर चुटिया दिखाने लगा। और वह भगवान् को हाथ जोड़, अपने दांतों के नीचे जीभ दिखाकर रह गई।

हमीदा ने फिर पुकारा—"अल्लादिया !"

प्रधानजी बोले—"वह चाय पीने गया है। बड़ी बी !"

"चाय पीने गया है ? कौन, प्रधानजी हैं क्या ? प्रधानजी, बड़ा दुबला हो गया है अल्लादिया ! उसके दोनों गाल पिचक गए हैं क्या ?"

"परदेस ऐसा ही बेदर्द होता है।"

"और यह अपने पेट का जना हुआ, यह क्या कम बेदर्द निकला ! कहां गया, कहा रहा इतने दिन ?"

"चाय पी लेने दो उसे भी। जरा आराम कर लेगा तो फिर सब कुछ अपने-आप सुना देगा। अम्मा, यह सब ठीक ही हुआ ! ऐसा लड़का, बिना परदेस की मार खाए सुधरता ही नही। तुम पी लो चाय !"

उसी समय वाला अपनी चुटिया काट लेने को अपने घर गया। पर किसनी देहली पर खड़ी होकर बोली—"नही, अब तुम मेरे घर के भीतर नही घुस सकते, क्योंकि तुमने अपना नाम बदल दिया है।"

"नाम बदल देने से क्या कोई गिर जाता है? चीनी को अगर हम शक्कर कह दें, तो क्या उसकी मिठास कम हो जाती है? देख लो, परख लो, यह वही वाला है, जो पहले था। इसके आख-कान, हाथ-पैर, दिल-दिमाग सब पहले ही जैसा है !"

"नही, तुम यह चुटिया कटवा रहे हो, इससे क्या तुम्हारी शक्ल में फर्क नहीं आ जाएगा।"

"नही, यह कोई बात नही है ! टोपी पहनकर उसका होना या न होना किसको दिखाई पड़ता है ! फिर जो बहुत-से ठीक चोटी की जगह पर गज उपजा लेते हैं, क्या उन्हे कोई हिंदू मानने से इनकार करता है ?"

"तो तुम अपने हाथ से क्यों नही काट लेते ?"

"मेरे दाहिने हाथ का अगूठा इतने दिनों से पक रहा है, इसीकी लाचारी है।"

इतने में हमीदा लाठी से टटोलती हुई वही आ पहुची। उसके साथ गांव के कुछ और लोग भी थे, जो वाला पर अल्लादिया का रंग चढा रहे थे।

हमीदा चिल्लाती हुई आयी—"किसनी बेटी ! सिर्फ एक तू ही नही आयी, मेरी इस खुशी मे हिस्सा लेने ! कहा है तू ? मेरा बेटा लौट आया है, क्या तूने अभी तक नही सुना ?"

हमीदा ने फिर वाला को पकड़ लिया, उसे टटोलकर बोली—"कौन ?"

"अम्मा, मैं हू अल्लादिया ! वे गई हैं दूकान में चाय की पत्ती लेने।

मेरे लिए चाय बना रही है।"

"चल फिर, घर चल ! चाय वहीं आ जाएगी। इतने दिन बाद तुझे पाकर मैं अपनी छाती ठंडी कर लूं !" कहते-कहते वह फिर बाला को टटोलती हुई उसके सिर पर हाथ रखने लगी।

बाला ने फिर घबराकर कहा—"नहीं अम्मा, मेरे सिर पर हाथ न रखो। यहीं पर तो मेरी बदकिस्मती फूट पड़ी !"

प्रधानजी ने बीच मे कूदकर मदद कर दी—"बड़ी बी, अब तुम्हारी आखें देख सकती तो तुम्हे पता लग जाता, उसके सिर मे पट्टी बंधी है। चोट लगी होगी ?"

हमीदा ने रोते-रोते पूछा—"कैसे लगी ?"

"खुदा की मार पड़ी मुझपर ! मैं हल्द्वानी को जाने वाली बस की आवाज सुनकर ऊपर सड़क को भागा। सौदा लाना जरूरी था। तुम गाय को दुहने गई थी।" वह रोने लगा।

"घर चलकर चारपाई पर बैठ जाओ, और फिर आराम से कहो।" प्रधानजी भी उनके साथ-साथ चले।

बाला बरामदे में चारपाई पर लेट गया। हमीदा उसके पैर दबाने लगी। प्रधानजी ने कहा—"अरे अल्लादिया, जान पड़ता है, तेरे सिर में बड़ी चोट लगी; और दिमाग में गड़बड़ होने से ही तेरी आवाज भी बदल गई।"

"हां चाचाजी, शक्ल भी तो ! फिर भी खुदा का शुक्र है, मैं जीता-जागता अपनी अम्मा के पास लौट आया, अपनी उस नासमझी की माफी मांगने कि मैं उनसे बिना कहे-सुने ही चल दिया था, और उसकी मुझे सजा मिली।"

प्रधानजी बोले—"देर आयद दुरुस्त आयद ! कोई बात नहीं, आखिर तुम आ तो गए। हमारे यहां शास्त्रों में कहा गया है—बेटा कपूत हो जाता है, पर अम्मा कभी कुमाता नहीं होता !"

इतने में किसनी चाय का गिलास लेकर आ गई। प्रधानजी ने उसके हाथ से चाय लेकर बाला को दे दी, वह पीने लगा।

किसनी प्रधानजी के सिखाये हुए लफ्जों मे बोली—"अम्मा, तुम्हें

बहुत-बहुत बधाई, अल्लादिया आ गए।"

"हां बेटी, तू उसके लिए चाय ले आई ? देख तो, कितना दुबला होकर लौटा है यह !

प्रधानजी कहने लगे—"क्यों, अब कह डालो, तुम कहां गये थे ? कहां रहे इतने दिन ?"

"गया तो था हल्द्वानी ही, दूकान का सौदा लेने, पर वहां मुझे चुंगी मुंशी का लड़का गोकुल मिल गया। उसने मुझे गांव की दुकानदारी से दूर कर बड़ा रंगीन तमाशा दिखा दिया।"

प्रधानजी ने पूछा—"क्या पाकिस्तान चले आने की राय तो नहीं दे दी ?"

"पाकिस्तान की राय भला क्या देता वह ! उसने बम्बई चले जाने की राय दी।"

प्रधानजी बोले—"मैं समझ गया, यानी तुझे बंबई जाकर फिल्म का हीरो बनने को कहा होगा !"

"हां, उसने मेरे पास लाट साहब के दिये हुए नोटों का बंडल देखा। मैंने उससे साफ कह दिया—'भाई, बबई बहुत दूर है। मैं घर पर अपनी मां को अकेली छोड़कर वहा कैसे जा सकता हूं। फिर मैं आते वक्त उससे पूछकर भी नहीं आया।'"

"तब वह बोला—'अरे मां को चिट्ठी भेज देना। तेरे साथ मैं चला चलूंगा। मैं एक बार बंबई हो आया हूं। मुझे वहां के सारे रास्ते मालूम हो गए हैं।' मैं उसका मतलब समझ गया।"

प्रधानजी ने पूछा—"तो यही गलती हो गई होगी तुझसे। तू उसे साथ ले गया और तेरी सारी पूंजी वहां खत्म हो गई, और किसी होटल में तुझे बर्तन मलने की नौकरी भी नहीं मिली होगी।"

"मैं उसे साथ क्यों ले जाता ? मैंने उससे साफ कह दिया कि वह अपना राह-खर्च ले आवे। मेरे पास उसका रेल-भाड़ा देने को पैसा नहीं। हा, वहां जाने पर अगर मुझे कोई काम मिल गया और वह खाली ही रहा, तो मैं जरूर उसकी मदद कर दूगा।"

जब वह इतना कहकर चुप हो गया, तो प्रधानजी ने पूछा—"फिर क्या

हुआ ?"

"उसके बाप के पास जो सरकारी रुपया था, उस ताले मे गलत चाबी डाल देने से वही अटक गई। वह पकड़ में आ गया। बाप ने उसे बिना खाना-पीना दिए एक अंधेरे गोठ मे दो दिन तक बंद कर दिया।"

"तो तुम अकेले ही गए बंबई ?"

"हा ! अगर वह भी बाप का रुपया चुराकर मेरे साथ गया होता, तो सब कुछ वहीं गंवा आता !"

"अरे, तुम भी तो अपने अब्बा का रुपया चुराकर ही गए। उसीका फल मिला तुम्हें।"

हमीदा बोली—"नही प्रधानजी, अब ऐसा कुछ मत कहिए। इसका दिल न दुखाइए। जो हुआ सो हुआ ! बेटा, चाय पी ली तूने ?" हमीदा फिर उसके सिर पर हाथ फेरने लगी।

कही उसके हाथ चुटिया न आ जाए, वह घबराकर बोला—"हां, मां जगल हो आता हूं।"

वहा से उठकर वह प्रधानजी का हाथ पकड़ दूर ले गया। प्रधानजी बोले—"वाला, क्या खूब कहानी गढ डाली तुमने।"

"अब इसके ऊपर सच्चाई चमकाने के लिए तुम मेरी इस चुटिया को जड़ से साफ कर दो। क्योकि मैं नही जानता, हमीदा अम्मा या तो दुआ देने के लिए मेरे सिर पर हाथ फेर रही है, या उन्हे यह शक हो गया कि मैं कोई नकली अल्लादिया तो नही बन गया हूं?"

प्रधानजी एक कदम पीछे हटते हुए बोले—"हट ! दूर हो ! तू मुझसे ऐसा पाप-कर्म क्यों कराता है ? मै इस गाव का प्रधान हूं। सभी कहेंगे, यह हिंदू नहीं नास्तिक है।"

"प्रधानजी, मैं तो आपको खुले दिल का आदमी मानता हूं। आप इस बात को खूब समझते हैं कि दाढ़ी, चोटी, माला, तसबीह, पूरब-पच्छिम, रोली, चंदन, शंख, घंट ये सब दिखावे हैं। असली धर्म सच्चाई है। लोगों से आप डरते क्यों हैं?"

"पर तुम बाला होकर यह जो अल्लादिया बने जा रहे हो, यह कहां तक सच्चाई है ?"

"दुनिया का सारा खेल मान लेने ही से है। ऐसे ही नाते-रिश्ते भी। अल्लादिया इनका बेटा, ऐसा बेदर्द होकर बिना कहे-सुने चला गया। मैं इनका बेटा बनकर जरा-से झूठ से एक बहुत बड़ी सच्चाई की मदद कर रहा हूं। हमीदा अम्मा को तो शांति मिलेगी ही, सारा गांव भी रात को चैन की नींद सोएगा। मैं अपने हाथ से काट लेता चोटी, पर हाथ दुखता है।

"लो, अब तुम्हारी घरवाली आ गई।"

"इसने अंधविश्वासों को बड़ी मजबूती से अपने पिछौड़े की गांठ में बांधकर कमर में खोंस रखा है।"

किसनी वहां आकर अनमनी-सी खड़ी हो गई और बाला की ओर तर्जनी तानकर बोली—"अम्मा ने मुझसे पांच रुपये की मिठाई मगाई है, गांव में अपनी खुशी बांट देने के लिए। घर-घर मुझे ही दे आने को कहा है। तुम्हें जरूर वे अपने ही हाथ से खिलाएंगी। बस अब मेरा-तुम्हारा रिश्ता ही क्या रहा ?"

बाला हंसते हुए बोला—"अच्छा-अच्छा, यही सही ! तो फिर कैंची लाकर यह चुटिया तो उड़ा दो।"

"दस-बीस दिन में उनका लड़का आ जाएगा तो फिर क्या होगा ?"

"अरी, अपने घर की खेती है यह चुटिया, तब तक फिर बढ़ जाएगी। गंगाजल छिड़ककर मैं फिर अपने घर आ जाऊंगा।"

"नहीं, लोग कहते हैं, अल्लादिया पाकिस्तान चला गया। दूर, बहुत दूर !"

"दूरी कैसी ? हिंदुस्तान के एक टुकड़े को पाकिस्तान नाम दिया गया है।"

प्रधानजी ने कहा—"हां, है तो हिंदुस्तान ही में, लेकिन अल्लादिया लौटकर न जाने कब आवे।"

"क्या अपनी अम्मा को लेने नहीं आवेंगे ?"

"यह तो भगवान् ही जानते होंगे !"

"अगर नहीं आए तो ?" किसनी ने पूछा।

"इसीलिए तो मैं उनका बेटा बना हूं।"

"अगर वे मर गईं तो उनकी जमीन-जायदाद का क्या होगा ? क्या वह

तुम्हे मिल जाएगी ?"

"लेकिन किसनी, क्या मैं इस लालच से उनका बेटा बना हू ?"

किसनी ने मन में सोचा, जब ये बेटे बने हैं तो और किसे मिलेगी ? प्रकट में बोली—"क्या तुम बिना जूठा खाए उनके बेटे नही बन सकते ?"

"खाना तो तुम्हारे ही हाथ का बना होगा। फिर तुम ऐसी चीज क्यों बनाओगी, जो मैं नही खाता। और अम्मा मुझे अपना जूठा क्यों खिलावेंगी, क्या मैं बिना दात का बच्चा हू। इसलिए लो, इस कैंची से मेरे जाल काट दो !"

"जाल कैसा ?"

"हरी पत्तियों पर रेंगने वाला कीड़ा जिस तरह जाल बनाकर उसमें फस जाता है, ऐसे ही मैं भी धर्म के दिखावटी जाल में कैद हू। जाल काट-कर जैसे वह कीड़ा सुन्दर तितली के रूप मे बाहर आता है ऐसे ही मुझे भी आजाद कर उड़ने दो।"

प्रधानजी ने अपने हाथ की कैंची किसनी की ओर बढाई।

किसनी बोली—"प्रधानजी, इनके साथ ही आपको भी यह क्या हो गया ?"

"जब यह हमीदा का बेटा बन गया है, तो क्या हमीदा के हाथ की आखें भी फूट गई हैं ? उसने कभी इसके सिर हाथ फेरा तो इसकी चुटिया क्या उसपर सारा झूठ न खोल देगी ?" प्रधानजी ने कहा।

"चुटिया और दाढ़ी, ये धर्म के पाखंड हैं। धर्म की नाक है—सच्चाई ! कटी हुई चुटिया तो फिर बढ़ सकती है।"

किसनी बोली—"प्रधानजी, तुम क्यों नही फिरअपने हाथ से काट देते ?"

"यह मेरा एहसान नही लेना चाहता।" कहते हुए प्रधानजी ने कैंची किसनी को दे दी—"यह तुम्हारी समझ को भी अपने साथ ले रखना चाहता है।"

किसनी ने कैंची लेकर कहा—"अच्छी बात है, मैं यह मान लेती हू। मगर इसके साथ ही तुम्हें मेरी तीन बातें रखनी होंगी।"

"कौन-सी ?"

"पहली बात, मैं तुम्हारी छूत मानूंगी, तुम्हारी जूठी थाली में अब मैं

खाना नही खाऊंगी।"

"मंजूर है।"

"दूसरी बात, तुम मेरी रसोई मे नही घुसने पाओगे।"

"यह भी मान लिया।"

किसनी फिर चुप होकर मुंह में अपना आंचल देकर कुछ सोचने लगी।

बाला ने उसे चुप देखकर पूछा—"तीसरी बात?"

हमीदा का दिया हुआ पाच रुपये का नोट उसके हाथ से जमीन पर गिर पड़ा। किसनी उसे उठाने लगी—"फिर कह दूगी।"

प्रधानजी जाते हुए बोले—"अगर कोई प्राइवेट बात है तो लो, मैं जाता हू।"

बाला ने उनका हाथ पकड़ रोकते हुए कहा—"रसोई घर की तरह अपने सोने का कमरा भी मेरे लिए बंद रखना चाहती है। यह भी मैं मान लेता हूं। लो, अब चलाओ कैंची।"

प्रधानजी बोले—"एक बात और सोचने की है। हमीदा ने अपने बेटे की शादी के लिए बहुत-सा रुपया जमा कर रखा है। और अब्दुल्ला खान-सामा ने किसी लड़की वाले को वचन भी दे रखा है।"

"मैं शादी करूंगा ही नहीं!"

प्रधानजी बोले—"करोगे कैसे नही? जो अम्मा आज तक अल्लादिया के लिए रोती थी, वह फिर अल्लादिया की बहू के लिए रोना शुरू कर देगी।"

बाला ने निर्भय होकर कहा—"भगवान एक मुश्किल सामने रखता है, तो समझदार के लिए एक रास्ता भी तो निकाल रखता है।"

"किसनी! किसनी!" की पुकार सुनाई दी।

बाला ने कहा—"वे यहीं आ गई। लो, अब क्या सोचने लगी? जल्दी से चला दो कैंची!"

किसनी के मन में हमीदा की सारी जमीन चमक उठी। उसने जल्दी से चुटिया काटकर दूर फेंक दी और कैंची प्रधानजी को लौटा दी।

हमीदा ने आकर पूछा—"किसनी कहा है?"

"दूकान मे मिठाई खरीदने गई है।"

"बड़ी देर लगा दी ! अल्लादिया कहां है?"

प्रधानजी ने हमीदा का हाथ पकड़कर बाला के सिर पर हाथ रख दिया—"इसके सिर की पट्टी खोल दी गई है। घाव ठीक हो गया है।"

हमीदा ने उसके सिर पर हाथ इधर-उधर फिराकर कहा—"अब तो पता ही नहीं चलता कि कहा चोट लगी थी और कहां अच्छा हुआ।"

"सब, अल्ला की, और तुम्हारी दुआ।"

"हम यह कहां पर खड़े हैं ?"

"बाला के घर के पास।" बाला ने कहा।

"बाला अभी आया नहीं ? वह जहां भी है, उसके पास खबर भिजवा देते कि अल्लादिया लौटकर आ गया। वह इस खुशी में सारा काम छोड़कर भी आ जाता, फौरन ही।" हमीदा ने फिर बाला के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा—"इसके सिर का घाव तो पूरा हो गया, मगर आवाज लौटी नहीं ! बेटा तेरे अब्बा ने रानीबाग में बशीर खानसामा की बेटी के साथ तेरे निकाह की बातचीत की थी। जब तक वे जिंदा थे, बशीर बड़ी दिलचस्पी से बातें करता, अब वह हमारी तरफ देखता भी नहीं।"

बाला अल्लादिया के लफ्जों में बोला—"लड़कियों का अकाल है क्या ? वह मुर्गीचोर बशीर, मैं जानता हूं उसे। कर्नल साहब से कह-सुनकर अब्बा ने उसे जेल के आधे रास्ते से ही छुड़ा दिया था।"

हमीदा फिर उदास होकर बोली—"लेकिन तेरे अब्बा तो चल दिए। अब तेरे लिए कौन लड़की ढूंढ़कर लायेगा ?"

"मां, पहले मुझे किसी काम में लग जाना है। फिर लड़की वाले मुझे ही ढूंढ़ते हुए चले आवेंगे। काम में लगने के माने हैं, तुम उस पतीली को खोदकर निकाल लाओ—जिसमें तुमने मेरी शादी के लिए रुपये जमा कर रखे हैं, ताकि मैं सौदा-पत्ता भरकर यहां दूकान खोल लूं।"

"तू फिर कहीं पाकिस्तान को बहक जावेगा तब ?"

"अच्छा, एक बात समझ में आई, मेरे दूकान खोलने से पहले, सोचता हूं, इलाज कर तुम्हारी आंखें ठीक करानी चाहिए मुझे।"

"मेरी आंखें अब खुलने वाली नहीं हैं ! फिर तू मेरे सामने रहे, तो तू ही मेरी आंख है। बाला ही कोई ठीक लड़की ढूंढ़कर ला देगा। कितनी, क्या

तू यहीं है बेटी ?"

किसनी पास ही एक क्यारी में से शाम के लिए आलू खोद रही थी। हंसती हुई दौड़कर आ गई—"हां मां, क्या कहती हो ?"

"बाला कब आवेगा ?"

प्रधानजी झट बात बदलकर बोले—"अल्लादिया ठीक ही तो कहता है, उसके लिए कोई धंधा शुरू करना ही पहला काम है।"

"किसनी, तू ढूंढ ला कहीं से कोई लड़की। मुझे तेरे ही जैसी बहू चाहिए, जो घर के भीतर और बाहर के सभी कामों में होशियार हो। या तू बाला को चिट्ठी लिखकर बुला ले फौरन।"

"अम्माजी, आप यह कैसी बातें कर रही हैं। मैं कह चुकी हूं, उनका क्या कहीं कोई ठौर-ठिकाना है, जो चिट्ठी लिखी जाए? वे क्या कहीं ठहरे हैं? उन्हें नदी समझो नदी, दिन-रात चलते ही रहते हैं।"

प्रधानजी ने कहा—"माताजी, आप घबराएं नहीं। आपके पास इतनी बढ़िया खेती-पाती, कारबार है, अल्लादिया इसीको संभाले, दूकान बाद में देखी जाएगी। मैं ढुंढवाता हूं, इसके लिए कोई लड़की। जल्दी मत करो।"

बुढ़िया खुश होकर बोली—"मुझे जल्दी इसीकी है। यह किसनी, इस बिचारी को अपने घर का धंधा तो ठहरा ही, मेरा सारा काम भी इसे ही करना पड़ता है। सुनती हू, इसने मेरा सारा काम संभाल रखा है।"

किसनी कहने लगी, "तो उसके बदले मुझे कोई तनखा न मिली न सही खेतों की उपज, गाय का दूध, फल-फूल मेरी ही देख-रेख में तो उस सबका इन्तजाम होता है!"

दो-चार दिन बाद प्रधानजी के साथ गांववालों ने एक मीटिंग की और तय किया—हमीदा को बता दिया जाए कि बाला गरुड़-बागेश्वर की यात्रा से लौट आया है।

प्रधानजी हमीदा के घर के पास जाकर जोर से चिल्लाए—"अरे, बाला, खूब आए भाई तुम! हम तो कई दिनों से तुम्हारा रास्ता देख रहे हैं। तुम्हें यह जानकर बड़ी खुशी होगी कि अल्लादिया लौट आया है।"

उस दिन प्रधानजी ने सुबह ही अल्लादिया की नकल को बुढ़िया के पास से उठाकर नैनीताल भेज देने का बहाना बना लिया था।

बाला अपनी असली आवाज में बोला—"बड़ी खुशी की बात है, कहां है वह ?"

इन आवाजों को सुनकर हमीदा गिरती-पड़ती टटोलती हुई वहां आ पहुंची—"आ गया बाला ?"

बाला अपनी स्वाभाविक आवाज में बोला—"अम्मा सलाम। अल्लादिया आ गया ?"

"हां आ गया, तुम लोगों की दुआ से। नैनीताल जाने को कह रहा था। उसके अब्बा का कुछ रुपया बाकी है वहां, उसीको वसूल करने गया है।"

"तुम्हारी तबीयत कैसी है ? आंखों में रोशनी आई या नहीं ?"

"अल्लादिया आ गया तो रोशनी भी आई ही समझो ! अब उसकी फिकर तुम्हें ही करनी है।"

"तुम्हारा मतलब है, उसे किसी काम से लगाना है क्या ?"

"हां, सभी ऐसा कहते हैं कि वह किसी धन्धे में लग जाए, तो कोई भी अच्छा आदमी मुझे अपनी लड़की देने को तैयार हो जाएगा।"

"लेकिन अम्मा जी, मैं कुछ दूसरी तरह से सोचता हूं।"

"प्रधानजी हैं यहां पर ?"

उन्होंने खांसकर "हां" भर दी।

"प्रधानजी से तुम अपनी बात मिला लो ! ये जैसा कहें, कर दो ! करना क्या चाहते हो तुम ?"

"मेरी समझ में, पहले उसकी शादी कर दो ! वह खूंटे में बंध जाएगा, तो खुद-ब-खुद किसी न किसी काम से लग ही जाएगा। अरे, करने को क्या उसके घर में ही खेती-बाड़ी कुछ कम है ?"

"प्रधानजी, तुम क्या कहते हो ?" हमीदा ने पूछा।

"हां, ठीक बात है ! ऐसा भी कर दिया जाए तो कोई हर्ज नहीं !"

बाला ने झट से कहा—"बस तो लड़की ढूंढो-ढुंढवाई है ! कहीं दूर जाना है क्या ?" उसने किसनी की तरफ प्रधानजी को अपनी इशारा किया।

किसनी मुंह मटका, सिर पर घूंघट खींचकर एक तरफ हो

प्रधानजी बोले—"किसनी, तुम कहां जाने लगीं ?

अपनी राय मिलाकर अम्मा की मदद करनी है। तुम भी हां कह दो।"

किसनी ने अंगूठा दिया, पीठ फिरा दी।

हमीदा बोली—"तुम्हारा मतलब क्या उसी रानीबाग वाली लड़की से है ? जो भी है, तुम रात-दिन बस्ती-बस्ती घूम-फिरकर बनज-व्यापार करते हो; तुम्हें तजरबा है, पर जल्दी ही करो। मेरी जिंदगी का कोई ठिकाना नही है ! ये आंखें अब क्या खुलेंगी ! यह जो सांस है, इसपर चढ़ी हुई यह आवाज भी कभी सुन्न पड़ जाएगी।"

"मैं हाजिर हूं ! कहो तो आज ही चला जाऊं। रानीबाग है ही कितनी दूर !"

"अल्लादिया को नैनीताल से आ जाने दो। उसे साथ ले जाना !"

"नहीं, उसे साथ ले जाने की कोई जरूरत नहीं। तुम उसकी मां हो। तुम्हारा फैसला उसे अपने सिर-माथे रखना ही होगा।"

"मैं राजी हूं ! वह गांव की लड़की, मेरी खेती-पाती की ठीक संभाल करेगी। उसके लिए एक अच्छा सूट सिलवा दो ; कुछ जेवर रखे हैं, उन्हें गलवाकर नये बनवा लो। कुछ और भी सही ! मैंने तो कुछ रुपये जमा कर रखे हैं, मैं तुम्हें सौंप दूंगी। प्रधानजी से पूछ लो।"

प्रधानजी ने कहा—"अजी, मेरी समझ में तो सादगी बड़ी चीज है ! शोर-शराबा, गाजा-बाजा-बिजली-आतिशबाजी, यह सब फिजूलखर्ची है। दो-चार नाते-रिश्तेवाले बुला लिए जाएं, पैदल ही एक दिन यहां से रानी-बाग जाकर शाम तक बहू को विदा करा लावेंगे।"

"ठीक यही मैं भी समझती हूं ! लेकिन पैदल क्यों ? दूल्हा के लिए तो घोड़ा जरूरी है !"

"हां-हां, सब हो जाएगा ! चलिए प्रधानजी, मेरे साथ चलिए। वहां इस बात को तय करेंगे !"

बाला प्रधानजी के साथ अपने घर को चला। किसनी पहले ही दौड़कर चली गई, और दरवाजे पर सांकल चढाकर बाहर खड़ी हो गई कि बाला, वह चुटिया कटाया हुए उसका विधर्मी पति कहीं घर के भीतर न घुस जाए।

वे दोनों बाहर ही आंगन में चारपाई पर बैठकर सलाह करने लगे।

प्रधानजी बोले—"हां, क्या विचार है ?"

"हमीदा को बन्द आखों में हम अपने लफ्जों की मदद से कोई भी तस-वीर बना सकते हैं। हम गाव के ही दो-चार लोग इकट्ठे होकर बाजा बज-वाकर, कुछ कढाई मे पूरियों की खुशबू उड़ाकर अम्मा को समझा लेंगे। बरात इस घर में आवेगी; यहीं से बहू को एक डोली में बिठाकर हमीदा के दरवाजे पर उतार देंगे।"

किसनी आंखें दिखाकर बोली—"है, तुम बिचारी अन्धी अम्मा को बहका लोगे, तो क्या मैं ऐसी मूरख हूं जो मैं डोली में बैठकर वहा चली जाऊंगी ?"

बाला ने कहा—"किसनी, तुम्हारा हम कोई धरम बिगाड़ेंगे क्या ? खाना तुम अपने ही हाथ का बनाया खाओगी। सोने का वहा एक दिखावा कर दिया जाएगा; सोना भी तुम यहां अपनी ही चारपाई में।"

किसनी बड़े सोच-विचार में पड गई। फिर बोली—"अम्मा का हाथ पकड़कर क्या मैं उन्हें जंगल नही ले जाती, उनका भोजन बनाकर क्या उनकी सभी सेवाए नही करती ?"

बाला ने जवाब दिया—"यह उनके ऊपर क्या कोई एहसान है? उनकी खेती-पाती और गाय-बकरियो की मालिक भी तो तुम ही बनी हो !"

किसनी की आखों मे वह सारी सपत्ति चमक उठी और उसीके लालच से प्रभावित होकर वह बोली—"तो मैंने अपने हाथ से उनकी चुटिया काट-कर क्या उनका बेटा बन जाने मे इनकी मदद नही की है ?"

"फिर जरा-सी बात के लिए क्यो रोड़ा अटकाती हो ?"

प्रधानजी बोले—"उनका बेटा आ गया। अब यह भी उनके लिए स्वाभाविक है कि उसकी शादी हो जाए ! तुम बाला की घरवाली तो हो ही फिर उसके साथ एक बार और शादी हो जाने की उमग तुम्हारे मन में क्यों नही पैदा होती ?"

"नहीं, इनका जूठा मैं कैसे खाऊंगी अब? कैसे इनके साथ बैठ जाऊंगी ?"

बाला बोला—"कह तो दिया, तुम्हारी थाली, कमरा, चारपाई सब अलग।"

किसनी ने अब लफ्जों में तो कुछ नही कहा, पर सिर हिलाकर अपनी

अनिच्छा दिखा दी।

अल बाला उसके हठ पर रोष में बोला—"तो फिर शादी के लिए दूसरा रास्ता यही है कि मैं लोगों में यह बात मशहूर कर दूं कि मुझे बुढ़िया ने गोद लेकर अपना बेटा बना लिया है, और मैं उनकी जायदाद का मालिक हो गया हूं, उनकी इच्छाओं का नौकर!"

चौंकी किसनी—"और मैं?"

"क्या तुमने पहले ही मुझे अपनी रसोई और कमरे से बारह पत्थर बाहर नहीं कर दिया है? यह मशहूर कर दिया जाएगा कि किसनी तलाक देकर छोड़ दी गई है, उसकी गुजर के लिए उसे हर महीने एक रकम, जो पंच लोग तय करेंगे, दी जाया करेगी।"

"तो क्या सरकार में मेरी सुनाई नहीं होगी?"

"यह तुम जानो! अब जब मैं उनका सच्चा बेटा ही बन गया, तो क्यों नहीं रानीबाग का खानसामा मुझे अपनी बेटी दे देगा? फिर यह जो आज तक एक नाटक चल रहा था, एक जीती-जागती ठोस सच्चाई बन जाएगा। चलो प्रधानजी, तुम गवाह हो!"

किसनी घबराकर बोली—"तो ठीक-ठीक कहते क्यों नहीं?"

"कह तो दिया, तुम्हें एक बार फिर दुलहिन बनाकर डोली में बिठा, तुम्हारी बरात निकाली जाएगी। तुम्हें नये कपड़े, नये जेवर पहनाये जाएंगे।"

"नहीं, मैं सुथना-सलवार नहीं पहनूंगी!"

प्रधानजी ने उसका साहस बढ़ाया—"अच्छा तुम अपना ही घाघरा-पिछौड़ा पहने रहना।"

किसनी गाल पर हाथ रखकर बोली—"इस चालाकी से तुम फिर उसी बात पर आ गए!" सकुचाकर वह चुप हो गई।

"कौन-सी बात?"

उसने कोई उत्तर नहीं दिया।

"साफ-साफ जवाब दो न!"

"मैं तुम्हारी छुई हुई कोई चीज नहीं खाऊंगी, और न तुम मुझे छूने पाओगे।"

"यह तो पहले ही तय कर दिया।"

किसनी अब चुप हो गई, और यह उसकी सहमति मान ली गई।

अब वाला ने प्रधानजी को हाथ जोड़कर कहा—"अब आप मेरे साथ चलकर वाला का पार्ट कीजिए, और मैं अल्लादिया का।"

"पर मैं वाला की बोली कैसे बोलूगा ?"

"बोलिया तो दोनों मैं ही बोलूगा। आप सिर्फ अपनी आहट से ही उसे जतावेंगे। पहले मैं अल्लादिया बनकर उनके पास जाता हूं।"

किसनी पति के इस करतब पर मुंह पर पिछौड़ा रखकर मुसकराने लगी।

वाला हमीदा के पास जाकर बोला—"अम्मा, मैं नैनीताल से आ गया।"

"काम हुआ या नहीं ?"

"फिर एक बार जाना पड़ेगा।"

"रास्ते में क्या तुझे वाला नहीं मिला ? वह तेरी शादी तय करने रानीबाग गया है।"

"लेकिन मुझे भी तो लड़की देख लेनी चाहिए।" कहते हुए उसने किसनी की ओर देखा। वह भी उसके पीछे-पीछे यह तमाशा देखने चली आई थी।

हमीदा चिढ़कर बोली —"अरे, घरवाली को तू जैसा ढाल देगा, वैसी बन जाएगी ! तू ही बता, अब तू वह अल्लादिया कहा रहा ? चोट खाकर परदेस से लौटा। पूजी गवां आया। शक्ल-सूरत में तेरे गड्ढे पड़ गए, आवाज छीज गई। अगर उसका बाप तुझे लड़की देने को तैयार हो जाए तो अपनी तकदीर को बड़ाई समझना।"

"अच्छा-अच्छा मा, तुम जो भी कहोगी, मैं तैयार हूं !"

"हा, तू मेरा एक ही बेटा है। अगर दो-चार होते तो मैं सबर कर लेती।"

"अच्छा मा, तुम्हारे लफ्ज सबसे बड़े ! तुम जो भी करोगी, मुझे सिर-आखों पर कबूल है।"

"तो चुपचाप बैठा रह ! वाला को आ जाने दे। और जो भी हम दोनों की सलाह से बात पक्की हो जाए, तुझे माननी ही पड़ेगी।"

"अच्छा मैं देखता हूं, वाला भाई आए या नहीं।"

वाला वहां से उठकर अपने घर की ओर चला। इतने ही मे एक अजनबी नौजवान अपने चेहरे पर असमंजस लिये उसके सामने आकर खड़ा हो गया।

वाला ने पूछा—"क्यों, किसे ढूंढते हो?"

"अल्लादिया का घर कौन-सा है?"

वाला उसकी शकल देखकर ही घबरा गया। उसने पूछा—"तुम कौन, कहां से आए हो?"

"मैं लखनऊ से आया हूं। अल्लादिया की मौसी का लड़का हूं। सुना है, वह पाकिस्तान चला गया है।"

"क्या नाम है तुम्हारा?"

"नसीर! अल्लादिया कहां है?"

वाला उसका हाथ पकड़कर पास ही अपने घर के सामने ले आया, और चारपाई घसीटकर बोला—"बैठो तो सही! कहानी लम्बी है। बिना उसे समझे तुम अल्लादिया के पास जाकर करोगे भी क्या?" वाला ने हाथ पकड़कर उसे चारपाई पर बैठा दिया।

"अल्लादिया कहां है?" नसीर कुछ न समझकर बोला।

वाला ने उसके सवाल का जवाब देने के बदले किसनी को पुकारकर कहा—"किसनी, चाय बनाकर ले आओ!"

"नहीं, मैं चाय पीकर ही आया हू अभी—ऊपर दूकान में।"

"तो बीड़ी पियो!"

"नहीं जी, बीड़ी भी रहने दो! अल्लादिया कहां है?"

"यह जो तुमसे बातें कर रहा है, वही है अल्लादिया!"

नसीर फौरन ही चारपाई से उठ गया—"अमा, मुझसे क्यों मजाक करते हो! मेरी मां ने मुझे भेजा है। हमने यह भी सुना है, अल्लादिया के अब्बा बाघ के शिकार हो गए और खाला की आंखें जाती रहीं। क्या यह सच है?"

"बिलकुल सच है!"

"फिर तुम्हें उनका घर बता देने में क्या हिचक है?"

वाला ने फिर उसका हाथ पकड़कर उसे चारपाई पर बैठा दिया—

"मेरे सिर पर हाथ रखकर देखो, उसमें क्या चोटी का कोई निशान भी देखते हो? फिर तुम्हें मेरे अल्लादिया हो जाने में क्यों शक हो रहा है?"

नसीर ने उसके नंगे सिर पर बिना हाथ फेरे ही यह जान लिया कि वहां चोटी का नामोनिशान नहीं था। वह दुविधा में पड़ गया कि यह माजरा क्या है?

किसनी वहीं खड़ी थी। बाला ने उससे कहा—"इनके लिए चाय तो बना लाओ! तब तक मैं इन्हें अच्छी तरह समझा देता हूं कि मैं अल्लादिया कैसे बन गया।"

किसनी चाय बनाने चली गई, और बाला ने नसीर को सारी बातें ऐसे लफ्जों में समझा दीं कि उसे पक्का विश्वास हो गया, कि जो भेद बता रहा वह ठीक ही है।

सब कुछ समझकर नसीर ने पूछा—"तो क्या तुमने सचमुच अपना मजहब बदल दिया?"

बाला बोला—"देखो भाई, न तो कोई हिंदू पैदा होता है, न ही मुसलमान! वह तो होश संभालने पर ही अपना वैसा भेस बनाकर वैसी बोली बोलने लगता और काम करने लगता है—जैसा स्टेज पर ऐक्टर!"

नसीर उसकी हां में हां मिलाकर कहने लगा—"तो अल्लादिया है कहां? वह बड़ा बेदर्द और निकम्मा निकला कि अपनी लाचार बूढ़ी मां को यहीं छोड़ गया! बड़ा खुदगरज है!"

"कुछ पता नहीं कहां गया। जहां भी गया है, भगवान उसे ठीक से रखे! क्या उसे यहां एक खत भी नहीं छोड़ना चाहिए था? हम कहां ढूंढ़ें?"

"उनकी गुजर-बसर कैसे हो रही है?"

"सारा बोझ मुझे अपने सिर पर लेना पड़ा है। जब उन्होंने रो-रोकर अपनी आंखें गवा दीं और जान गंवा देने की नौबत आ गई, तो मुझे एक ही रास्ता दिखाई दिया कि मैं अल्लादिया बन जाऊं।"

"हमें अल्लादिया के अब्बा के बाघ से मारे जाने की खबर क्यों नहीं दी?"

"एक तो हमें तुम्हारा पता नहीं मालूम था; फिर सभी आफत में, मुश्किलों में फंसे हैं। चिट्ठी कौन लिखता!"

"तो अब हम क्या खिदमत कर सकते हैं ?"

"यही कि जो कहानी हमने यहा चला रखी है। इसे इसी तरह चलने दो। इसमे तुम भी वैसे ही रग भरते जाओ, जैसे भरे गए हैं।"

वह अनमना होकर बोला—"यानी क्या करूं ?"

"तुम अपनी खाला से जाकर कहो कि अल्लादिया लौटकर चला आया, बड़ी खुशी की बात है।"

"फिर इसके बाद ?" बड़ी कठिनाई में फंसकर नसीर के मुंह से लफ्ज निकले।

"जो भी ठीक-ठीक लफ्ज तुम्हारे मुंह से निकलते जाएं, वही बोलते रहना। बराबर ध्यान यही रहे कि मेरा परदा खुलने न पावे। फिर, मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूं।"

नसीर सोचता-विचारता, उस अजीब परिस्थिति से लड़ता-झगड़ता हमीदा के पास जा पहुचा। वह अन्दर ही न जाने क्या धर-संभाल कर रही थी। उसकी आहट पाकर बोली—"अल्लादिया, आ गया तू ?"

"खाला, सलाम ! मैं अल्लादिया नही, नसीर हूं।"

"कौन नसीर ?"

नसीर सोचने लगा—इनकी आखें जाती रही तो क्या याददाश्त भी गई ?

बाला उसके साथ ही साथ आकर कुछ दूरी पर खड़ा हो गया था।

नसीर बोला—"मैं लखनऊ से आ रहा हूं।"

हमीदा ने बाहर आकर उसे टटोलते हुए कहा—"तेरी मा नही आई ?"

"नही, मैं किसी काम से नैनीताल जा रहा था।"

"इतनी मुसीबतें मेरे ऊपर आ पड़ी, तुममे से किसीने भी मेरी खोज-खबर नही ली। आसमान से आ पडी बदकिस्मती को क्या करूं ! अल्लादिया के अब्बा पर क्या बीती, तुमको मालूम नही है क्या ?"

"हां-हां, क्यों नही ! मैंने सब कुछ सुन लिया है।"

"कहा सुना ?" कहते-कहते वह फिर रोने लगी।

"नहीं-नहीं, खाला, रोने से कोई फायदा नहीं। खुदा का शुक्र है, वह लौट आया है !"

बाला वहीं कुछ दूरी पर खड़ा, नसीर को इस बात पर सिर हिलाकर शाबासी देने लगा।

हमीदा रोना बंद कर झट से बोल उठी—"अब तुम उसकी शादी ठहराकर ही कहीं जाओ! उसकी शादी का खर्च मैंने जमाकर रखा है। बाला को जानते हो तुम? हमारा पड़ोसी है। मेरे सगे बेटे की तरह ही वह मेरी मदद कर रहा है। तुम्हारे आ जाने से उसका काम हल्का हो जाएगा।"

नसीर के मुह से अचानक निकल पड़ा—"लेकिन खाला, शादी में रुपया खर्च कर क्या करोगी? वक्त को देखकर काम करना चाहिए!"

"फिर तुम भी क्या उसे मुर्गियों का कारोबार करने की राय देते हो?"

"नहीं, मैं समझता हूं, उस रुपये से तुम मेरे साथ लखनऊ चलो! सबसे पहले तुम्हारी आखों का इलाज कराना जरूरी है।"

बाला ने दूर से नसीर को इस बात की गंभीरता दिखाकर उसे आगे बढाने से मना किया। पर वह कुछ समझा नहीं, या उसने देखा ही नहीं।

हमीदा ने बड़ी आशा में भरकर पूछा—"क्यों मेरी आंखों की रोशनी फिर लौट सकती है?"

"अगर तुम्हारी आंखों में मोतियाबिंद का पानी उतर गया है तो वह भी कट सकता है और तुम जरूर पहले की तरह देख सकती हो!"

'पहले की तरह देख सकती हो।' यह वाक्य पास खड़े हुए बाला के कानों में खटका। तब उसे इस बात की गंभीरता जान पड़ी कि फिर तो इस सारे नाटक का परदाफाश हो जाएगा। वह आगे बढ़कर हमीदा के पास आकर बोला—"अम्मा, मैं शादी तय कर आ गया।"

हमीदा ने पूछा—"बड़ी खुशी की बात है! उन्होंने कोई शर्त तो नहीं रखी?"

"हां, कहने लगे कि अभी हमारी माली हालत जरा तंग है। हम शादी अगले साल करेंगे।"

"यह कैसे हो सकता है?"

"मैंने उन्हें राजी कर लिया कि हमें सिर्फ लड़की ही चाहिए; कपड़े-जेवर, दान-दहेज कुछ भी नहीं!"

"यह क्या कह दिया तुमने?"

वाला ने नसीर को दिखाकर पूछा—"ये कौन है ?"

नसीर ने जवाब दिया—"मैं नसीर हू—इनकी बहन का लड़का ! मेरे अब्बा रेलवे मे ठेकेदार हैं। उन्हीके किसी काम से मैं नैनीताल जा रहा हूं।"

हमीदा बोली—"अब इसे अल्लादिया की शादी तक यही रोक लो ! वह कहा है ? बुलाओ उसे।"

"आ जाएगा; यही कही गया होगा !"

"मैं क्या करू ? आखो से लाचार हूं। तुम्ही जो कुछ हो सके—करो ! इसे ले जाकर चाय तो पिला दो। फिर अल्लादिया के आ जाने पर वही जो कुछ करेगा।"

वाला नसीर को साथ लेकर अपने घर आया। उन्हे उधर आता देख किसनी ने झट मे दरवाजे पर ताला लगा दिया और एक तरफ जाने लगी।

उसके इस व्यवहार को देखकर वाला ने कहा—"अम्मा की बहन का लड़का यह लखनऊ से आया है। इसे अपना मेहमान समझो। तुम इसे चाय और खाना खिलाने के बजाय ताला लगाकर जा रही हो ?"

"मैं अम्मा के ही पास जा रही हू। वे अकेली है।"

"उन्होने ही हमे यहा तुम्हारे पास भेजा है कि इनकी खातिरदारी की जाए।" वाला ने बरामदे मे खडी चारपाई वाहर आगन में बिछा दी और नसीर को बैठ जाने का इशारा किया।

नसीर के बैठ जाने पर वह स्वयं भी बैठ गया। किसनी ने अपने बढ़ते हुए कदम रोक दिए; फिर कुछ सोचकर ताला खोल, मकान के भीतर जाकर आग जला चाय बनाने लगी।

"भाई नसीर, तुम खूब आये; ऐसा जान पड़ता है, मानो अल्लाह के भेजे हुए ही तुम आए ! मैं जो यह बिना किसी लालच के अल्लादिया बन गया हू, मुझे पूरी तरह अल्लादिया बन जाने मे मदद दो !"

नसीर की आखों और मुख में जब वाला के इन लफ्जों ने कोई विश्वास नही जगाया, तो उसकी पीठ पर हाथ रखकर वह बोला—"भाई, दुनिया सिर्फ एक मन का ही तो खेल है ! किसीको हमने मां मान लिया और किसी ने हमको बेटा। अब देखो न यह।"

नसीर ने बीच ही में पूछा—"तुमने यह 'लालच' लफ्ज क्यों कहा ?"

बाला ने उसके मन की बात पकड़ ली; बोला—"तुमने जिस खुले दिल से यह पूछा है, मैं भी उतने ही साफ दिल से तुम्हें जवाब दूंगा। हा, हमीदा अम्मा की यहा इतनी जमीन-जायदाद है। इनके दुःख मे शरीक होने को तो कोई भी नही आने वाला है; लेकिन अगर ये मर गई तो इनके कई वारिस बनकर आ जावेंगे। कोई चाचा, कोई ताऊ, कई निकल-निकलकर आ जावेंगे।"

"उनके आ जाने से क्या होगा? ये जीते-जी जिसको वारिस बना देंगी, वही हो जाएगा।"

बाला ने बेताब होकर कहा—"बताने की बात छोडो! हम इनसे लिखित करा लेंगे जी, गाव के दो-चार बड़े-बड़े लोगों की गवाही हो जाएगी, फिर कौन आगे बढ़ सकता है?"

"फिर ये लिखित किसके नाम कर जायेंगी? क्या तुमने कलमा पढ़कर अपना धर्म बदला है?"

"ऐसा क्यो करता? ऐसा करने से इनके मन मे अल्लादिया कैसे जिंदा होता? भाई, मुझे कोई लालच नहीं है। पास-पड़ोस वालों से सबसे पूछ लो! जब अल्लादिया के दुख मे इन्होने चौबीसों घंटे रो-रोकर हमारा सोना-जागना हराम कर दिया, तो मुझे मजबूरन अल्लादिया बन जाना पड़ा। तुम क्या ऐसा समझते हो कि इनकी जायदाद हथिया लेने को मैंने अपना धरम बदला है?"

नसीर ने अपने मन में सोचा—भली चलाई इसकी! इसने जो भी लालच किया हो; खुदा ने ठीक वखत से मुझे यहां भेज दिया। जाहिर में उसने कहा—"तो इनसे अभी लिखित करा लेनी जरूरी है, पूरे होश-हवास में। कल को न जाने क्या हो जाए!"

"मैं भी यही ठीक समझता हूं! अब तुम यहीं रहो। नैनीताल क्या किसी जरूरी काम से जा रहे हो?"

"हमारा बहुत बड़ा एक बिल रुका पड़ा है, उसीके लिए जा रहा था आज ही अगर तुम यह लिखित करा दो तो मैं रुक जाऊं!"

"नसीर भाई, इतनी जल्दी मत करो। अभी इस लिखित के तो यही माने होते हैं कि अल्लादिया लौटा ही नही!"

"उसकी वापसी के इस ड्रामे मे मैं तुम्हारी पूरी-पूरी मदद कर रहा हूं। मुझे इनकी जायदाद का वारिस बनाकर कागज लिख दिया जाए, सब गांव वालों के दस्तखत हो जायें, उसमे इनका अंगूठा छपवा लिया जाए—किसी बहाने से।"

"भाई, लिखित के लिए सरकारी स्टांप वाला कागज खरीदा जाएगा, किसी वकील की राय ली जाएगी। निशाखातिर रहो, यह सब कुछ हो जाएगा। अभी तो ये अल्लादिया की शादी के चक्कर में हैं। उन्हें वह खुशी पा लेने दो।"

"तुम्हारी घरवाली तो तुमसे दूर ही दूर भागी जा रही है। फिर अल्लादिया की शादी का इन्तजाम क्या है?"

"अब देखो न, अल्लादिया इनका अपने ही पेट से उपजा हुआ बेटा, पिता की हड्डियों को बेचकर जो भी रुपया मिला, उसके गुलछर्रे उड़ाने न जाने कहां चला गया, और मुझे हर तरह का झूठ बोलकर अम्मा के घाव भरने पड़े।"

"लेकिन मेरे सवाल का जवाब क्या है?"

"वही तो मैं कहता हूं, जब तुमने मुझे अल्लादिया बन जाने में मदद दी है, तो ये जो मेरी घरवाली है, ये क्या अल्लादिया की बहू बनकर मेरी मदद न कर देंगी? भाई, सारा खेल मन ही का तो है!"

"ये राजी हो जावेंगी?"

"इन्हें होना ही चाहिए। और बराती बन जाने के लिए मैं गांव वालों को राजी कर लेता ‖। खुदा ने तुम्हे भेज ही दिया है। अम्मा को भी राजी कर लेते हैं कि फालतू खर्च कुछ नही करना है!"

इतने मे किसनी दो चाय के गिलास लिए आती दिखाई दी। बाला ने बड़े सतोष की सांस ली, पर जब वह दूरी पर ही ठिठककर खड़ी रह गई तो बाला उसके हाथ से गिलास लेने को उठा।

बाला के उठते ही वह झट से बैठ गई, उसने गिलास जमीन पर रख दिए और खुद भीतर जाने लगी।

नसीर उस फली-फूली, हरी-भरी जमीन-जायदाद की आशा मे अपने को बहुत कुछ बाला को सौंपकर उसका अपना हो चुका था, फिर बैठा न

रह सका। उठकर बोला—"भाभीजी, कहां भाग रही हो? मैं इतनी दूर का होकर बाला भाई का इतना अपना हो चुका हूं, और आप इनकी इतनी अपनी होकर कहां जा रही हो? सुनो तो सही!"

उनकी मीठी वाणी सुनकर किसनी खड़ी तो हो गई, पर उसने मुंह उस तरफ नहीं किया।

बाला ने भूमि पर से चाय के गिलास उठाते हुए कहा—"देखो, ये राजी हो गए है, बराती बन जाने के लिए; अब सिर्फ तुम्हारे हां करने की देरी है।"

किसनी जरा-सा घूंघट नीचा कर उनकी तरफ मुंह कर खड़ी हो गई। ऐसा जान पड़ा, वह भी राजी हो जाएगी।

नसीर बोला—"शादी ठहरी-ठहराई है, हुई-हुवाई है! मेरी समझ में, कल ही हो जाए। क्योंकि फिर मुझे भी जरूरी काम से जाना है।"

बाला ने किसनी की ओर संकेत कर कहा—"क्यों किसनी, तुम्हारी क्या राय है?"

नाक-भौं सिकोड़कर किसनी ने कहा—"मैं कहीं जाने वाली नहीं हूं!"

"जाने को कौन कह रहा है? तुम्हारा ही घर रानीबाग के खानसामा का घर मान लिया जाएगा।"

"मैं डोली में नहीं चढ़ूंगी!"

"डोली यहां कहीं मिल भी नहीं सकेगी। तुम्हें एक कुरसी में बैठाकर अम्मा के सामने कर दिया जाएगा और जिस तरह उन्हें कुरसी में डोली जता दी जाएगी, ऐसे ही किसनी में क्या नाम है उसका?" बाला ने नसीर की तरफ देखा।

नसीर झट से बोल उठा—"मुझे भी नहीं मालूम!"

किसनी हंसती हुई बोली—"लेकिन मुझे कोई छूने नहीं पावेगा!"

"पर अम्मा को हाथ पकड़कर राह तो दिखाती रहोगी?"

"वह तो मेरे नियम-धर्म में ही शामिल हो गया है!"

"तो शादी कल ही कर दी जाए—ऐसा जाकर कह दो खाला से; क्योंकि फिर मुझे जल्दी ही नैनीताल पहुंच जाना है।"

बाला इसपर सहमत हो गया, बोला—"अच्छा, चलकर मैं अम्मा

को राजी कर लेता हूं। तुम मेरे बाद आना !"

बाला ने हमीदा के पास जाकर कहा—"अम्मा, मैं रानीबाग मे शादी तय कर आया हूं—वह बात अधूरी ही रह गई।"

"वे राजी हो गए ?"

"हा, मैंने उन्हे राजी कर लिया; और कल ही की तारीख तय कर आया।"

"क्यो, इतनी जल्दी कैसे हो जाएगा ? बहू के लिए कुछ जेवर-कपड़े, और अल्लादिया के लिए भी तो !"

"नसीर को जल्दी ही जाना है। उन्होंने भी इतनी जल्दी मचाने की जरूरत नही बताई, पर मैंने उन्हे राजी कर लिया।"

हमीदा बोली—"क्यों, तुमने क्यों ऐसी जल्दी मचाई ?"

"अच्छे काम में देर नही लगानी चाहिए। कल कौन जाने क्या हो जाए ! उनका मन बदल जाए या अल्लादिया ही कुछ दूसरी बात करने लगे।" कहते हुए उसने नसीर को उधर चले जाने का इशारा किया।

"वह सामने से कौन चला आ रहा है ?" हमीदा ने उधर उगली से दिखाया।

बाला ने घबराकर पूछा—"क्यों अम्मा, क्या कुछ देखने लगी हो ?"

"नही बेटा, ऐसी तकदीर कहां ! जब से आखों की रोशनी चली गई, कानों से कुछ ज्यादा सुनाई देने लगा है।"

इतने ही में अपने नये जूते खट-खट करता नसीर आ पहुचा—"अम्मा, मैं बड़ी देर तक ऊपर बैठा रहा—अल्लादिया के इतजार मे, वह अभी तक नही लौटा।"

"आ जाएगा, उसकी क्या फिकर है ! मैं उसकी शादी ठहरा आया, कल ही की तारीख मे।"

हमीदा कहने लगी—"अब मैं कहती हू, इतनी जल्दी मे किसे बुला सकूगी, और इन्तजाम ही क्या हो सकेगा ?"

"सादगी इस जमाने का सबसे बडा धरम है। असली मतलब घर मे तुम्हारी मदद के लिए बहू का आ जाना जरूरी है। और सब कुछ शादी मे दिखावा ही दिखावा है। वह जितना भी कम हो, उतना ही अच्छा है।"

नसीर ने कहा।

बाला बोला—"यह नसीर आ ही गया। तीन-चार आदमी गांव से चले चलेंगे। कुछ बड़े मियां के साथी और दोस्त नैनीताल से आ जायेंगे। बस का झमेला भी क्या करना है—थोड़ी ही दूर है। नौशे के लिए घोड़ा आ जाएगा। और सब पैदल चले चलेंगे।"

हमीदा बोली—"तो घर में क्या कोई सजावट नहीं होगी? बाजा नहीं बजेगा? रोशनी?"

"कुछ कागज की झंडियां मकान के चारों ओर बांध दी जाएंगी। बिजली तो अभी यहां आई नहीं। दो-चार दिये जला देंगे रात को। फिर रात की बात ही क्या है, दिन में ही बरात ले आयेंगे। प्रधानजी से उनका ग्रामोफोन मांग लायेंगे।

हमीदा बहुत निराशा के स्वर में बोली—"लेकिन बहू के लिए कुछ कपड़े और जेवर तो होने ही चाहिए।"

बाला ने जवाब दिया—"यह कोई बात नहीं। किसनी के नये कपड़े और उसके जेवरों से अभी काम चल जाएगा। फिर बाद में सब कुछ बन जाएगा!"

× × × ×

दूसरे दिन सभी रस्में पूरी कर, सभी दिखावों पर परदे डालकर बरात का नाटक चला अल्लादिया के घर से। जब वह बरात बाला के घर के पास पहुंची, तभी एक युवक फटे हाल, हारा-थका उधर से आता हुआ दिखाई दिया।

उसने एक से पूछा—"यह बिना बाजे की बरात किधर जा रही है? लाल-पीली झंडियां तो मेरे घर में बंधी दिखाई दे रही हैं। किसकी बरात है?"

उसने जवाब दिया—"अल्लादिया की।"

चौंककर उसने पूछा—"कौन अल्लादिया?"

"अब्दुल्ला खानसामा का बेटा, और कौन?"

उसने अपने फटे हुए कुरते में एक चीरा और लगाकर अपने माथे पर हाथ मारा और फिर खुद अपने ही से पूछा—"क्यों रे, फिर तू कौन है?"

यह गुस्से में भरकर दुल्हे के घोड़े के पास दौड़ा। उसने दुल्हे का हाथ पकड़ उसे झकझोरकर नीचे उतारा और उसके मुंह पर पड़ा सेहरा नोचते हुए बोला—"क्यों रे, तू कब से बना अल्लादिया ?"

बाला ने झट उसे गले से लगा लिया—"भैया अल्लादिया, जब से तू बिना कहे-सुने यहां से गायब हो गया। न तो तू कुछ लिखकर ही छोड़ गया, न तूने कभी कोई चिट्ठी ही भेजी। तेरे दुख में तेरी मां ने रात-दिन रोते-रोते एक कर दिए और वह अंधी हो गई, तो मुझे मजबूर होकर उसका दुख दूर करने के लिए तुम्हारा रूप रखना पड़ा। और तुम्हारी यह कैसी हालत देख रहा हूं ? मैले-फटे कपड़े, दाढ़ी-बाल बढ़े, शकल मानो लम्बी बीमारी से उठे हो। क्या हो गया तुम्हें यह ?"

"यह बहुत लम्बी कहानी है। मैं जरा अपना दिल-दिमाग सभालूं, आराम करूं, तभी तो ठीक-ठीक कह सकूंगा।"

"किसनी, अल्लादिया के आ जाने से हमारे सिर का बोझ उतर गया। अब तू इनके नहाने-धोने को पानी गरम कर, फिर भोजन बना !"

किसनी इस धंधे में जुट गई।

अल्लादिया को एकाएक विचार आया—"मैं पहले अम्मा के पास जाता हूं।"

बाला ने उसे रोक लिया—"नहीं, अम्मा अपनी बहू के आने की आशा में बैठी हैं, तुम उनके सामने यह दूसरी कहानी लेकर जाओगे तो बहुत मुमकिन है, उनका हार्ट फेल हो जाए।"

अल्लादिया बड़े अफसोस के साथ बोला—"या खुदा, मैं वहां भी लुट गया और यहां भी।"

"यहां किसने लूटा तुम्हें ?"

"अरे तुमने ! तुमने मेरी अम्मा को तो उसका बेटा दे दिया, पर मेरी अम्मा को क्या तुमने नहीं लूट लिया ?"

"जरा सब्र करो, मैं तुम्हारी अम्मा भी तुम्हें लौटा दूंगा, और उन्हें उनका बेटा ही नहीं, उनकी बहू के साथ।" बाला ने दूल्हे का वेश उतारते हुए कहा—"अल्लादिया, तुम बहुत बुरे वखत में गये थे, और बहुत बढ़िया वखत में आये हो। रानीबाग के खानसामा की लड़की से अब्बा तुम्हारी शादी

ठहरा गए थे। वह बराबर लोगों से तुम्हारा पता ढूंढ़ रहा है। जब मिलता है तब तुम्हारे आने की बात पूछता रहता है। लो, तुम नहा-धोकर ये शादी के कपड़े पहनो। मैं बड़े भाई की हैसियत से तुम्हारे सिर पर सेहरा बांधता हूं। चलो, अभी तक, जो एक बरात का नाटक होने जा रहा था, उसे एक सचाई में बदल दें।"

प्रधानजी बोले—"बिना लड़की वालों से कुछ कहे-सुने एकदम उनके दरवाजे पर बरात लेकर पहुंच जाना कहां तक ठीक है? उन्हें तैयारी के लिए समय तो देना ही चाहिए!"

बाला बोला—"वे पिछले साल-भर से तैयारी किये बैठे हैं। फिर भी हम इधर बस-स्टेशन से एक आदमी को भेजकर उन्हें यह खबर कर देते हैं कि शाम तक वहां बरात पहुंच जाएगी। अल्लादिया भाई आ पहुंचे हैं।"

नसीर बोला—"फिर इन्तजाम ही क्या करना है। आप दो-चार लोग जो भी चलेंगे, वे तो सिर्फ भीड़ बनाने के लिए हैं। असली बराती तो सिर्फ एक मैं ही रहा।"

उसी रात को अल्लादिया की बरात रानीबाग गई। बड़ी सादगी से उसकी शादी हो गई। वह शादी कर बहू को अपने घर ले आया।

हमीदा की खुशी का पारावार न था। वह बोली—"बेटा, अब तेरी आवाज भी खुल गई। काश, ऐसे ही मेरी नजर भी खुल जाती।"

नसीर बोला—"खाला, भैया की शादी में जो रुपयों की बचत की गई है; उससे अब हम तुम्हारी आंखों का इलाज करायेंगे।"